स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

मई, 2021
I.S.S.N. : 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

प्रधान संपादक

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय

संपादक

श्री कमला कान्त
श्री अविनाश शुक्ला
श्री असलम खान

सहायक संपादक

श्री पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक

श्री महीपाल सिंह
श्री जसवन्त सिंह

ISSN-2457-0478

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 125/-

वार्षिक : ₹ 1,300/-

© 2021 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

मई, 2021 अंक - 5

प्रधान संपादक
डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय
संपादक
असलम खान

(2021) 1 सि. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on
Website ➡ https://bharatkosh.gov.in/product/product

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001.
दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

अन्याय के विरुद्ध आवाज बुलंद करना प्रत्येक नागरिक का अधिकार है परन्तु इस अधिकार का प्रयोग करने से पूर्व यह ध्यान रखना होगा कि प्रत्येक नागरिक विधि द्वारा अधिरोपित सीमाओं से बंधा होता है जिनके परे जाने पर अन्याय के विरुद्ध किया जाने वाला कार्य स्वयं अन्याय में परिवर्तित हो जाता है । कभी अन्याय समाज के प्रति तो कभी किसी व्यक्ति विशेष के प्रति होता दिखाई देता है । अन्याय का विस्तार कितना भी हो, यदि इसके विरुद्ध आवाज किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा उठाई जाती है जिसे कानून का ज्ञान है तो एक अन्याय को समाप्त करने के लिए दूसरा अन्याय कारित नहीं होगा । इसके लिए एक वकील अर्थात् अधिवक्ता सबसे सटीक व्यक्ति है जो न केवल किसी व्यक्ति के अधिकारों की रक्षा के लिए विधिवत् रूप से न्यायालयों का दरवाजा खटखटा सकता है अपितु पूरे समाज को भी कठिनाइयों और दुविधाओं से सुरक्षित रख सकता है । हमारे देश में अधिवक्ताओं का सृजन और गठन अधिवक्ता अधिनियम, 1961 द्वारा किया गया है । अधिवक्ता व्यवसायी होने के साथ-साथ न्यायालयों के अधिकारी भी होते हैं और न्याय-प्रशासन में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है । अधिवक्ता के आचरण को नियंत्रित करने वाले नियम, अदालत, मुवक्किल और विरोधी पक्षकारों की गरिमा को ध्यान में रखते हुए बनाए गए हैं । व्यवसायी मानकों पर इन नियमों का उल्लेख, जिनका अनुपालन एक अधिवक्ता को करना चाहिए, बार कौंसिल ऑफ इंडिया के नियमों के अध्याय II, भाग VI में किया गया है । ये नियम अधिवक्ता अधिनियम, 1961 की धारा 49(1)(ग) के अन्तर्गत विरचित किए गए हैं । इन्हीं नियमों का अवलंब लेते हुए अपने मामले की प्रस्तुति के दौरान न्यायालय के समक्ष अधिवक्ता को गरिमापूर्ण तरीके से कार्य करना चाहिए । उसे सदैव स्वाभिमान के साथ अपना कर्तव्य निभाना चाहिए और न्यायालय के प्रति सम्मान भी दिखाना चाहिए । उसे यह ध्यान रखना होगा कि एक स्वतंत्र समाज के अस्तित्व के लिए न्यायिक कार्यालयों के प्रति गरिमा और सम्मान बनाए रखना आवश्यक है ।

अधिवक्ता को निजी तौर पर अकेले में अपने किसी ऐसे मामले के संबंध में न्यायाधीश से वार्तालाप नहीं करनी चाहिए जो उसी न्यायाधीश के या अन्य किसी न्यायाधीश के समक्ष लंबित है । एक अधिवक्ता को किसी भी मामले में अवैध या अनुचित साधनों जैसे अनुचित बल और रिश्वत आदि का उपयोग करके न्यायालय के निर्णय को प्रभावित नहीं करना चाहिए । एक अधिवक्ता को विरोधी पक्ष के अधिवक्ता या विरोधी पक्षों के प्रति अवैध या अनुचित तरीके से कार्य करने से मना करना चाहिए । उसे ऐसे मुवक्किल का प्रतिनिधित्व नहीं करना चाहिए जो अनुचित साधनों का उपयोग करने पर जोर देता है । उसे अपने मुवक्किल के निर्देशों का आंखें बंद करके पालन नहीं करना चाहिए और उसे न्यायालय में बहस के दौरान ऐसी भाषा का प्रयोग करना चाहिए जिससे विरोधी पक्षकारों की प्रतिष्ठा प्रभावित न हो और असंसदीय भाषा के प्रयोग से न्यायालय की मानहानि भी न हो । अंत में यह भी कहा जा सकता है कि अधिवक्ता को बार कौंसिल ऑफ इंडिया के नियमों के अनुसार हर समय निर्धारित पोशाक में ही न्यायालय में उपस्थित होना चाहिए । अधिवक्ता द्वारा इन सभी बातों का अनुपालन किया जाना न्याय-प्रशासन के हित में होगा ।

इस अंक में ग्राम न्यायालय अधिनियम, 2008 के अतिरिक्त अन्य ज्ञानवर्धक सामग्री भी है जिसका आप परिशीलन करें और अपने अमूल्य सुझावों से अवगत कराएं । इस अंक में सामाजिक कई महत्वपूर्ण मुद्दों पर प्रकाश डाला गया है । यह अंक विधि-विद्यार्थियों, वकीलों, न्यायाधीशों, विधि-अध्यापकों तथा विधि के ज्ञान में रुचि रखने वाले पाठकों के लिए पर्याप्त रूप से लाभकारी है ।

असलम खान
संपादक

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

मई, 2021

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
अंजना गुप्ता नी सेनगुप्ता **बनाम** तपन चन्द्र गुप्ता	586
के. कुमारकृष्णन और अन्य **बनाम** टी. पी. पदमाजा	692
जगजीत सिंह कोहली **बनाम** पश्चिमी बंगाल राज्य	577
जूली (श्रीमती) (मृतका) द्वारा विधिक प्रतिनिधि और अन्य **बनाम** पतरू और अन्य	596
डेली सुबह कश्मीर **बनाम** जम्मू-कश्मीर संघ राज्यक्षेत्र	619
मलकीत सिंह और एक अन्य **बनाम** कोमल शर्मा	662
मेघा सूद **बनाम** अमित सूद	683
वाई. जे. शब्बीर **बनाम** जी. थिरूवातास्वरार फ्री हाई स्कूल ट्रस्ट	713
सुखविन्दर राम **बनाम** भारत संघ और अन्य	671
सेन्थन प्रोपर्टीज (मैसर्स) **बनाम** मैसर्स एस. वी. एस. इन्फ्रा सर्विसेज प्राइवेट लिमिटेड	629
स्वप्न सिन्हा **बनाम** बिमल सिन्हा	640

संसद् के अधिनियम

ग्राम न्यायालय अधिनियम, 2008 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1 – 20

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

पासपोर्ट अधिनियम, 1967 (1967 का 15)

– धारा 6 – पासपोर्ट पुनः जारी किए जाने का आवेदन – याची के विरुद्ध प्रथम इत्तिला रिपोर्ट का लंबित पाया जाना – याची द्वारा पासपोर्ट आवेदन वापस लिए जाने के बाद पुनः नए सिरे से आवेदन किया जाना – तत्पश्चात् द्वितीय आवेदन के लंबित रहते हुए याचिका फाइल किया जाना – याची ने न्यायालय के समक्ष यह तथ्य छिपाया है कि एक बार पासपोर्ट आवेदन खारिज होने के पश्चात् उसने दूसरी बार नए सिरे से आवेदन फाइल किया है जिसके लंबित रहने के दौरान याचिका फाइल की गई है, अतः याची ने सत्य और पूर्ण तथ्यों का उल्लेख नहीं किया है, इसलिए याची के पक्ष में उत्प्रेषण रिट जारी नहीं की जा सकती ।

सुखविन्दर राम बनाम **भारत संघ और अन्य** 671

भारतीय स्टांप अधिनियम, 1899 (1899 का 2)

– धारा 38(2) और धारा 40 – लिखत पर स्टांप शुल्क का अपर्याप्त पाया जाना – मध्यस्थ द्वारा दस्तावेज का परिबद्ध किया जाना – आक्षेप – कलक्टर द्वारा स्टांप शुल्क का आंकलन करने पर यदि स्टांप शुल्क में कमी पाई जाती है तो मध्यस्थ दस्तावेजों को अपने पास परिबद्ध कर कलक्टर के पास भेज सकता है और कलक्टर स्टांप शुल्क में कमी वाले भाग पर शास्ति भी वसूल कर सकता है जो 10 गुना से अधिक नहीं होगी ।

जगजीत सिंह कोहली बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य** 577

पृष्ठ संख्या

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 (1963 का 47)

– धारा 22 [सपठित संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 55(1)(क)] – अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विक्रय करार – प्रत्यर्थी द्वारा अग्रिम राशि का संदाय किया जाना – अपीलार्थी का संपत्ति पर हक न पाया जाना – प्रत्यर्थी द्वारा अग्रिम धन का प्रतिदाय किए जाने की मांग किया जाना – यदि विक्रेता अपने संपत्ति पर के हक में किसी ऐसी तात्विक त्रुटि को प्रकट नहीं करता है जिसे वह तो जानता है किन्तु क्रेता मामूली सावधानी से उसका पता नहीं लगा सकता, तब ऐसे प्रकटीकरण का लोप कपटपूर्ण समझा जाएगा, अतः अपीलार्थी उक्त राशि का प्रतिदाय करने का जिम्मेदार है और निचले दोनों न्यायालयों के निर्णयों में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

मलकीत सिंह और एक अन्य बनाम **कोमल शर्मा** 662

– धारा 34 – हक की घोषणा का वाद – विवाहित पुत्री (अपीलार्थी/वादी) द्वारा अपने मृतक पिता की संपत्ति में हिस्सा पाने का दावा किया जाना – प्रतिवादी द्वारा यह अभिवाक् किया जाना कि उनकी जाति में विवाहित पुत्री को विरासत में हिस्सा नहीं दिया जाता – प्रथा साबित करने का भार प्रतिवादी पर – प्रतिवादी द्वारा साक्ष्य के माध्यम से यह साबित नहीं किया गया है कि अपीलार्थी/वादी की जनजाति में विवाहित पुत्री को उनकी प्रथानुसार विरासत में हिस्सा नहीं दिया जाता है, अतः निचले दोनों न्यायालयों के निर्णय न्यायोचित नहीं

पृष्ठ संख्या

हैं और वादी अपने पिता की संपत्ति में एक चौथाई भाग पाने की हकदार है ।

जूली (श्रीमती) (मृतका) द्वारा विधिक प्रतिनिधि और अन्य बनाम **पतरू और अन्य** 596

संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 (1890 का 8)

– धारा 7, 10, 12 और 25 [सपठित हिन्दू अप्राप्तवय और संरक्षकता अधिनियम, 1956 की धारा 32] – माता द्वारा बच्चों की अंतरिम अभिरक्षा की मांग – विचारण न्यायालय द्वारा आवेदन खारिज किया जाना – विचारण न्यायालय के अंतरिम आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण आवेदन – आवेदक माता अर्थात् अर्जीदार साधन संपन्न हैं और उसने 10 वर्ष तक अध्यापिका के रूप में कार्य किया है जिसके पास अवश्य ही धनराशि होगी जिसका उपयोग बच्चों की देखरेख में किया जा सकता है और दोनों बच्चों को एक-दूसरे से अलग भी नहीं किया जा सकता, अत: विचारण न्यायालय का अभिरक्षा संबंधी अंतरिम आदेश न्यायोचित नहीं है ।

मेघा सूद बनाम **अमित सूद** 683

संविधान, 1950

– अनुच्छेद 226 – अन्तरिम अनुतोष – वाद संपत्ति के शांतिपूर्ण कब्जे और अधिभोग में हस्तक्षेप करने से रोकने हेतु याची का अभिवाक् – अवैध कब्जे को लेकर याची के विरुद्ध प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करना – याची का वाद संपत्ति पर विधिक अधिभोग साबित

पृष्ठ संख्या

करने में असफल रहना – याची वाद संपत्ति पर अपने कब्जे और अधिभोग को साबित करने में असफल रहा है और उसने अपने अवैध कब्जे को वैध बनाने के आशय से मुकदमेबाजी का सहारा लिया है, अतः निचले न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

डेली सुबह कश्मीर बनाम **जम्मू-कश्मीर संघ राज्यक्षेत्र** 619

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

– आदेश 3, नियम 1 – मान्यताप्राप्त अभिकर्ता या प्लीडर की नियुक्ति – किराएदार द्वारा अपने भाई को विशेष मुख्तारनामे के आधार पर मुख्तार-अभिकर्ता नियुक्त कराने संबंधी अंतर्वर्ती आवेदन फाइल किया जाना – आवेदक के भाई का व्यवसाय में भागीदार पाया जाना – प्रत्यर्थी/वादी के साथ चल रहे मूल वाद के तथ्यों से भी भाई का अवगत होना पाया जाना – मुख्तार-अभिकर्ता, आवेदक/प्रतिवादी का भाई है और व्यवसाय में भागीदार भी है इसलिए वह साक्ष्य देने के लिए निचले न्यायालय में पेश हो सकता है और अन्यथा भी वाद 3 वर्ष से विलंबित है इसलिए अंतर्वर्ती आवेदन खारिज करने वाला निचले न्यायालय का निर्णय अपास्त किए जाने योग्य है और मुख्तार-अभिकर्ता के रूप में आवेदक के भाई की नियुक्ति न्यायोचित है ।

वाई. जे. शब्बीर बनाम **जी. थिरूवातास्वरार फ्री हाई स्कूल ट्रस्ट** 713

– आदेश 39, नियम 1 और 2क [सपठित संविधान, 1950 का अनुच्छेद 227] – निचले न्यायालय

पृष्ठ संख्या

द्वारा पुलिस सहायता उपलब्ध कराने की मंजूरी – जब तक अंतरिम व्यादेश अंतिम नहीं हो जाता तब तक न्यायालय पुलिस सहायता प्रदान नहीं कर सकता क्योंकि जिस पक्षकार के पक्ष में अनंतरिम आदेश मंजूर किया गया है, वह परिस्थिति का अनुचित लाभ ले सकता है और अन्य पक्षकार को असम्यक् हानि पहुंचा सकता है, अतः पुलिस सहायता उपलब्ध कराने संबंधी निचले न्यायालय का निर्णय न्यायोचित नहीं है ।

सेन्थन प्रोपर्टीज (मैसर्स) बनाम **मैसर्स एस. वी. एस. इन्फ्रा सर्विसेज प्राइवेट लिमिटेड** 629

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 (1956 का 30)

– धारा 2(2) – अधिनियम का लागू होना – विवाहित पुत्री द्वारा अपने पिता की संपत्ति में हिस्सा पाने का दावा किया जाना – अपीलार्थियों का अनुसूचित जनजाति का होना – अपीलार्थी संविधान के अनुच्छेद 366(25) के अंतर्गत उरांव नामक अनुसूचित जनजाति के सदस्य हैं और केंद्र सरकार ने इससे अन्यथा के लिए या हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के उपबंध उन पर लागू किए जाने के लिए कोई अधिसूचना भी जारी नहीं की है, अतः अपीलार्थी को उक्त अधिनियम लागू नहीं होगा ।

जूली (श्रीमती) (मृतका) द्वारा विधिक प्रतिनिधि और अन्य बनाम **पतरू और अन्य** 596

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25)

– धारा 13(1) – विवाह-विच्छेद – पत्नी द्वारा क्रूरता और अभित्यजन किया जाना – पत्नी का स्वेच्छया

पृष्ठ संख्या

वैवाहिक गृह छोड़कर जाना – पति द्वारा विवाह-विच्छेद की कार्यवाही आरंभ किए जाने के पश्चात् पत्नी द्वारा दंड संहिता की धारा 498क के अधीन शिकायत दर्ज किया जाना – अपीलार्थी पत्नी स्वयं अपना सामान लेकर वैवाहिक गृह छोड़कर गई है, अतः यह नहीं कहा जा सकता है कि उसे पति द्वारा घर से निकाला गया है और साथ ही पत्नी ने यह तथ्य छिपाया है कि उसका एक फेफड़ा विवाह पूर्व शल्य-चिकित्सा के दौरान काटकर निकाल दिया गया था और उसने विवाह-विच्छेद के वाद का बचाव करने के लिए धारा 498क के अधीन शिकायत दर्ज कराई है, अतः पत्नी द्वारा पति के प्रति क्रूरता और अभित्यजन साबित नहीं होता है इसलिए विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए विवाह-विच्छेद के निर्णय और डिग्री में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

अंजना गुप्ता नी सेनगुप्ता बनाम **तपन चन्द्र गुप्ता** 586

– धारा 13(1)(i-क) और (i-ख) [सपठित कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 19] – विवाह-विच्छेद – क्रूरता और अभित्यजन – पति और उसकी माता के साथ पत्नी द्वारा क्रूरता कारित किए जाने का आरोप – पति द्वारा लगाए गए आरोपों का तुच्छ पाया जाना – पति-पत्नी के बीच 24 वर्ष तक वैवाहिक संबंधों का बने रहना – पति-पत्नी के बीच भ्रान्ति का पाया जाना – पति-पत्नी के बीच वैवाहिक संबंध 24 वर्ष से बने हुए हैं और इस दौरान उन्होंने अपने बच्चों का उनके वयस्क होने तक पालन-पोषण किया है और वे निरंतर एक-दूसरे की कमियों को माफ करते रहे हैं तथा उनके

पृष्ठ संख्या

बीच विवाद घरेलू नोंक-झोंक से अधिक नहीं पाया गया है, अत: निचले न्यायालय का न्यायिक पृथक्करण के समर्थन में दिया गया निर्णय अपास्त किए जाने योग्य है ।

स्वप्न सिन्हा बनाम **बिमल सिन्हा** 640

– धारा 13(1)(i-क) – विवाह-विच्छेद – पति द्वारा आरोप लगाया जाना कि कुटुंब पंचायत में उसका अपमान किया गया है – यह भी आरोप लगाया जाना कि पत्नी अपने मायके में रहती है – पति की माता का गठिया रोग से ग्रसित होने के कारण जच्चा-बच्चा की देखरेख में अक्षम पाया जाना – पत्नी का उस समय मायके में रहना जब पति अमेरिका गया हुआ था – पति द्वारा पत्नी के विरुद्ध किए गए अभिकथन तुच्छ प्रकृति के हैं और कुटुंब पंचायत में पति ने पत्नी के विरुद्ध साक्ष्य प्रस्तुत करने के बजाय पत्नी से साक्ष्य प्रस्तुत करने को कहा और इसके अतिरिक्त अपीलार्थी की माता गठिया की रोगी थी जिस कारण वह प्रत्यर्थी या अप्राप्तवय शिशु की देखरेख नहीं कर सकती थी और उसी दौरान पति अमेरिका चला गया था, अत: विवश होकर पत्नी का अपने मायके में रहना पति के विरुद्ध क्रूरता की कोटि में नहीं आता है ।

के. कुमारकृष्णन और अन्य बनाम **टी. पी. पदमाजा** 692

– धारा 13(1)(i-ख) – अभित्यजन के आधार पर पति द्वारा विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल किया जाना – पति द्वारा अभिवाक् किया जाना कि पत्नी पुण्यदानम

पृष्ठ संख्या

समारोह में सम्मिलित नहीं हुई – पत्नी पर अपीलार्थी का मानभंग किए जाने का आरोप – प्रत्यर्थी-पत्नी को अपीलार्थी-पति के यहां यात्रा करना इसलिए संभव नहीं था कि प्रत्यर्थी-पत्नी का सिजेरियन आपरेशन हुआ था और पत्नी को किराए का मकान इसलिए छोड़ना पड़ा कि समनुदेशन/करार की अवधि समाप्त हो रही थी और नवजात शिशु को लेकर उसे अपने माता-पिता के यहां रहना था जिसे स्वयं अपीलार्थी के पिता द्वारा गृहस्थी के सामान के साथ स्थानांतरित करने की व्यवस्था की गई थी, अत: पति के विरुद्ध पत्नी द्वारा क्रूरता कारित किए जाने का कोई आधार नहीं है और निचले न्यायालय का निर्णय न्यायोचित है ।

के. कुमारकृष्णन और अन्य बनाम **टी. पी. पदमाजा** 692

जगजीत सिंह कोहली

बनाम

पश्चिमी बंगाल राज्य

(2018 की मूल रिट याचिका सं. 108 और 109)

तारीख 9 फरवरी, 2021

न्यायमूर्ति साबयाची भट्टाचार्या

भारतीय स्टांप अधिनियम, 1899 (1899 का 2) – धारा 38(2) और धारा 40 – लिखत पर स्टांप शुल्क का अपर्याप्त पाया जाना – मध्यस्थ द्वारा दस्तावेज का परिबद्ध किया जाना – आक्षेप – कलक्टर द्वारा स्टांप शुल्क का आंकलन करने पर यदि स्टांप शुल्क में कमी पाई जाती है तो मध्यस्थ दस्तावेजों को अपने पास परिबद्ध कर कलक्टर के पास भेज सकता है और कलक्टर स्टांप शुल्क में कमी वाले भाग पर शास्ति भी वसूल कर सकता है जो 10 गुना से अधिक नहीं होगी ।

एक ही याची ने दो रिट आवेदनों में दो करारों में हुए शास्ति के उस निर्धारण को चुनौती दी है जो याची और मैसर्स चेतकी प्रोपर्टीज प्राइवेट लिमिटेड (2020 के डब्ल्यू. पी. ओ. नंबर 108) तथा याची और आकलैंड प्रोपर्टीज प्राइवेट लिमिटेड (2018 के डब्ल्यू. पी. ओ. नंबर 109) के मध्य स्टांप राजस्व कलक्टर, कोलकाता के द्वारा किया गया है । उक्त लिखत के माध्यस्थम् खंड के अनुसरण में मामले को एक मध्यस्थ के पास भेजा गया था । दस्तावेजों को मध्यस्थ के सामने पेश किया गया जिसने दस्तावेजों को अपने पास परिबद्ध कर लिया और उसे कलक्टर के पास स्टांप शुल्क के निर्धारण के लिए भेज दिया । कलक्टर ने स्टांप शुल्क का निर्धारण किया और भारतीय स्टांप अधिनियम की धारा 35 के अनुसार अधिकतम उद्गृहीत राशि से काफी कम दर पर

शास्ति अधिरोपित की जो कि मुद्रांक शुल्क का दस गुना है । दस्तावेजों में याची और मैसर्स चेतकी प्रोपर्टीज प्राइवेट लिमिटेड पर स्टांप शुल्क 23,69,640/- रुपए और 1,30,360/- रुपए शास्ति निर्धारित की गई । याची और आकलैंड प्रोपर्टीज प्राइवेट लिमिटेड के मध्य हुए करार पर स्टांप शुल्क 32,81,040/- रुपए और 2,18,960/- रुपए की शास्ति अधिरोपित की गई थी । याची उक्त माध्यस्थम् कार्यवाही का एक पक्ष है और स्टांप अधिनियम की धारा 35 के अधीन अनुज्ञेय अधिकतम राशि से कम पर शास्ति अधिरोपित करने के निर्णय को आक्षेपित करता है । याची की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने प्रतिवाद किया कि मध्यस्थ ने करार को परिबद्ध करके स्टांप शुल्क निर्धारण के लिए कलक्टर को भेज दिया । कलक्टर धारा 35 के उपबंध (क) के अधीन शास्ति के लिए दी गई राशि के दस गुना शास्ति अधिरोपित करने के लिए बाध्य है । यह प्रतिवाद किया गया कि यह स्टांप अधिनियम की धारा 38 के संदर्भ में नहीं था । इस प्रकार कलक्टर को अधिनियम की धारा 40(ख) के अधीन इसकी स्वतंत्रता प्रदान नहीं की गई है कि वह विधि में उपबंधित अधिकतम रकम से कम पर शास्ति अधिरोपित कर सके । याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – मध्यस्थ द्वारा दिए गए इन आदेशों से, कि प्रश्नगत करार परिबद्ध किए जाने हेतु उसके पास भेजे जाएं और लिखतें कलक्टर के पास भेजी जाएं, यह स्पष्ट होता है कि मध्यस्थ ने इन दस्तावेजों को स्वयं परिबद्ध किया है और उनकी मूल प्रतियां स्टांप शुल्क के निर्धारण हेतु कलक्टर को भेजी हैं और ऐसा स्टांप अधिनियम की धारा 38(2) के अधीन किया गया है । धारा 40 स्पष्ट रूप से यह उपबंध करता है कि जब कलक्टर धारा 33 के अधीन किसी लिखत को परिबद्ध करता है या धारा 38(2) के अधीन उसे भेजी गई कोई लिखत प्राप्त करता है तो कलक्टर से यह अपेक्षा की जाएगी कि वह कुल शुल्क की वसूली करेगा और साथ ही शास्ति भी वसूल करेगा जो कुल शुल्क के 10 गुना अथवा शुल्क में कमी वाले भाग के 10 गुना से अधिक नहीं होगी । (पैरा 16 और 17)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2019] (2019) 3 एस. सी. सी. 788 = ए. आई. आर. 2019 एस. सी. 19 : **गंगप्पा और एक अन्य** बनाम **फक्किरप्पा** ; 4

[2002] (2002) 10 एस. सी. सी. 427 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2000 एस. सी. 647 : **पीटेटी सुब्बाराव** बनाम **अनुमाला एस. नरेन्द्र** ; 9

[2001] (2001) 4 एस. सी. सी. 734 = ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 1739 : **विनोय कुमार** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** । 10

सिविल रिट अधिकारिता : 2018 की मूल रिट याचिका सं. 108 और 109.

स्टांप राजस्व कलक्टर, कोलकाता द्वारा पारित शास्ति संबंधी आदेश के विरुद्ध संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से सुश्री सर्वप्रिया मुखर्जी, श्री इमोन भट्टाचार्या और सुश्री पूजा साह

प्रत्यर्थियों की ओर से सुश्री मंजू अग्रवाल, सर्वश्री बजरंग मनोज, संदीप भट्टाचार्या और अनीसा कोचर

आदेश

एक ही याची ने दो रिट आवेदनों में दो करारों में हुए शास्ति के उस निर्धारण को चुनौती दी है जो याची और मैसर्स चेतकी प्रोपर्टीज प्राइवेट लिमिटेड (2020 के डब्ल्यू. पी. ओ. नंबर 108) तथा याची और आकलैंड प्रोपर्टीज प्राइवेट लिमिटेड (2018 के डब्ल्यू. पी. ओ. नंबर 109) के मध्य स्टांप राजस्व कलक्टर, कोलकाता के द्वारा किया गया है । उक्त लिखत के माध्यस्थम् खंड के अनुसरण में मामले को एक मध्यस्थ

के पास भेजा गया था । दस्तावेजों को मध्यस्थ के सामने पेश किया गया जिसने दस्तावेजों को अपने पास परिबद्ध कर लिया और उसे कलक्टर के पास स्टांप शुल्क के निर्धारण के लिए भेज दिया । कलक्टर ने स्टांप शुल्क का निर्धारण किया और भारतीय स्टांप अधिनियम की धारा 35 के अनुसार अधिकतम उद्गृहीत राशि से काफी कम दर पर शास्ति अधिरोपित की जो कि मुद्रांक शुल्क का दस गुना है । दस्तावेजों में याची और मैसर्स चेतकी प्रोपर्टीज प्राइवेट लिमिटेड पर स्टांप शुल्क 23,69,640/- रुपए और 1,30,360/- रुपए शास्ति निर्धारित की गई । याची और आकलैंड प्रोपर्टीज प्राइवेट लिमिटेड के मध्य हुए करार पर स्टांप शुल्क 32,81,040/- रुपए और 2,18,960/- रुपए की शास्ति अधिरोपित की गई थी ।

2. याची उक्त माध्यस्थम् कार्यवाही का एक पक्ष है और स्टांप अधिनियम की धारा 35 के अधीन अनुज्ञेय अधिकतम राशि से कम पर शास्ति अधिरोपित करने के निर्णय को आक्षेपित करता है ।

3. याची की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने प्रतिवाद किया कि मध्यस्थ ने करार को परिबद्ध करके स्टांप शुल्क निर्धारण के लिए कलक्टर को भेज दिया । कलक्टर धारा 35 के उपबंध (क) के अधीन शास्ति के लिए दी गई राशि के दस गुना शास्ति अधिरोपित करने के लिए बाध्य है । यह प्रतिवाद किया गया कि यह स्टांप अधिनियम की धारा 38 के संदर्भ में नहीं था । इस प्रकार कलक्टर को अधिनियम की धारा 40(ख) के अधीन इसकी स्वतंत्रता प्रदान नहीं की गई है कि वह विधि में उपबंधित अधिकतम रकम से कम पर शास्ति अधिरोपित कर सके ।

4. **गंगप्पा और एक अन्य** बनाम **फक्किरप्पा**[1] वाले मामले का अवलंब लेते हुए यह दलील दी गई कि स्टांप अधिनियम की धारा 33 के अधीन शुल्क एकत्रित करने के मामले से इस धारा के परंतुक में अभिव्यक्ति 'सेल' को देखते हुए दस्तावेजों को परिबद्ध करने वाले प्राधिकारी में कोई विवेकाधिकार निहित नहीं है ।

---

[1] (2019) 3 एस. सी. सी. 788 = ए. आई. आर. 2019 एस. सी. 90.

5. दूसरी ओर, प्राइवेट प्रत्यर्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने यह प्रतिवाद किया कि मध्यस्थ के द्वारा कलक्टर को दस्तावेज परिबद्ध करने के बाद निर्देश दिया गया जैसाकि कलक्टर के द्वारा पारित किए गए सुसंगत आदेश से प्रकट हो रहा है जिसे प्राइवेट प्रत्यर्थी के द्वारा फाइल विरोध में दिए गए शपथपत्र के अनुबंध आर 2 में है । मध्यस्थ के तारीख 8 मार्च, 2017 के आदेश में यह विशेष रूप से अभिलिखित किया गया था कि सभी पक्षकारों की सहमति से मूल करार को मध्यस्थ के पास परिबद्ध करने के लिए भेजा जाना था और उसके बाद कलक्टर के पास भारतीय स्टांप अधिनियम की धारा 35 के अनुरूप स्टांपित करने के लिए भेजना था ।

6. इस संबंध में मध्यस्थ के द्वारा तारीख 13 सितंबर, 2017 को की गई संसूचना जो रिट याचिकाओं के साथ संलग्न है, से ऐसा प्रतीत होता है कि मध्यस्थ ने करारों को परिबद्ध करने के पश्चात् ही कलक्टर के पास भेजा था ।

7. विद्वान् काउंसेल का तर्क है कि कलक्टर एक लिखत को परिबद्ध और शास्ति अधिरोपित करने की शक्तियों का प्रयोग स्टांप अधिनियम की धारा 31, धारा 40 या धारा 41 के अधीन ही कर सकता है । यह तर्क दिया गया है कि धारा 40 में उपबंधित है कि धारा 33 के अधीन दस्तावेज परिबद्ध करने के साथ निर्धारण भी स्टांप अधिनियम की धारा 38(2) के निर्देश पर किया जा सकता है ।

8. वर्तमान मामले में मध्यस्थ द्वारा पूर्व में ही दस्तावेजों को परिबद्ध किया जाना और कलक्टर को निर्देश देना स्पष्ट रूप से धारा 38 के अधीन था ।

9. विद्वान् काउंसेल ने **पीटेटी सुब्बाराव** बनाम **अनुमाला एस. नरेन्द्र**[1] वाले मामले को उद्धृत करते हुए यह दलील दी कि भारतीय स्टांप अधिनियम की धारा 35 भारतीय स्टांप अधिनियम के अध्याय-IV के अंतर्गत आती है और विचारण न्यायालय के उस पक्ष को निर्देश देने का अधिकार देती है जो यह चाहता है कि विचारण न्यायालय दस्तावेजों पर

---

[1] (2002) 10 एस. सी. सी. 427 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2000 एस. सी. 647.

कार्यवाही करे तो उसे उचित शुल्क की राशि के दस गुना स्टांप शुल्क का भुगतान करना होगा । यह दस्तावेज को साक्ष्य के रूप में स्वीकृत करने में सक्षम बनाने के उद्देश्य से है । इस स्थिति में उक्त राशि के भुगतान पर ही दस्तावेज को स्वीकृत किया जाएगा । ऐसे मामले में जहां पक्षकार उक्त राशि के भुगतान करने को राजी नहीं है या वहन नहीं कर सकती है तो न्यायालय को अधिनियम की धारा 38(2) में परिकल्पित प्रक्रिया को अपनाना होगा । शास्ति को अधिरोपित करने में कलक्टर पर लगाया गया प्रतिबंध यह है कि किसी भी परिस्थिति में शास्ति को शुल्क से दस गुना ज्यादा नहीं होना चाहिए जिसका अर्थ केवल दूरतम परिस्थितियों में नितांत सीमा को तय करने के लिए होगा ।

10. विद्वान् काउंसेल ने आगे यह प्रस्तुत किया कि याची के पास रिट याचिका को कायम रखने के लिए सुने जाने का अधिकार नहीं है । काउंसेल ने **विनोय कुमार** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले पर विश्वास करते हुए कहा कि साधारण रूप से बोलने पर किसी व्यक्ति के पास तब तक रिट याचिका फाइल करके सुने जाने का अधिकार नहीं होगा जब तक कि उसके मूल अधिकारों व्यक्तिगत रूप से आक्षेपित आदेश से प्रभाव नहीं पड़ता है या उसके मूल अधिकारों पर सीधे रूप में या सारभूत रूप से आक्रमण न किया गया हो और क्या अधिकारों जिन पर आक्रमण किया जा रहा है उन पर किसी प्रकार का आसन्न संकट है या उसके द्वारा अर्जित हितों के माध्यम से अनभिज्ञता की वजह से लागू नियमों का अतिक्रमण हो रहा है । संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन राहत अधिकारिता क्षेत्र का अवलंब लेने वाले व्यक्ति के पक्ष में अधिकार के अस्तित्व पर निर्भर करता है ।

11. राज्य-प्रत्यर्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने प्रस्तुत किया कि किसी दस्तावेज को परिबद्ध करने का अर्थ उसका अस्थायी रूप से अधिहरण करना है । वर्तमान मामले में स्टांप शुल्क की कमी को पूरा करना है । भारतीय स्टांप अधिनियम की धारा 33(1) या धारा 38(1) के अधीन मध्यस्थ दस्तावेज को परिबद्ध कर सकता है ।

---

[1] (2001) 4 एस. सी. सी. 734 = ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 1739.

यद्यपि वर्तमान मामले में शास्ति को कम करने वाली परिस्थितियों के अभाव में अधिकतम शास्ति अधिरोपित करनी चाहिए थी तथा वर्तमान मामले में मध्यस्थ के संबंध में यह प्रस्तुत किया गया है कि वर्तमान मामला स्टांप अधिनियम की धारा 38(2) के अधीन है ।

12. स्टांप अधिनियम के उपबंधों का संयुक्त पठन प्राइवेट-प्रत्यर्थी की दलील का समर्थन करता है कि कलक्टर के पास स्टांप अधिनियम की धारा 31, 38 और 40 के अंतर्गत केवल स्टांप शुल्क का निर्धारण करने का अधिकार है । यह अच्छी तरह से तय है कि यदि कानून किसी विशेष प्रकार से किसी कार्य को करने के लिए कहता है तो वह कार्य उसी प्रकार से किया जाना चाहिए । कलक्टर को उचित स्टांप शुल्क तय करने और शास्ति अधिरोपित करने का प्राधिकार केवल स्टांप अधिनियम की धारा 31, 38 और 40 से प्रवाहित होता है ।

13. वर्तमान मामला धारा 31 के अंतर्गत नहीं आ सकता है जिसमें ऐसी स्थिति की परिकल्पना करता है जो कि लिखत कलक्टर के पास लाया जाता है और इसे लाने वाला व्यक्ति कलक्टर की राय को शुल्क के रूप में लागू कराता है । ऐसे मामलों में कलक्टर अपने निर्णय में उस शुल्क निर्धारण ऐसे करेगा कि लिखत पर प्रभार्य है ।

14. दूसरी ओर, धारा 38(1) एक ऐसी स्थिति की परिकल्पना करती है जहां धारा 33 के अधीन एक लिखत को परिबद्ध करने वाला व्यक्ति उस लिखित को धारा 35 के अधीन शास्ति के संदाय पर या धारा 37 में उपबंधित शुल्क के संदाय पर उस लिखत को साक्ष्य के रूप में स्वीकार करता है और उसके बाद कलक्टर को ऐसे लिखत की एक अधिप्रमाणित प्रति के साथ लिखित प्रमाणपत्र जिसमें रकम के साथ शुल्क की रकम और उद्गृहीत शास्ति की रकम दी गई हो तो उसे कलक्टर के पास भेज देना चाहिए । वर्तमान मामले में स्टांप अधिनियम की धारा 33 के अनुध्यात में मध्यस्थ एक प्राधिकारी था । हालांकि मध्यस्थ ने स्टांप शुल्क या उद्गृहीत शास्ति का निर्धारण नहीं किया परंतु दस्तावेज को परिबद्ध करके ही रुक गया और स्टांप शुल्क को अधिरोपित करने का कार्य भी छोड़ दिया जिसके परिणामस्वरूप शास्ति के निर्धारण का कार्य कलक्टर पर अधिरोपित हो गया ।

15. दस्तावेज का कलक्टर तक पारेषण स्टांप अधिनियम की धारा 38(2) के अधीन ही हो सकता है जो एक ऐसी स्थिति को अनुध्यात करता है जिसमें एक व्यक्ति धारा 33 से प्राप्त प्राधिकार के अंतर्गत एक लिखत को परिबद्ध करके मूल रूप में कलक्टर के पास भेज देता है ।

16. मध्यस्थ द्वारा दिए गए इन आदेशों से, कि प्रश्नगत करार परिबद्ध किए जाने हेतु उसके पास भेजे जाए और लिखतें कलक्टर के पास भेजी जाएं, यह स्पष्ट होता है कि मध्यस्थ ने इन दस्तावेजों को स्वयं परिबद्ध किया है और उनकी मूल प्रतियां स्टांप शुल्क के निर्धारण हेतु कलक्टर को भेजी हैं और ऐसा स्टांप अधिनियम की धारा 38(2) के अधीन किया गया है ।

17. धारा 40 स्पष्ट रूप से यह उपबंध करता है कि जब कलक्टर धारा 33 के अधीन किसी लिखत को परिबद्ध करता है या धारा 38(2) के अधीन उसे भेजी गई कोई लिखत प्राप्त करता है तो कलक्टर से यह अपेक्षा की जाएगी कि वह कुल शुल्क की वसूली करेगा और साथ ही शास्ति भी वसूल करेगा जो कुल शुल्क के 10 गुना अथवा शुल्क में कमी वाले भाग के 10 गुना से अधिक नहीं होगी ।

18. इस प्रकार वर्तमान मामले में स्टांप शुल्क और शास्ति के निर्धारण में कलक्टर द्वारा अधिकारिता क्षेत्र का प्रयोग स्पष्ट रूप से स्टांप अधिनियम की धारा 40 के अधीन था जो कलक्टर को निर्धारित स्टांप शुल्क के दस गुना से कम या उसके बराबर की रकम की शास्ति उद्गृहीत करने की अनुमति देता है ।

19. धारा 33 के अधीन साक्ष्य ग्रहण करने वाले प्राधिकारी के विपरीत जैसाकि धारा 38(1) में अनुध्यात है कलक्टर धारा 40 की परिधि में स्टांप अधिनियम की धारा 35 के उपबंध (क) द्वारा लगाए गए बंधन से बाध्य नहीं है जो उचित शुल्क या कमी वाले भाग के दस गुना रकम को शास्ति के रूप में नियत करने का आदेश देता है ।

20. इस प्रकार वर्तमान मामले में कलक्टर ने पूर्णतया भारतीय स्टांप अधिनियम 1899 की धारा 40 के अधीन प्रदत्त अधिकारिता क्षेत्र

के भीतर कार्य किया जिसमें प्रश्नगत लिखत के संबंध में निर्धारित स्टांप शुल्क के दस गुना से कम दरों पर शास्ति अधिरोपित की गई ।

21. रिट याचिका को कायम रखने के लिए याची के सुने जाने के अधिकार के संबंध में यह अच्छी तरह से तय है कि स्टांप शुल्क के निर्धारण का प्रश्न राजस्व से संबंधित है और यह प्रतिविरोधात्मक केवल राज्य और इस प्रकार के शुल्क को जमा करने का दायित्व रखने वाले व्यक्ति के बीच हो सकता है । इस प्रकार साधारणतया याची के पास वर्तमान याचिका को कायम रखते हुए सुने जाने का अधिकार नहीं है । हालांकि याची के पक्ष में संभव व्यापक दृष्टिकोण रखते हुए यह एक व्यक्ति के अधिकारिता क्षेत्र के भीतर है कि वह भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन न्यायालय के अधिकारिता क्षेत्र का अवलंब कानूनी या मूल अधिकार या नैसर्गिक न्याय का घोर उल्लंघन का परिशोधन कराने के लिए ले सकता है । यहां तक कि याची को छूट देने पर भी पूर्ववर्ती चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए याचिका खारिज किए जाने योग्य है ।

22. तद्नुसार 2018 का डब्ल्यू. पी. ओ. नंबर 108 और 2018 का डब्ल्यू. पी. ओ. नंबर 109 खर्चे के बारे में आदेश किए बिना खारिज की जाती है ।

23. इस आदेश की प्रमाणित प्रतिलिपि इसके लिए आवेदन करने वाले पक्षकारों को तत्काल सभी आक्षेपित औपचारिकताओं के अनुरूप प्रदान की जाएगी ।

याचिका खारिज की गई ।

अम.

अंजना गुप्ता नी सेनगुप्ता

बनाम

तपन चन्द्र गुप्ता

(2010 की प्रथम अपील सं. 186)

तारीख 6 अप्रैल, 2021

न्यायमूर्ति अरिन्दम सिन्हा और न्यायमूर्ति सुवरा घोष

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 13(1) – विवाह-विच्छेद – पत्नी द्वारा क्रूरता और अभित्यजन किया जाना – पत्नी का स्वेच्छया वैवाहिक गृह छोड़कर जाना – पति द्वारा विवाह-विच्छेद की कार्यवाही आरंभ किए जाने के पश्चात् पत्नी द्वारा दंड संहिता की धारा 498क के अधीन शिकायत दर्ज किया जाना – अपीलार्थी पत्नी स्वयं अपना सामान लेकर वैवाहिक गृह छोड़कर गई है, अतः यह नहीं कहा जा सकता है कि उसे पति द्वारा घर से निकाला गया है और साथ ही पत्नी ने यह तथ्य छिपाया है कि उसका एक फेफड़ा विवाह पूर्व शल्य-चिकित्सा के दौरान काटकर निकाल दिया गया था और उसने विवाह-विच्छेद के वाद का बचाव करने के लिए धारा 498क के अधीन शिकायत दर्ज कराई है, अतः पत्नी द्वारा पति के प्रति क्रूरता और अभित्यजन साबित नहीं होता है इसलिए विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए विवाह-विच्छेद के निर्णय और डिक्री में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

इस अपील की विषयवस्तु उस व्यक्ति की पीड़ा से संबंधित है जिसकी पत्नी की मृत्यु उस समय हुई जब वह 50 वर्ष के दशक के अंतिम पड़ाव पर था जिसने अपीलार्थी से विवाह करके अपने जीवन का पुनारंभ किया ताकि उसके बच्चों की देखरेख हो सके । दुर्भाग्यवश वह अपने इस प्रयास में सफल न हो सका । प्रत्यर्थी-पति ने, जो कि विधुर है, लगभग 59 वर्ष की आयु में अपीलार्थी-पत्नी, जो लगभग 39 वर्ष की

अविवाहिता है, के साथ तारीख 29 नवंबर, 1996 को हिन्दू रीति-रिवाज के अनुसार विवाह किया और प्रत्यर्थी-पति की प्रथम पत्नी की मृत्यु तारीख 8 अक्तूबर, 1994 को हो गई थी और प्रथम पत्नी से जन्मा एक पुत्र और एक पुत्री प्रत्यर्थी-पति के पास रहते हैं जिन्हें मातृ-प्रेम और लालन-पालन किए जाने की आवश्यकता थी । दोनों पक्षकार विवाह के पश्चात् प्रत्यर्थी-पति के घर में वैवाहिक जीवन बिताने लगे । कुछ ही दिनों बाद यह पता चला कि अपीलार्थी-पत्नी को बच्चों से कोई प्रेम नहीं है और वह प्रत्यर्थी-पति के साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार करने लगी । उसने प्रत्यर्थी-पति और उसके बच्चों के साथ शारीरिक और मानसिक यातनापूर्ण व्यवहार किया और वह प्रत्यर्थी-पति को सूचित किए बिना प्राय: घर छोड़कर चली जाती थी । अपीलार्थी-पत्नी ने इस तथ्य को भी छिपाया था कि वह थायराइड के रोग से ग्रसित है और यह कि शल्य-चिकित्सा द्वारा उसका एक फेफड़ा निकाल दिया गया है । अपीलार्थी-पत्नी ने वर्ष 2000 में प्रत्यर्थी-पति का घर छोड़ दिया था और वह उस समय भी वापिस नहीं आई जब प्रत्यर्थी-पति गंभीर रूप से बीमार था । प्रत्यर्थी-पति की पुत्री के विवाह के पश्चात् वह अपीलार्थी-पत्नी को तारीख 2 फरवरी, 2002 को इस आशय से अपने घर ले आया था कि उनके बीच संबंध सौहार्द बन जाएंगे । किंतु अपीलार्थी-पत्नी अपना सारा सामान लेकर वर्ष 2003 में पति का घर छोड़कर चली गई । अपीलार्थी-पत्नी प्रत्यर्थी-पति की नाती गोदभराई (राइस सेरेमनी) में भी सम्मिलित नहीं हुई जिसमें उसके भाई सम्मिलित हुए थे । प्रत्यर्थी-पति द्वारा कई प्रयास समझौता करने के लिए किए गए जो असफल हो गए और इसी कारण प्रत्यर्थी-पति को क्रूरता और अभित्यजन के आधार पर विवाह-विच्छेद हेतु वाद फाइल करना पड़ा । अपीलार्थी-पत्नी ने लिखित कथन फाइल करते हुए इस वाद का प्रतिवाद किया जिसमें उसने प्रत्यर्थी-पति द्वारा उसके विरुद्ध किए गए अभिकथनों से इनकार किया और यह कथन किया कि पति ने और पति के बच्चों ने अपीलार्थी-पत्नी को कभी स्वीकार ही नहीं किया था और उन्होंने अपीलार्थी-पत्नी के साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार किया है । उसे तारीख 20 जुलाई, 2000 को उसके वैवाहिक गृह

से निकाल दिया गया था और प्रत्यर्थी-पति द्वारा उसे कोई भी भरण-पोषण उपलब्ध नहीं कराया गया था जिसके परिणामस्वरूप उसने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 के अधीन विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, बरासत के समक्ष आवेदन फाइल किया । अपीलार्थी-पत्नी अपने दो बड़े भाइयों के साथ रहती है जो अविवाहित हैं और उन्हें प्रत्यर्थी-पति की नाती की गोदभराई के लिए आमंत्रित नहीं किया गया था । अपीलार्थी-पत्नी ने इस वाद के खारिज किए जाने की प्रार्थना की । विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् वाद की सुनवाई की और प्रत्यर्थी-पति के पक्ष में विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान की । विवाह-विच्छेद के उक्त निर्णय के विरुद्ध अपीलार्थी-पत्नी द्वारा यह अपील फाइल की गई है जिसमें इस निर्णय और डिक्री को अपास्त किए जाने की प्रार्थना की गई है । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – स्वीकृतत: पक्षकारों के बीच तारीख 21 नवंबर, 1996 को जो विवाह हुआ था वह एक प्रकार का समझौता था क्योंकि प्रत्यर्थी-पति की आयु लगभग 59 वर्ष थी और अपीलार्थी-पत्नी की आयु लगभग 39 वर्ष । अपीलार्थी-पत्नी विवाह के पूर्व इस बात से अवगत थी कि प्रत्यर्थी-पति की प्रथम पत्नी की मृत्यु हो चुकी है और प्रत्यर्थी-पति के पास उसके पूर्ववर्ती विवाह से एक पुत्र और पुत्री भी हैं । दो पक्षकारों के बीच सहमति के परिणामस्वरूप ही विवाह किया जाता है । यह विवादित नहीं है कि अपीलार्थी ने वर्ष 2000 में प्रत्यर्थी का घर छोड़ा था जिसके संबंध में अपीलार्थी-पत्नी का यह कहना है कि उसे घर से निकाला गया था जबकि प्रत्यर्थी-पति की ओर से यह दलील दी गई है कि उसकी पत्नी स्वेच्छया घर छोड़कर गई थी । प्रत्यर्थी-पति का यह पक्षकथन है कि अपीलार्थी-पत्नी अपने सारे सामान के साथ घर छोड़कर गई थी । अपीलार्थी-पत्नी ने विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष अपने साक्ष्य में यह कथन किया है कि वाद्य-यंत्र, टेप रिकार्डर, कैसेटों, पुस्तकों और वस्त्रों के अतिरिक्त कोई भी सामान उसके पति के घर में नहीं था । वास्तव में इस बात से प्रत्यर्थी-पति के कथन की पुष्टि होती है कि

अपीलार्थी-पत्नी अपना लगभग संपूर्ण सामान वैवाहिक गृह से लेकर गई थी । यदि अपीलार्थी-पत्नी को प्रत्यर्थी-पति द्वारा वैवाहिक गृह से निकाला जाता तब वह अपना यह सामान नहीं ले जा सकती थी । यह तथ्य कि वह अपना सामान लेकर घर से गई थी, इस बात का प्रमाण है कि अपीलार्थी-पत्नी स्वेच्छया घर छोड़कर गई थी और उसे ऐसा करने के लिए विवश नहीं किया गया था । यह भी आश्चर्यजनक है कि अपीलार्थी-पत्नी के वैवाहिक गृह में उसके साथ अभिकथित रूप से हुए क्रूरतापूर्ण व्यवहार के संबंध में कोई भी शिकायत किसी भी प्राधिकारी के समक्ष नहीं कराई गई । स्वीकृततः अपीलार्थी की चिकित्सा परीक्षा के दौरान पता चला कि वह थायराइड के रोग से ग्रसित है और प्रत्यर्थी-पति ने उसके उपचार के लिए पूरी सहायता उपलब्ध कराई जिसे यह दर्शित होता है कि प्रत्यर्थी-पति के मन में अपीलार्थी-पत्नी के प्रति प्रेम-भाव था और वह उसके स्वास्थ्य तथा देखरेख के लिए चिंतित था । इसके प्रतिकूल, अपीलार्थी ने इस तथ्य को भी छिपाया था कि विवाह पूर्व उसका एक फेफड़ा शल्य-चिकित्सा के दौरान काटकर निकाला गया है । पत्नी अपने पति के स्वास्थ्य के प्रति बिल्कुल बेखबर रहती थी और वह तारीख 20 जुलाई, 2000 को अपने भाई के घर जिससे यह उपदर्शित होता है कि उसे अपने पति की कोई चिंता नहीं थी । अपीलार्थी-पत्नी द्वारा यह भी स्वीकार किया गया है कि उसने अपने विरुद्ध विवाह-विच्छेद का वाद संस्थित किए जाने के पश्चात् भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 498क के अधीन प्रत्यर्थी के विरुद्ध शिकायत दर्ज कराई थी । दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि आपराधिक शिकायत फाइल करने का मात्र कारण विवाह-विच्छेद के वाद का बचाव करना था न कि वास्तव में उसके साथ कोई क्रूरता कारित की गई थी, अतः यह शिकायत मिथ्या और तुच्छ है । यह बात समझ से बाहर है कि यद्यपि अपीलार्थी-पत्नी ने विवाह-विच्छेद की डिक्री अपास्त किए जाने की प्रार्थना की है लेकिन उसने एक बार भी यह नहीं कहा है कि वह अपने पति के साथ वैवाहिक जीवन का पुनारंभ करना चाहती है । वर्तमान अपील फाइल करने का मुख्य उद्देश्य मात्र विवाह-विच्छेद की डिक्री को चुनौती देना है न कि इस

कारण से कि वह अपने पति के साथ पुन: वैवाहिक जीवन आरंभ करने के लिए इच्छुक है । अपीलार्थी-पत्नी के इस अभिकथित आचरण और क्रूरता की पुष्टि पुत्री के पति द्वारा भी होती है जिसने अभि. सा. 2 के रूप में साक्ष्य दिया है । दूसरी ओर प्रत्यर्थी-पति द्वारा कारित क्रूरता के संबंध में जो अभिकथन किया गया है उसकी पुष्टि तर्कसम्मत साक्ष्य से नहीं की गई है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार किया है और यह निष्कर्ष ठीक ही निकाला है कि प्रत्यर्थी-पति को क्रूरता और अभित्यजन के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान की जानी चाहिए । प्रत्यर्थी-पति और उसके बच्चों के प्रति अपीलार्थी-पत्नी का संपूर्ण आचरण असभ्य, क्रूर और असामान्य प्रतीत होता है और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से भी प्रत्यर्थी की सहनशीलता साबित होती है जिसने अपीलार्थी-पत्नी के साथ सुखद और शांतिपूर्ण वैवाहिक जीवन बिताने का प्रयास किया है और साथ ही पति ने पत्नी को संगीत की शिक्षा और सभी संभव चिकित्सा-सुविधाएं भी उपलब्ध कराई हैं । (पैरा 8, 9, 11, 12 और 13)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2010 की प्रथम अपील सं. 186.

निचले न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध प्रथम अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सुश्री मिताली भट्टाचार्य

प्रत्यर्थी की ओर से –

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति सुवरा घोष ने दिया ।

न्या. घोष – अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल की सुनवाई की गई है ।

2. प्रत्यर्थी की ओर से न्यायालय में कोई भी पेश नहीं हुआ है । पिछली तारीख को प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा यह निवेदन किया गया था कि उसके मुवक्किल से उसका संपर्क नहीं हो सका है । प्रत्यर्थी के आचरण से यह पता चलता है कि वह इस अपील का विरोध करने में इच्छुक नहीं है । इस अपील की सुनवाई एकपक्षीय

रूप में की जा रही है और इसी प्रकार आदेश भी किया जा रहा है ।

3. इस अपील की विषयवस्तु उस व्यक्ति की पीड़ा से संबंधित है जिसकी पत्नी की मृत्यु उस समय हुई जब वह 50 वर्ष के दशक के अंतिम पड़ाव पर था जिसने अपीलार्थी से विवाह करके अपने जीवन का पुनारंभ किया ताकि उसके बच्चों की देखरेख हो सके । दुर्भाग्यवश वह अपने इस प्रयास में सफल न हो सका ।

4. प्रत्यर्थी-पति ने, जो कि विधुर है, लगभग 59 वर्ष की आयु में अपीलार्थी-पत्नी, जो लगभग 39 वर्ष की अविवाहिता है, के साथ तारीख 29 नवंबर, 1996 को हिन्दू रीति-रिवाज के अनुसार विवाह किया और प्रत्यर्थी-पति की प्रथम पत्नी की मृत्यु तारीख 8 अक्तूबर, 1994 को हो गई थी और प्रथम पत्नी से जन्मा एक पुत्र और एक पुत्री प्रत्यर्थी-पति के पास रहते हैं जिन्हें मातृ-प्रेम और लालन-पालन किए जाने की आवश्यकता थी । दोनों पक्षकार विवाह के पश्चात् प्रत्यर्थी-पति के घर में वैवाहिक जीवन बिताने लगे । कुछ ही दिनों बाद यह पता चला कि अपीलार्थी-पत्नी को बच्चों से कोई प्रेम नहीं है और वह प्रत्यर्थी-पति के साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार करने लगी । उसने प्रत्यर्थी-पति और उसके बच्चों के साथ शारीरिक और मानसिक यातनापूर्ण व्यवहार किया और वह प्रत्यर्थी-पति को सूचित किए बिना प्राय: घर छोड़कर चली जाती थी । अपीलार्थी-पत्नी ने इस तथ्य को भी छिपाया था कि वह थायराइड के रोग से ग्रसित है और यह कि शल्य-चिकित्सा द्वारा उसका एक फेफड़ा निकाल दिया गया है । अपीलार्थी-पत्नी ने वर्ष 2000 में प्रत्यर्थी-पति का घर छोड़ दिया था और वह उस समय भी वापिस नहीं आई जब प्रत्यर्थी-पति गंभीर रूप से बीमार था । प्रत्यर्थी-पति की पुत्री के विवाह के पश्चात् वह अपीलार्थी-पत्नी को तारीख 2 फरवरी, 2002 को इस आशय से अपने घर ले आया था कि उनके बीच संबंध सौहार्द बन जाएंगे । किंतु अपीलार्थी-पत्नी अपना सारा सामान लेकर वर्ष 2003 में पति का घर छोड़कर चली गई । अपीलार्थी-पत्नी प्रत्यर्थी-पति की नाती गोदभराई (राइस सेरेमनी) में भी सम्मिलित नहीं हुई जिसमें उसके भाई सम्मिलित हुए थे । प्रत्यर्थी-पति द्वारा कई प्रयास समझौता करने के लिए किए

गए जो असफल हो गए और इसी कारण प्रत्यर्थी-पति को क्रूरता और अभित्यजन के आधार पर विवाह-विच्छेद हेतु वाद फाइल करना पड़ा ।

5. अपीलार्थी-पत्नी ने लिखित कथन फाइल करते हुए इस वाद का प्रतिवाद किया जिसमें उसने प्रत्यर्थी-पति द्वारा उसके विरुद्ध किए गए अभिकथनों से इनकार किया और यह कथन किया कि पति ने और पति के बच्चों ने अपीलार्थी-पत्नी को कभी स्वीकार ही नहीं किया था और उन्होंने अपीलार्थी-पत्नी के साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार किया है । उसे तारीख 20 जुलाई, 2000 को उसके वैवाहिक गृह से निकाल दिया गया था और प्रत्यर्थी-पति द्वारा उसे कोई भी भरणपोषण उपलब्ध नहीं कराया गया था जिसके परिणामस्वरूप उसने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 के अधीन विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, बरासत के समक्ष आवेदन फाइल किया । अपीलार्थी-पत्नी अपने दो बड़े भाइयों के साथ रहती है जो अविवाहित हैं और उन्हें प्रत्यर्थी-पति की नाती की गोदभराई के लिए आमंत्रित नहीं किया गया था । अपीलार्थी-पत्नी ने इस वाद के खारिज किए जाने की प्रार्थना की ।

6. विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् वाद की सुनवाई की और प्रत्यर्थी-पति के पक्ष में विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान की ।

7. विवाह-विच्छेद के उक्त निर्णय के विरुद्ध अपीलार्थी-पत्नी द्वारा यह अपील फाइल की गई है जिसमें इस निर्णय और डिक्री को अपास्त किए जाने की प्रार्थना की गई है ।

8. स्वीकृततः पक्षकारों के बीच तारीख 21 नवंबर, 1996 को जो विवाह हुआ था वह एक प्रकार का समझौता था क्योंकि प्रत्यर्थी-पति की आयु लगभग 59 वर्ष थी और अपीलार्थी-पत्नी की आयु लगभग 39 वर्ष । अपीलार्थी-पत्नी विवाह के पूर्व इस बात से अवगत थी कि प्रत्यर्थी-पति की प्रथम पत्नी की मृत्यु हो चुकी है और प्रत्यर्थी-पति के पास उसके पूर्ववर्ती विवाह से एक पुत्र और पुत्री भी हैं । दो पक्षकारों के बीच सहमति के परिणामस्वरूप ही विवाह किया जाता है । यह विवादित नहीं है कि अपीलार्थी ने वर्ष 2000 में प्रत्यर्थी का घर छोड़ा था जिसके संबंध

में अपीलार्थी-पत्नी का यह कहना है कि उसे घर से निकाला गया था जबकि प्रत्यर्थी-पति की ओर से यह दलील दी गई है कि उसकी पत्नी स्वेच्छया घर छोड़कर गई थी । प्रत्यर्थी-पति का यह पक्षकथन है कि अपीलार्थी-पत्नी अपने सारे सामान के साथ घर छोड़कर गई थी । अपीलार्थी-पत्नी ने विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष अपने साक्ष्य में यह कथन किया है कि वाद्य-यंत्र, टेप रिकार्डर, कैसेटों, पुस्तकों और वस्त्रों के अतिरिक्त कोई भी सामान उसके पति के घर में नहीं था । वास्तव में इस बात से प्रत्यर्थी-पति के कथन की पुष्टि होती है कि अपीलार्थी-पत्नी अपना लगभग संपूर्ण सामान वैवाहिक गृह से लेकर गई थी । यदि अपीलार्थी-पत्नी को प्रत्यर्थी-पति द्वारा वैवाहिक गृह से निकाला जाता तब वह अपना यह सामान नहीं ले जा सकती थी । यह तथ्य कि वह अपना सामान लेकर घर से गई थी, इस बात का प्रमाण है कि अपीलार्थी-पत्नी स्वेच्छया घर छोड़कर गई थी और उसे ऐसा करने के लिए विवश नहीं किया गया था । यह भी आश्चर्यजनक है कि अपीलार्थी-पत्नी के वैवाहिक गृह में उसके साथ अभिकथित रूप से हुए क्रूरतापूर्ण व्यवहार के संबंध में कोई भी शिकायत किसी भी प्राधिकारी के समक्ष नहीं कराई गई ।

9. स्वीकृतत: अपीलार्थी की चिकित्सा परीक्षा के दौरान पता चला कि वह थायराइड के रोग से ग्रसित है और प्रत्यर्थी-पति ने उसके उपचार के लिए पूरी सहायता उपलब्ध कराई जिससे यह दर्शित होता है कि प्रत्यर्थी-पति के मन में अपीलार्थी-पत्नी के प्रति प्रेम-भाव था और वह उसके स्वास्थ्य तथा देखरेख के लिए चिंतित था । इसके प्रतिकूल, अपीलार्थी ने इस तथ्य को भी छिपाया था कि विवाह पूर्व उसका एक फेफड़ा शल्य-चिकित्सा के दौरान काटकर निकाला गया है । पत्नी अपने पति के स्वास्थ्य के प्रति बिल्कुल बेखबर रहती थी और वह तारीख 20 जुलाई, 2000 को अपने भाई के घर जिससे यह उपदर्शित होता है कि उसे अपने पति की कोई चिंता नहीं थी ।

10. अपीलार्थी ने यह अभिकथन किया है कि उसे प्रत्यर्थी-पति द्वारा नाती की गोदभराई में नहीं बुलाया गया था । अपीलार्थी-पत्नी के

इस आचरण से ही यह साबित हो जाता है कि वह स्वयं को प्रत्यर्थी के परिवार का सदस्य नहीं समझती थी न ही उसने प्रत्यर्थी के बच्चों को अपने बच्चों की तरह स्वीकार किया था । यह दुर्भाग्य की बात है कि अपीलार्थी-पत्नी ने गोदभराई के इस आयोजन के लिए औपचारिक निमंत्रण दिए जाने की प्रत्याशा की जबकि वह स्वेच्छया भी इस आयोजन में सम्मिलित हो सकती थी ।

11. अपीलार्थी-पत्नी द्वारा यह भी स्वीकार किया गया है कि उसने अपने विरुद्ध विवाह-विच्छेद का वाद संस्थित किए जाने के पश्चात् भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 498क के अधीन प्रत्यर्थी के विरुद्ध शिकायत दर्ज कराई थी । दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि आपराधिक शिकायत फाइल करने का मात्र कारण विवाह-विच्छेद के वाद का बचाव करना था न कि वास्तव में उसके साथ कोई क्रूरता कारित की गई थी, अत: यह शिकायत मिथ्या और तुच्छ है ।

12. यह बात समझ से बाहर है कि यद्यपि अपीलार्थी-पत्नी ने विवाह-विच्छेद की डिक्री अपास्त किए जाने की प्रार्थना की है लेकिन उसने एक बार भी यह नहीं कहा है कि वह अपने पति के साथ वैवाहिक जीवन का पुनारंभ करना चाहती है । वर्तमान अपील फाइल करने का मुख्य उद्देश्य मात्र विवाह-विच्छेद की डिक्री को चुनौती देना है न कि इस कारण से कि वह अपने पति के साथ पुन: वैवाहिक जीवन आरंभ करने के लिए इच्छुक है । अपीलार्थी-पत्नी के इस अभिकथित आचरण और क्रूरता की पुष्टि पुत्री के पति द्वारा भी होती है जिसने अभि. सा. 2 के रूप में साक्ष्य दिया है । दूसरी ओर प्रत्यर्थी-पति द्वारा कारित क्रूरता के संबंध में जो अभिकथन किया गया है उसकी पुष्टि तर्कसम्मत साक्ष्य से नहीं की गई है ।

13. विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार किया है और यह निष्कर्ष ठीक ही निकाला है कि प्रत्यर्थी-पति को क्रूरता और अभित्यजन के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान की जानी चाहिए । प्रत्यर्थी-पति और उसके बच्चों के प्रति अपीलार्थी-पत्नी का संपूर्ण आचरण असभ्य, क्रूर और असामान्य प्रतीत होता है और

अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से भी प्रत्यर्थी की सहनशीलता साबित होती है जिसने अपीलार्थी-पत्नी के साथ सुखद और शांतिपूर्ण वैवाहिक जीवन बिताने का प्रयास किया है और साथ ही पति ने पत्नी को संगीत की शिक्षा और सभी संभव चिकित्सा-सुविधाएं भी उपलब्ध कराई हैं ।

14. इस अपील में कोई सार नहीं है और खारिज की जाती है ।

15. 2010 की प्रथम अपील सं. 186 खारिज की जाती है ।

16. संबंधित अंतरिम आवेदन सं. सी.ए.एन.-4/2011(पूर्ववर्ती सं. सी.ए.एन.-6357/2011), अंतरिम आवेदन सं. सी.ए.एन.-6/2013 (पूर्ववर्ती सं. सी.ए.एन.-12692/2013), अंतरिम आवेदन सं. सी.ए.एन.-7/2016 (पूर्ववर्ती सं. सी.ए.एन.-7093/2016) और अंतरिम आवेदन सं. सी.ए.एन.-8/2020 (पूर्ववर्ती सं. सी.ए.एन.-2585/2020) का भी निपटारा किया जाता है ।

17. तत्कालीन 11वें विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, अलीपुर द्वारा वैवाहिक वाद सं. 2/2004 में पारित 20 फरवरी, 2010 का निर्णय और डिक्री की पुष्टि की जाती है ।

18. खर्चों के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

19. इस निर्णय की एक प्रति सूचना और आवश्यक कार्यवाही हेतु विद्वान् विचारण न्यायालय को भेजी जाए ।

20. इस निर्णय की प्रमाणित वेबसाइट प्रति, यदि आवेदित है, आवश्यक औपचारिकताओं के अनुपालन के पश्चात् पक्षकारों को तत्काल उपलब्ध कराई जाए ।

अपील खारिज की गई ।

अस.

जूली (श्रीमती) (मृतका) द्वारा विधिक प्रतिनिधि और अन्य

बनाम

पतरू और अन्य

(2010 की द्वितीय अपील सं. 234)

तारीख 3 फरवरी, 2021

न्यायमूर्ति संजय कुमार अग्रवाल

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 (1956 का 30) – धारा 2(2) – अधिनियम का लागू होना – विवाहित पुत्री द्वारा अपने पिता की संपत्ति में हिस्सा पाने का दावा किया जाना – अपीलार्थियों का अनुसूचित जनजाति का होना – अपीलार्थी संविधान के अनुच्छेद 366(25) के अंतर्गत उरांव नामक अनुसूचित जनजाति के सदस्य हैं और केंद्र सरकार ने इससे अन्यथा के लिए या हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के उपबंध उन पर लागू किए जाने के लिए कोई अधिसूचना भी जारी नहीं की है, अतः अपीलार्थी को उक्त अधिनियम लागू नहीं होगा ।

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 (1963 का 47) – धारा 34 – हक की घोषणा का वाद – विवाहित पुत्री (अपीलार्थी/वादी) द्वारा अपने मृतक पिता की संपत्ति में हिस्सा पाने का दावा किया जाना – प्रतिवादी द्वारा यह अभिवाक् किया जाना कि उनकी जाति में विवाहित पुत्री को विरासत में हिस्सा नहीं दिया जाता – प्रथा साबित करने का भार प्रतिवादी पर – प्रतिवादी द्वारा साक्ष्य के माध्यम से यह साबित नहीं किया गया है कि अपीलार्थी/वादी की जनजाति में विवाहित पुत्री को उनकी प्रथानुसार विरासत में हिस्सा नहीं दिया जाता है, अतः निचले दोनों न्यायालयों के निर्णय न्यायोचित नहीं हैं और वादी अपने पिता की संपत्ति में एक चौथाई भाग पाने की हकदार है ।

इस मामले में के अपीलार्थियों/वादियों द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन फाइल की गई यह द्वितीय अपील सुनवाई के लिए तीन सारभूत प्रश्नों को विरचित करते हुए तारीख 3

जनवरी, 2014 को ग्रहण की गई । ये प्रश्न इस प्रकार हैं : (1) क्या निचले दोनों न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करने में विधि की त्रुटि की है कि जूली (वादी सं. 1) चिलबिलो की पुत्री घरजिया नहीं है ? (2) क्या निचले दोनों न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करने में न्यायोचित किया है कि वादी की जाति में ऐसा कोई रिवाज नहीं है कि विवाहित पुत्री को मृतक पिता की संपत्ति में विरासत की भागीदार हो ? (3) क्या निचले दोनों न्यायालयों ने इस तथ्य का मूल्यांकन न करके न्यायोचित किया है कि डी/1 और डी/3 जैसे साक्ष्यों के अनुसार पाण्डू के चारों पुत्रों के बीच संपत्ति का विभाजन किया गया है ? ग्राम कालिया, तहसील बगीचा, जिला जाशपुर में स्थित वाद संपत्ति, जिसे वाद की अनुसूची-ए में दर्शाया गया है, मूल रूप से पाण्डू के पास थी । पाण्डू के 4 पुत्र थे जिनके नाम पादरा, लल्लू, चोटो और चिलबिलो हैं । मूल वादी चिलबिलो की पुत्रियां हैं । चिलबिलो का कोई पुत्र नहीं है और प्रतिवादी पादरा के पुत्र हैं जिनके नाम लल्लू और चोटो हैं । चिलबिलो की मृत्यु वर्ष 1989 में हो गई थी और वादी उसकी पुत्रियां होने के नाते विधिक वारिस हैं क्योंकि चिलबिलो का कोई पुत्र नहीं है । जूली चिलबिलो की पुत्री है । वादियों का यह पक्षकथन है कि जूली को घरजिया के रूप में रखा गया था और उसके पति को उसके पिता चिलबिलो द्वारा घर जमाई की हैसियत से रखा गया था । वादियों का यह भी पक्षकथन है कि उनके पिता चिलबिलो की मृत्यु के पश्चात् वाद संपत्ति उनके नाम में अभिलिखित की गई है किन्तु प्रतिवादियों ने, जो उनके पिता के भाई के पुत्र हैं, राजस्व अधिकारी से मिलीभगत करके राजस्व अभिलेख में अपने नाम अभिलिखित कराए हैं और उन्होंने बलपूर्वक वाद-संपत्ति का कब्जा प्राप्त किया है, इस प्रकार वे स्वामित्व की घोषणा और स्थायी व्यादेश के हकदार हैं । प्रतिवादी सं. 1 से 7 ने वाद में किए गए अभिकथनों से इनकार करते हुए लिखित कथन फाइल किया है और यह अभिवाक् किया है कि यह संपत्ति वादियों के पूर्वजों के पास थी और प्रतिवादी पाण्डू और उसके साथी पक्षकार उरांव जाति के हैं और उनके अपने अलग रीति-रिवाज हैं जिनके अनुसार विवाहित पुत्रियां पिता की संपत्ति में हकदार नहीं हो सकती और इस संपत्ति का बंटवारा चारों भाइयों में कभी नहीं किया गया है और इस प्रकार विवाहित पुत्रियां होने के नाते

वादियों का उक्त संपत्ति में कोई अधिकार नहीं है । विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया है कि वाद-संपत्ति वादियों और प्रतिवादियों के पितामह (दादा) पाण्डू द्वारा अर्जित की गई थी और वे जनजाति से संबंधित हैं जिनकी जाति का नाम उरांव है और इस जाति में विवाहित पुत्रियां अपने पिता की संपत्ति में भागीदार नहीं होती हैं और यह साबित नहीं किया गया है कि जूली चिलबिलो की घरजिया पुत्री है, अत: विचारण न्यायालय ने वाद खारिज कर दिया और इस आदेश की पुष्टि प्रथम अपील न्यायालय द्वारा भी की गई और प्रथम अपील न्यायालय के इस आदेश के विरुद्ध द्वितीय अपील प्रस्तुत की गई है जिसमें सारभूत प्रश्न विरचित किए गए हैं जिनका उल्लेख निर्णय के आरंभ में ही किया गया है । अपील भागतः मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस प्रकार यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के उपबंध इन पक्षकारों को लागू नहीं होंगे क्योंकि ये भारत के संविधान के अनुच्छेद 366(25) के अर्थान्तर्गत उरांव नामक अनुसूचित जनजाति के लोग हैं और केन्द्र सरकार इससे अन्यथा के लिए या हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम के उपबंधों के लागू किए जाने हेतु कोई अधिसूचना भी जारी नहीं की है । अभिलेख से यह स्वीकृत दिखाई देता है कि पक्षकार उरांव जाति से हैं और अधिनियम, 1956 की धारा 2(2) के उपबंध उन पर लागू नहीं होंगे । (पैरा 14 और 15)

विचारण न्यायालय ने इन्दर लाल (अभि. सा. 1) के साक्ष्य का अवलंब लिया है जिसकी परीक्षा वादियों की ओर से कराई गई है । इस साक्षी ने पैरा 5 में यह कथन किया है कि उनके परिवार में पुत्रियों को उनके पिता की संपत्ति में हिस्सा नहीं दिया जाता है । किन्तु विचारण न्यायालय ने उक्त साक्षी के कथन की अंतिम पंक्ति को अनदेखा करते हुए यह मत व्यक्त किया कि यदि पिता का कोई पुत्र नहीं है, तब पुत्री को संपत्ति में हिस्सा दिया जाएगा । इससे अन्यथा भी प्रतिवादियों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे अभिलेख पर यह सिद्ध करने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करें कि उरांव जाति में विवाहित पुत्रियों को उनके पिता की संपत्ति में हिस्सा नहीं दिया जाता । यह उपधारित नहीं किया जा सकता

कि इस समुदाय के लागू होने वाली रूढ़िजन्य विधि के अन्तर्गत महिलाओं को उनके पिता की संपत्ति विरासत में पाने से अपवर्जित किया गया है । इन्दर लाल (अभि. सा. 1) द्वारा स्वीकार किए जाने के आधार पर रूढ़ि को साबित किया गया नहीं माना जा सकता । ऊपर कथित विश्लेषण को दृष्टिगत करते हुए इस न्यायालय की सुविचारित राय में निचले दोनों न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करने में न्यायोचित नहीं किया है कि यद्यपि वादी चिलबिलो की विधिक वारिस हैं और उनका पाण्डू के अन्य पुत्रों के साथ इस संपत्ति पर उत्तराधिकार है किंतु वे मात्र इस आधार पर इस संपत्ति में हिस्सा प्राप्त नहीं कर सकतीं कि वे विवाहित हैं बल्कि वहां प्रचलित रूढ़ि भी विवाहित पुत्रियों को विरासत की संपत्ति से अपवर्जित करती है, परिणामस्वरूप इस निष्कर्ष से संबंधित निचले दोनों न्यायालयों के निर्णय और डिक्री अनुचित होने के कारण अपास्त किए जाने चाहिएं, अत: अपास्त किए जाते हैं । प्रतिवादियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री सक्सेना ने जानकी वासुदेव भोजवाणी (उपरोक्त) जो मुख्तारनामा धारक है, से संबंधित एक विनिश्चय उद्धृत किया है जिसमें यह मत व्यक्त किया गया है कि मुख्तारनामा धारक व्यक्ति मूल वादी की ओर से अभिसाक्ष्य नहीं दे सकता जो कि सुस्थापित है । किंतु वर्तमान मामले में निचले दोनों न्यायालयों ने समवर्ती रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि यह संपत्ति पाण्डू की है और उसके चार पुत्रों का उस पर उत्तराधिकार है, तथापि निचले दोनों न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करते हुए वादियों का वाद खारिज कर दिया कि उरांव जाति में विवाहित पुत्रियों को उनके पिता की संपत्ति में हिस्सा नहीं दिया जाता और यह तथ्य साक्ष्य द्वारा सिद्ध नहीं किया गया है । इस प्रकार मूल प्रतिवादियों की परीक्षा न कराए जाने से इस मामले में कोई फर्क नहीं पड़ता है, क्योंकि अभिलेख पर इसे स्वीकार किया गया है और सम्यक् रूप से यह निष्कर्ष अभिलिखित किया गया है कि पाण्डू ने विरासत में संपत्ति प्राप्त की है और वह वादियों के पिता का उत्तराधिकारी है । मामले को इस प्रकार दृष्टिगत करते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया है कि वादी अपने पिता की संपत्ति से संबंधित हक की घोषणा की हकदार हैं और उनके पिता ग्राम

कालिया, तहसील बगीचा, जिला जाशपुर में स्थित 29.53 एकड़ क्षेत्रफल वाली कुल संपत्ति के एक चौथाई भाग का स्वामी है । चूंकि विभाजन किए जाने का तथ्य साबित नहीं किया गया है, अत: वादी टायटल की इस घोषणा की हकदार हैं कि पाण्डू के मरणोपरांत बची हुई संपत्ति के एक चौथाई भाग, जिसे चिलबिलो ने विरासत में प्राप्त किया था, की हकदार होंगी । (पैरा 27, 31 और 32)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2019] ए. आई. आर. 2019 मुंबई 94 :
बाबूलाल बापू राव कोडापे और एक अन्य
बनाम **साउ रेशमाबाई नारायनराव कौरती**
और एक अन्य ; 23

[2018] ए. आई. आर. 2018 एस. सी. (सप्ली.) 1650 :
इंडियन यंग लॉयर्स एसोसिएशन और अन्य
बनाम **केरल राज्य और अन्य** ; 22

[2017] ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 5797 :
रतनलाल उर्फ **बाबूलाल चुन्नीलाल समुस्का**
बनाम **सुन्दराबाई गोवर्धनदास समुस्का** ; 20

[2008] (2008) 13 एस. सी. सी. 119 =
ए. आई. आर. 2019 एस. सी. (सप्ली.) 418 :
सालिख चंद (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधि
बनाम **सत्य गुप्ता और अन्य** ; 18

[2006] (2006) 13 एस. सी. सी. 627 = ए. आई.
आर. ऑनलाइन 2006 एस. सी. 355 :
भीमाशय और अन्य बनाम **श्रीमती जाहनवी**
उर्फ **जनव्वा** ; 19

[2005] (2005) सप्ली. जे. के. जे. 251 :
हसन भट बनाम **गुलाम अहमद खाण्डे** ; 30

[2005] (2005) एस. ए. आर. (सिविल) 103 : **जानकी वसुदेव भोजवानी और एक अन्य** बनाम **इंडसिंड बैंक लिमिटेड और अन्य** ; 6

[1996] (1996) 5 एस. सी. सी. 125 = ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 1864 : **मधु किश्वर और अन्य** बनाम **बिहार राज्य और अन्य** ; 13

[1956] ए. आई. आर. 1956 एस. सी. 548 : **मोहम्मद बातर और अन्य** बनाम **नईमुन निसा बीबी और अन्य** ; 24

[1953] ए. आई. आर. 1953 एस. सी. 201 : **सरस्वती अम्मल** बनाम **जगदम्बल और एक अन्य** ; 17

[1939] ए. आई. आर. 1939 इलाहाबाद 626 : **महादेव और अन्य** बनाम **बालेश्वर प्रसाद और अन्य** ; 29

[1914] ए. आई. आर. 1914 बॉम्बे 120 : **दहियाभाई मोतीराम भट और अन्य** बनाम **चुन्नीलाल किशोरदास पाण्डेय और अन्य** । 28

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2010 की द्वितीय अपील सं. 234.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से श्री ऋषि महोविया

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री जे. के. सक्सेना और रवि कुमार भगत (सरकारी अधिवक्ता)

न्यायमूर्ति संजय कुमार अग्रवाल – इस मामले में के अपीलार्थियों/वादियों द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन फाइल की गई यह द्वितीय अपील सुनवाई के लिए तीन

सारभूत प्रश्नों को विरचित करते हुए तारीख 3 जनवरी, 2014 को ग्रहण की गई । ये प्रश्न निम्न प्रकार हैं :–

1. क्या निचले दोनों न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करने में विधि की त्रुटि की है कि जूली (वादी सं. 1) चिलबिलो की पुत्री घरजिया नहीं है ?

2. क्या निचले दोनों न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करने में न्यायोचित किया है कि वादी की जाति में ऐसा कोई रिवाज नहीं है कि विवाहित पुत्री को मृतक पिता की संपत्ति में विरासत की भागीदार हो ?

3. क्या निचले दोनों न्यायालयों ने इस तथ्य का मूल्यांकन न करके न्यायोचित किया है कि डी/1 और डी/3 जैसे साक्ष्यों के अनुसार पाण्डू के चारों पुत्रों के बीच संपत्ति का विभाजन किया गया है ?

(सुविधा के लिए इसमें इसके पश्चात् पक्षकारों को उस हैसियत से नामित किया गया है जिससे उन्हें विचारण न्यायालय के समक्ष नामित किया गया था ।)

2. ग्राम कालिया, तहसील बगीचा, जिला जाशपुर में स्थित वाद संपत्ति, जिसे वाद की अनुसूची-ए में दर्शाया गया है, मूल रूप से पाण्डू के पास थी । पाण्डू के 4 पुत्र थे जिनके नाम पादरा, लल्लू, चोटो और चिलबिलो हैं । मूल वादी चिलबिलो की पुत्रियां हैं । चिलबिलो का कोई पुत्र नहीं है और प्रतिवादी पादरा के पुत्र हैं जिनके नाम लल्लू और चोटो हैं । चिलबिलो की मृत्यु वर्ष 1989 में हो गई थी और वादी उसकी पुत्रियां होने के नाते विधिक वारिस हैं क्योंकि चिलबिलो का कोई पुत्र नहीं है । जूली चिलबिलो की पूत्री है । वादियों का यह पक्षकथन है कि जूली को घरजिया के रूप में रखा गया था और उसके पति को उसके पिता चिलबिलो द्वारा घर जमाई की हैसियत से रखा गया था । वादियों का यह भी पक्षकथन है कि उनके पिता चिलबिलो की मृत्यु के पश्चात् वाद संपत्ति उनके नाम में अभिलिखित की गई है किन्तु प्रतिवादियों ने, जो उनके पिता के भाई के पुत्र हैं, राजस्व अधिकारी से मिलीभगत करके

राजस्व अभिलेख में अपने नाम अभिलिखित कराए हैं और उन्होंने बलपूर्वक वाद-संपत्ति का कब्जा प्राप्त किया है, इस प्रकार वे स्वामित्व की घोषणा और स्थायी व्यादेश के हकदार हैं ।

3. प्रतिवादी सं. 1 से 7 ने वाद में किए गए अभिकथनों से इनकार करते हुए लिखित कथन फाइल किया है और यह अभिवाक् किया है कि यह संपत्ति वादियों के पूर्वजों के पास थी और प्रतिवादी पाण्डू और उसके साथी पक्षकार उरांव जाति के हैं और उनके अपने अलग रीति-रिवाज हैं जिनके अनुसार विवाहित पुत्रियां पिता की संपत्ति में हकदार नहीं हो सकती और इस संपत्ति का बंटवारा चारों भाइयों में कभी नहीं किया गया है और इस प्रकार विवाहित पुत्रियां होने के नाते वादियों का उक्त संपत्ति में कोई अधिकार नहीं है ।

4. विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया है कि वाद-संपत्ति वादियों और प्रतिवादियों के पितामह (दादा) पाण्डू द्वारा अर्जित की गई थी और वे जनजाति से संबंधित हैं जिनकी जाति का नाम उरांव है और इस जाति में विवाहित पुत्रियां अपने पिता की संपत्ति में भागीदार नहीं होती हैं और यह साबित नहीं किया गया है कि जूली चिलबिलो की घरजिया पुत्री है, अत: विचारण न्यायालय ने वाद खारिज कर दिया और इस आदेश की पुष्टि प्रथम अपील न्यायालय द्वारा भी की गई और प्रथम अपील न्यायालय के इस आदेश के विरुद्ध द्वितीय अपील प्रस्तुत की गई है जिसमें सारभूत प्रश्न विरचित किए गए हैं जिनका उल्लेख निर्णय के आरंभ में ही किया गया है ।

5. इस मामले में के अपीलार्थियों अर्थात् पिछले मामले में के वादियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री ऋषि महोविया ने यह दलील दी है कि निचले दोनों न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करने में त्रुटि की है कि उरांव जाति में विवाहित पुत्रियों को उनके पिता की संपत्ति में हिस्सा नहीं मिलता है किन्तु विधिमान्य रीति-रिवाज और इस जाति में उसका विधिमान्य रूप से निरंतर बने रहना, संतोषजनक रूप से साबित नहीं किया गया है । इन्दरलाल (अभि. सा. 1) द्वारा की गई मात्र अभिकथित अभिस्वीकृति के आधार पर वाद खारिज किया गया

है जो कि पूर्णतया अनुचित है । ऐसे रीति-रिवाज का अभी तक उस जाति में बने रहना प्रतिवादियों द्वारा साबित नहीं किया गया है कि विवाहित पुत्रियों को उनके पिता की संपत्ति में हिस्सा नहीं मिलता और इस संबंध में निकाला गया निष्कर्ष अनुचित है तथा अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के प्रतिकूल है । श्री महोविया ने यह भी दलील दी है कि रीति-रिवाज का तथ्य सिद्ध किया जाना चाहिए और यह भी दलील दी है कि रीति-रिवाज को स्वीकार नहीं किया गया है और निचले न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करने में त्रुटि की है कि वादी विवाहित पुत्रियां होने के नाते अपने पिता की संपत्ति में विरासत के रूप में हिस्सा पाने की हकदार नहीं हैं, अत: अपील मंजूर करते हुए उक्त निष्कर्ष अपास्त किया जाना चाहिए ।

6. प्रतिवादी जो इस मामले में प्रत्यर्थी सं. 1 से 7 हैं, की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री जे. के. सक्सेना ने यह दलील दी है कि कोई भी पक्षकार साक्षी कठघरे में नहीं आया है और इन्दर लाल (अभि. सा. 1) जो मुख्तारनामा धारक है । वादी की ओर से तथ्यों के संबंध में अभिसाक्ष्य नहीं दे सकता और विद्वान् काउंसेल ने **जानकी वसुदेव भोजवानी और एक अन्य** बनाम **इंडसिंड बैंक लिमिटेड और अन्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लिया है । अत: वादियों की ओर से विधिमान्य साक्ष्य के अभाव में यह वाद ठीक ही खारिज किया गया है । वैसे भी इन्दर लाल (अभि. सा. 1) ने स्वयं ही यह स्वीकार किया है कि उरांव जाति में, जो कि पक्षकारों की जाति है, पुत्रियों को उनके पिता की संपत्ति में हिस्सा नहीं मिलता । इस प्रकार, निचले दोनों न्यायालयों ने यह ठीक ही अभिनिर्धारित किया है कि वादी विवाहित पुत्रियां होने के नाते अपने पिता की संपत्ति को विरासत में पाने की हकदार नहीं हैं ।

7. मैंने पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों को सुना है और उनके परस्पर विरोधी दलीलों, जिनका ऊपर उल्लेख किया गया है, पर विचार किया है और संपूर्ण अभिलेख का परिशीलन भी किया है ।

8. यह विवादित नहीं है कि पक्षकार आदिवासी जनजाति से हैं

---

[1] (2005) एस. ए. आर. (सिविल) 103.

जिसका नाम उरांव है और उनको उनके रीति-रिवाज लागू होते हैं और यही निचले न्यायालयों द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है ।

9. वादियों के पिता चिलबिलो और प्रतिवादियों के पिता पतरू, लल्लू और चोटो, भाई-भाई हैं और वादियों के पिता की मृत्यु के पश्चात् वादियों ने अपने पिता चिलबिलो की संपत्ति विरासत में प्राप्त की है जबकि वे चिलबिलो की विवाहित पुत्रियां हैं और चिलबिलो का कोई भी पुत्र नहीं है । प्रतिवादियों ने यह अभिवाक् किया है कि विवाहित पुत्रियों को अपने पिता की संपत्ति में हिस्सा नहीं मिलता है ।

10. विचार के लिए यह प्रश्न सामने आता है कि क्या निचले दोनों न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करने में न्यायोचित किया है कि उरांव जाति में विवाहित पुत्रियां अपने पिता की संपत्ति विरासत में पाने की हकदार नहीं हैं और इसीलिए वे डिक्री की भी हकदार नहीं हैं ?

11. हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 (1956 का 30) (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में "अधिनियम, 1956" कहा गया है) की धारा 2(2) निम्न प्रकार है :–

> "धारा 2. **अधिनियम का लागू होना** - (1) XXX XXX
>
> (2) उपधारा (1) में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, इस अधिनियम में अन्तर्विष्ट कोई भी बात किसी ऐसी जनजाति के सदस्यों को, जो संविधान के अनुच्छेद 366 के खंड (25) के अर्थ के अन्तर्गत अनुसूचित जनजाति हो, लागू न होगी जब तक कि केन्द्रीय सरकार शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा अन्यथा निर्दिष्ट न कर दे ।"

12. अनुसूचित जनजाति की सूची, मध्य प्रदेश पुनर्गठन अधिनियम, 2000 की धारा 20 के अन्तर्गत तारीख 1 नवंबर, 2000 से संशोधित संविधान (अनुसूचित जनजाति) आदेश, 1950 में अन्तर्विष्ट है जिसके अधीन यह उपबंधित है कि नियुक्त किए गए दिन और उसके पश्चात् से संविधान (अनुसूचित जनजाति) आदेश, 1950 संशोधित प्रभावी रहेगा जैसाकि चौथी अनुसूची में निदेश दिया गया है । जिस उरांव जाति से पक्षकारों का संबंध है उसे उपरोक्त आदेश में छत्तीसगढ़

से संबंधित प्रविष्टि सं. 33 में दर्ज किया गया है । इस प्रकार उरांव, भारत के राष्ट्रपति के संविधान (अनुसूचित जनजाति) आदेश, 1950 के अनुसार अधिसूचित भारत के संविधान के अर्थान्तर्गत एक अनुसूचित जनजाति है और यह जाति संविधान के अनुच्छेद 366(25) के अन्तर्गत भी एक अनुसूचित जनजाति है । इस प्रकार, अधिनियम, 1956 अनुसूचित जनजाति के सदस्यों को उस सीमा तक लागू नहीं होता है क्योंकि अधिनियम, 1956 की धारा (2) सर्वोपरि खंड है और विधानमंडल द्वारा अनुसूचित जनजाति की रूढ़िजन्य विधि (रीति-रिवाज संबंधी विधि) को ही परिरक्षित रखा गया है ।

13. उच्चतम न्यायालय ने **मधु किश्वर और अन्य** बनाम **बिहार राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में अधिनियम, 1956 की धारा 2 की उपधारा (2) पर विचार करते हुए निम्न अभिनिर्धारित किया है :–

> "4. ... इस प्रकार न तो हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम और न भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम और न ही शरियत विधि रूढ़िजन्य जनजातियों को लागू नहीं होते हैं । रीति-रिवाज एक समुदाय से दूसरे समुदाय तथा एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में भिन्न-भिन्न पाए जाते हैं ।"

14. इस प्रकार यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के उपबंध इन पक्षकारों को लागू नहीं होंगे क्योंकि ये भारत के संविधान के अनुच्छेद 366(25) के अर्थान्तर्गत उरांव नामक अनुसूचित जनजाति के लोग हैं और केन्द्र सरकार इससे अन्यथा के लिए या हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम के उपबंधों के लागू किए जाने हेतु कोई अधिसूचना भी जारी नहीं की है ।

15. अभिलेख से यह स्वीकृत दिखाई देता है कि पक्षकार उरांव जाति से हैं और अधिनियम, 1956 की धारा 2(2) के उपबंध उन पर लागू नहीं होंगे ।

16. आगे विचार के लिए यह प्रश्न है कि क्या वादी अपने पिता की संपत्ति विरासत में प्राप्त करने के हकदार हैं या नहीं जबकि प्रतिवादियों

---

[1] (1996) 5 एस. सी. सी. 125 = ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 1864.

ने यह अभिवाक् किया है कि वे उरांव नामक ऐसे समुदाय से हैं जिसमें पुत्रियां अपने पिता की सम्पत्ति में हिस्सा नहीं दिया जाता । उपरोक्त तथ्य के आलोक में यह साबित करने का भार प्रतिवादियों पर होगा कि पुत्रियां अपने पिता की संपत्ति में हिस्से की हकदार नहीं होती हैं क्योंकि प्रतिवादियों ने ही ऐसा अभिवाक् किया है ।

17. इस संबंध में, **सरस्वती अम्मल** बनाम **जगदम्बल और एक अन्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा किए गए विनिश्चय पर विचार करना उचित होगा जिसमें माननीय न्यायाधीशों ने स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि जो पक्षकार रीति-रिवाज (रूढ़ि) का अवलंब ले रहा है उसे उस रूढ़ि से समानता रखने वाली अपितु उसी रूढ़ि को साबित करना होगा । उच्चतम न्यायालय द्वारा निम्न अभिनिर्धारित किया गया है :–

> "11. अब्दुल हुसैन खां **बनाम** सोमा डेरो (आई. एल. आर. 45 कलकत्ता 450 पी. सी.) वाले मामले में प्रिवी कौंसिल के न्यायाधीशों द्वारा इस मुद्दे पर विचार किया गया है कि पक्षकार को किस प्रकार रूढ़ि साबित करनी चाहिए । यह अभिनिर्धारित किया गया है कि पक्षकार के लिए यह आबद्धकर है कि वह अभिकथित रूढ़ि को साबित करे जिसका अवलंब लेने की ईप्सा करता है और उसे रूढ़ि के सिद्धांत या रूढ़ि से निकाले गए निष्कर्ष को नहीं अपितु पक्षकारों के बीच प्रचलित रूढ़ि को साबित करना होगा जिसे विशिष्ट रूप से उसी मामले पर लागू किया जा सके । यह सुस्थापित है कि रूढ़ि को किसी मिलती-जुलती रूढ़ि के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता । रूढ़ि अनुमानात्मक रूप से नहीं अपितु सोच-समझकर सिद्ध की जानी चाहिए और इसे आस्था के आधार पर सिद्ध नहीं किया जा सकता । सिद्धांत और रूढ़ि प्रतिपक्षता नहीं है और इन्हें मात्र सिद्धांत नहीं कहा जा सकता अपितु यह सदैव वास्तविकता के रूप में स्वीकार की जानी चाहिए और एक रूढ़ि का आंकलन दूसरी रूढ़ि के आधार पर नहीं किया जा सकता । एक समुदाय जो किसी जिला विशेष में रहता है उसका

---

[1] ए. आई. आर. 1953 एस. सी. 201.

कोई विशेष रीति-रिवाज हो सकता है किंतु इस बात से यह अर्थ नहीं लगाया जा सकता कि अन्य किसी जिले में रहने वाला समुदाय का रीति-रिवाज भी ऐसा ही हो ।"

18. **सालिख चंद (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधि** बनाम **सत्य गुप्ता और अन्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने पुन: यह अभिनिर्धारित किया है कि जहां रूढ़ि से यह साबित होता हो कि वह सामान्य विधि से भिन्न है तब यह साबित किया जाना चाहिए कि ऐसी रूढ़ि जनहित के विरुद्ध नहीं है और यह प्राचीन, अपरिवर्तनशील, निरंतर, प्रसिद्ध है और इसे विधान मंडल द्वारा सुव्यक्त रूप से अनदेखा नहीं किया गया है और न ही यह नैतिकता तथा सामाजिक हित के विरुद्ध है । इस मामले में निम्न अभिनिर्धारित किया गया है :–

"21. मुक्का कोने **बनाम** अम्माकुटटी अम्मल [ए. आई. आर. 1928 मद्रास 299 (एफ. बी.)] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है जहां रूढ़ि से यह साबित होता है कि यह रूढ़ि सामान्य विधि से भिन्न है, वहां यह साबित किया जाना चाहिए कि यह जनहित के विरुद्ध नहीं है और यह कि यह रूढ़ि प्राचीन, अपरिवर्तनशील, निरंतर, प्रसिद्ध है और इसे विधान मंडल द्वारा सुव्यक्त रूप से अनदेखा नहीं किया गया है और न ही यह नैतिकता तथा सामाजिक हित के विरुद्ध है ।

22. जो पक्षकार रूढ़ि का अवलंब लेता है उसे साबित करने का भार उसी पक्षकार पर है । एक रूढ़ि को उससे समानता रखने वाली अन्य किसी रूढ़ि के साथ स्वीकार नहीं किया जा सकता । यह अनुमान के आधार पर नहीं अपितु चिन्तनपूर्वक साबित की जानी चाहिए । रूढ़ि को सिद्धांत नहीं अपितु वास्तविकता के रूप में माना जाना चाहिए और एक रूढ़ि का आंकलन अन्य किसी रूढ़ि से प्रभावित होकर नहीं किया जाना चाहिए । यह सुस्थापित विधि है कि किसी रूढ़ि का निर्धारण तर्कणा की समानता के आधार पर नहीं किया जा सकता ।"

---

[1] (2008) 13 एस. सी. सी. 119 = ए. आई. आर. 2019 एस. सी. (सप्ली.) 418.

19. उच्चतम न्यायालय ने **भीमाशय और अन्य** बनाम **श्रीमती जाहनवी** उर्फ **जनव्वा**[1] वाले मामले में निम्न अभिनिर्धारित किया है :–

"12. रूढ़ि की परिभाषा : रूढ़ि सामान्य विधि के साथ भिन्नता रखते हुए एक सुस्थापित प्रथा है ।

रूढ़ि की प्रकृति – सामान्य विधि से भिन्न प्रथा, एक सामान्य, स्थानीय, जनजातीय या पारिवारिक प्रथा हो सकती है ।

स्पष्टीकरण 1 – किसी भी वर्ग विशेष में सामान्य रूप से पाई जाने वाली प्रथा सामान्य रूढ़ि के अंतर्गत आती है ।

स्पष्टीकरण 2 – एक प्रथा जो किसी क्षेत्र, जनजाति, संप्रदाय या परिवार को लागू होती है, विशेष रूढ़ि कहलाती है ।

रूढ़ि, किसी सारभूत विधि पर प्रभावी नहीं हो सकती ।

(1) रूढ़ि में सामान्य स्वविधि को संशोधित करने का प्रभाव होता है किन्तु यह कानूनी उपबंधों को तब तक प्रभावित नहीं करता है जब तक कि अन्यथा स्पष्ट न कर दिया जाए ।

(2) ऐसी प्रथा प्राचीन, समरूप, निश्चित, शांतिपूर्ण, निरंतर और अनिवार्य होनी चाहिए ।

अविधिमान्य प्रथा - कोई प्रथा मान्य नहीं है, यदि वह अवैध, अनैतिक, अनुचित या लोक नीति के विरुद्ध है ।

प्रथा का अभिवाक् और सबूत – (1) वह व्यक्ति जो रूढ़ि को सामान्य विधि से भिन्न मानता है, उसे इस भिन्नता को साबित करना होगा ।

(2) रूढ़ि को स्पष्ट और असंदिग्ध साक्ष्य द्वारा सिद्ध किया जाना चाहिए । (सर एच. एस. गौर द्वारा लिखित पुस्तक हिन्दू संहिता, जिल्द I, पांचवां संस्करण देखिए)

13. रूढ़ि प्राचीन, निश्चित और युक्तियुक्त होनी चाहिए जैसा कि आम तौर पर माना जाता है । यह देखना होगा कि अधिनियम

---

[1] (2006) 13 एस. सी. सी. 627 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2006 एस. सी. 355.

की धारा 3 का खंड (क) में 'प्राचीन' अभिव्यक्ति का उपयोग नहीं किया गया है किन्तु इसका उद्देश्य लंबे समय तक प्रथा या प्रथा का पालन करना ही रहा है । अंग्रेजी नियम यह है कि किसी प्रथा या रूढ़ि को विधिक और आबद्धकारी बनाने के लिए यह आवश्यक है कि वह प्रथा इतने लंबे समय तक चली हो कि उसे भुलाया न जा सके और विधि ऐसी नहीं होनी चाहिए जिसे भारतीय परिस्थितियों में बलपूर्वक लागू किया जाए । यह साबित करने के लिए केवल इतना ही आवश्यक है कि प्रथा या रूढ़ि को इतनी लंबी अवधि के लिए और ऐसी अपरिवर्तनीयता और निरंतरता के साथ व्यवहार में लाया गया है ताकि यह साबित किया जा सके कि इस रूढ़ि को आम सहमति से उस क्षेत्र, समुदाय, गौत्र और कुटुम्ब में लागू विधि के अनुसरण में माना गया है । ये निश्चितता और तर्कशीलता नियम के अनिवार्य तत्व हैं । इस प्रश्न के निर्धारण के लिए कि प्रथा वैध है कि नहीं, इस बात पर बल दिया गया है कि प्रथा लोक नीति के विरुद्ध नहीं होनी चाहिए ।"

20. **रतनलाल** उर्फ **बाबूलाल चुन्नीलाल समुस्का** बनाम **सुन्दराबाई गोवर्धनदास समुस्का**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने विधिमान्य रूढ़ि सिद्ध करने के लिए आवश्यक अवयवों को स्पष्ट करते हुए यह अभिनिर्धारित किया है :–

"13. अधिनियम की धारा 2(क) के अधीन निर्धारित विधि के अनुसार वैध रूढ़ि को सिद्ध करने के लिए ये तत्व आवश्यक हैं – (क) निरंतरता (ख) निश्चितता और (ग) दीर्घकालिक प्रचलन और (घ) युक्तियुक्तत: । रीति-रिवाजों के रूप में जब सामान्य विधि से भिन्न होकर अभिवाक् किया जाता है तब उन्हें भली-भांति साबित किया जाना चाहिए । आम तौर पर एक धारणा है कि विधि प्रबल है और जब प्रथा का अभिवाक् इस सामान्य उपधारणा के विरुद्ध होता है तब जो भी किसी प्रथा का अस्तित्व का दावा करेगा तो उसे स्पष्ट और असंदिग्ध रीति में वह दावा इस प्रकार साबित करना होगा कि न्यायालय का समाधान हो जाए । यह उल्लेखनीय

[1] ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 5797.

है कि कई प्रकार के रीति-रिवाज हैं जिनमें कुछ इस प्रकार हैं – सामान्य रूढ़ि, स्थानीय प्रथा और जनजातीय प्रथा आदि और इन्हें साबित करने का भार उस प्रथा की प्रकृति और उसके प्रचलन के विस्तार पर निर्भर है । यह दर्शित किया जाना चाहिए कि अभिकथित रूढ़ि एक वास्तविक प्रथा है अर्थात् वह प्रथा स्वेच्छया विधि के बल के साथ स्वीकार की जानी चाहिए और उसे मात्र प्रचलन नहीं कहना चाहिए । रूढ़िजन्य विधि को सिद्ध करने के लिए आवश्यक कृत्य बारंबार, समरूप और निरंतर होना चाहिए ।

14. रूढ़ि आचरण से उद्भूत होती है इसलिए न्यायालय द्वारा मात्र सुव्यक्त स्वीकृति के आधार पर रूढ़ि की विधिमान्यता का आंकलन करना त्रुटिपूर्ण होगा । प्रथाओं के बहुमत का मुख्य लक्षण यह है कि इनकी उत्पत्ति निर्विवादित होती है । प्रथाएं लोगों के अधिकारों के विवादों के समायोजन से उद्भूत नहीं होती हैं अपितु इनका जन्म समाज की सुविधाओं के आधार पर होता है । किसी रूढ़ि को प्रमाणित करने वाला न्यायिक विनिश्चय सुसंगत हो सकता है किन्तु ऐसा विनिश्चय रूढ़ि के स्थापन के लिए परमावश्यक नहीं है । जब कोई रूढ़ि न्यायालय द्वारा सिद्ध की जाती है तब यह देखना सुसंगत होगा कि उच्चतर न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में भी उस रूढ़ि की विद्यमानता को लेकर यह समाधान होना चाहिए कि उस क्षेत्र के व्यक्तियों और वर्गों में सामान्य परिस्थितियों में ऐसी ही प्रथा का प्रचलन है । वर्तमान मामले में ऐसा कोई अभिवाक् नहीं किया गया है जिससे उपरोक्त मानक विनिश्चित किए जा सके ।

21. **मधु किश्वर** (उपरोक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने छोटा नागपुर किराया अधिनियम (छोटा नागपुर टेनेंसी ऐक्ट) की धारा 7, 8 और 76 की सांविधानिक विधिमान्यता पर विचार किया है । यह प्रतिवाद किया गया कि रूढ़िजन्य विधि से, जिसके अन्तर्गत जनजातीय महिलाओं को विरासत में संपत्ति पाने से अपवर्जित किया गया है, भारत के संविधान के अनुच्छेद 14, 15 और 21 का अतिक्रमण होता है और यह अधिकारातीत है । उच्चतम न्यायालय ने अपने बहुत-से निर्णयों द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 की

कसौटी पर उक्त अधिनियमिति के उपबंधों को अपास्त किए जाने से रोका है यद्यपि पुरुषों के मामले में उत्तराधिकार का एकमात्र अधिकार उक्त अधिनियम की धारा 7 और 8 में अन्तर्विष्ट है जिसे उस समय तक निलंबित रखा गया है जब तक विरासत की संपत्ति रखने वाले अंतिम पुरुष की महिला वंशज की जीविका का अधिकार विधिमान्य बना रहता है या प्रचलन में रहता है । **मधु किश्वर** (उपरोक्त) वाले मामले का अधिकांश भाग न्यायिक हस्तक्षेप को रोकने के संबंध में है जो निम्न प्रकार है :–

> "48. संवेदनशीन जनजातीय लोगों द्वारा अपने स्वयं के रीति-रिवाजों, परंपराओं और प्रथाओं को महत्व देने वाले इन विभाजनों और स्पष्ट दुविधाओं को देखते हुए, न्यायिक रूप से दुसरों पर लागू होने वाले व्यक्तिगत कानूनों के सिद्धांतों को एक अभिजात्य दृष्टिकोण या सामानता के सिद्धांत पर लागू करना अत्यंत कठिन कार्य है । ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे विद्वान् भ्राता न्यायमूर्ति के. रामास्वामी ने यह मत व्यक्त किया है कि भारतीय विधान मंडल (और सरकारें भी) राजनीतिक कारणों से इस दिशा में सक्रिय होना नहीं चाहेगा और इस स्थिति में एक कार्यकर्ता न्यायालय, जैसा कि यह स्पष्ट रूप से अराजनीतिक है, कार्यवाही कर सकती है और याचियों द्वारा अपने लिखित निवेदनों में दिए गए सुझावों के अनुसार मोटे तौर पर विधि की रचना करें । इसका परिणाम कितना भी प्रशंसनीय, वांछनीय और आकर्षक क्यों न लगे यह हमारे भ्राता द्वारा सहर्ष देखा गया है कि एक सक्रिय न्यायालय विधायी विषय के विवरण और पेचीदगियों से निपटने के लिए पूरी तरह संपन्न नहीं है किंतु राज्य की राजनीति पर अच्छी सलाह दे सकता है और उस पर ध्यान केंद्रित कर सकता है तथा राज्य को नींद से जगा सकता है ताकि वह अपने लक्ष्य पर पहुंच सके। न्यायालय की जो भी चिंता हो उसका अनिवार्य रूप से समाधान किया जाना चाहिए और कभी-कभी न्यायालय को अपनी आत्मगति पर भी संयम रखना चाहिए जिसे न्यायिक भाषा में आत्मसंयम के रूप में वर्णित किया जाता है। इसलिए हम अपने भ्राता न्यायमूर्ति के. रामास्वामी से सहमत हैं, जैसा कि निर्णय के पृष्ठ 36 पर

व्यक्त किया गया है, इन परिस्थितियों में जनजातीय निवासियों के रीति-रिवाजों को अनुच्छेद 14,15 और 21 के आधार पर अपमानजनक घोषित करना वांछनीय नहीं है और प्रत्येक मामले पर उसके तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए ही विचार किया जाना चाहिए ।"

22. उच्चतम न्यायालय ने **इंडियन यंग लॉयर्स एसोसिएशन और अन्य** बनाम **केरल राज्य और अन्य**[1] (जिसे सबरीमाला मंदिर वाला मामला भी कहा जाता है) वाले मामले में निम्न अभिनिर्धारित किया गया है :–

"276(99). रूढ़ि, प्रथाओं और स्वीय विधि का लोगों की नागरिक स्थिति पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है । वे गतिविधियां जो स्वाभाविक रूप से व्यक्तियों की नागरिक स्थिति से जुड़ी हैं, उन्हें संवैधानिक प्रतिरक्षा केवल इसलिए नहीं दी जा सकती है कि उसमें कुछ साहचर्य विशेषताएं हो सकती हैं जो धार्मिक प्रकृति की हैं । उनकी संवैधानिक जांच न करना, संविधान की प्रधानता को नकारना है ।

हमारा संविधान सामाजिक परिवर्तन दर्शाता है । यह अतीत से ही पृथक्करण का प्रतीक है – जो व्यक्ति की गरिमा के विनाशकारी सामाजिक पूर्वाग्रहों, रूढ़िवादिता, अधीनता और भेदभाव पर आधारित एक गहरे विभाजित समाज की विशेषता है । यह ऐसे भविष्य की बात करता है जो वास्तव में मुक्तिदायक प्रकृति का है । दक्षिण-अफ्रीकी संविधान की परिवर्तन कारी दृष्टि के संदर्भ में यह देखा गया है कि ऐसी दृष्टि –

'समतावादी रेखाओं के साथ पुनर्वितरण सहित राज्य और समाज के पुनर्निर्माण की आवश्यकता है। इस परिवर्तन परियोजना के भीतर समानता प्राप्त करने की चुनौती में जाति, लिंग, वर्ग और असमानता के अन्य आधारों पर प्रभुत्व और भौतिक नुकसान का प्रणालीगत उन्मूलन सम्मिलित है।

[1] ए. आई. आर. 2018 एस. सी. (सप्ली.) 1650.

यह उन अवसरों के उपलब्ध कराए जाने पर भी बल देता है जो लोगों को सकारात्मक सामाजिक संबंधों के भीतर अपनी पूर्ण माननीय क्षमता का एहसास कराते हैं ...।'

23. हाल ही में मुम्बई उच्च न्यायालय ने **बाबूलाल बापू राव कोडापे और एक अन्य** बनाम **साउ रेशमाबाई नारायनराव कौरती और एक अन्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि यदि कोई जनजातीय महिला जो नैसर्गिक विधिक वारिस है, अपने पिता या माता की संपत्ति में समान हिस्सा लेने की ईप्सा करती है, तब न्यायालय के लिए यह अनुज्ञेय नहीं होगा कि वह यह उपधारित करे कि रूढ़िजन्य विधि के अधीन, जो जनजाति को लागू होती है, महिलाओं को विरासत की संपत्ति से अपवर्जित किया गया है और इसके पश्चात् यह कि जनजातीय महिला को अभिवाक् द्वारा इस संबंध में रूढ़ि साबित करनी चाहिए कि उसे इस प्रकार अपवर्जित नहीं किया जा सकता । यह साबित करने का भार उस व्यक्ति पर होगा जो रूढ़िजन्य विधि के अधीन विरासत से इस प्रकार वर्जित किए जाने का अभिवाक् करता है । ऐसा दृष्टिकोण न्याय, समता और शुद्ध अन्त:करण के सिद्धांत के अनुसरण में अपनाया जाएगा । यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 101 और 103 के उपबंधों की कसौटी पर भी वादी से यह अपेक्षा नहीं की जाती है कि वे यह साबित करें कि उन्हें विरासत से अपवर्जित नहीं किया जा सकता । यह साबित करने का भार प्रतिवादियों पर है कि महिलाओं को रूढ़िजन्य विधि के अधीन विरासत से अपवर्जित किया गया है । यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि वादियों पर यह साबित करने का कोई भार नहीं है कि उरांव समुदाय की जाति को लागू होने वाली रूढ़िजन्य विधि के अधीन महिलाओं को विरासत से अपवर्जित नहीं किया गया है और यह कि इस अपवर्जन को साबित करने का भार उन्हीं प्रतिवादियों पर है जिन्होंने अपनी प्रतिरक्षा में ऐसा अभिवाक् किया है ।

24. उच्चतम न्यायालय ने **मोहम्मद बातर और अन्य** बनाम

---

[1] ए. आई. आर. 2019 मुम्बई 94.

नईमुन निसा बीबी और अन्य[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि सामान्य विधि के प्रतिकूल किसी रूढ़ि को साबित करने का भार उस पक्षकार पर होता है जो उसका लाभ लेने की ईप्सा करता है, अपीलार्थी तर्कसम्मत और स्पष्ट साक्षी द्वारा यह सिद्ध करने के लिए आबद्ध है कि जिस रूढ़ि का वे अभिवाक् कर रहे हैं वह पहले से विद्यमान है ।

25. वर्तमान मामले के तथ्यों पर उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के आलोक में विचार करने पर यह पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि वाद संपत्ति मूल रूप से पाण्डू के पास थी जिसके चार पुत्र अर्थात् पादरा, लल्लू, चोटो और चिलबिलो हैं और चूंकि वादी चिलबिलो की पुत्रियां हैं और चिलबिलो का कोई पुत्र नहीं है तथा प्रतिवादी चिलबिलो के तीन अन्य भाईयों के पुत्र हैं । निचले दोनों न्यायालयों ने स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि वाद संपत्ति पाण्डू के पास है जिस पर उसके पुत्रों का उत्तराधिकार होगा किन्तु इस आधार पर वादियों के पक्ष में डिक्री मंजूर करने से इनकार कर दिया कि वादी यद्यपि चिलबिलो की पुत्रियां हैं किन्तु वे विवाहित हैं और उरांव जाति में जो रूढ़ि प्रचलित है उसके अनुसार विवाहित पुत्रियों को अपने पिता की संपत्ति में हिस्सा नहीं दिया जाता । उक्त तथ्य को सिद्ध करने के लिए प्रतिवादियों से यह साबित करने की ईप्सा की गई कि उरांव जाति में विवाहित पुत्रियों को उनके पिता की संपत्ति विरासत में पाने से अपवर्जित किया गया है और यह कि उन्हें पिता की संपत्ति का कोई भी हिस्सा नहीं मिलेगा । साक्ष्य अधिनियम की धारा 101 से 103 के उपबंधों की कसौटी पर भी प्रतिवादियों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे यह साबित करें कि विवाहित पुत्रियों को विरासत की संपत्ति से अपवर्जित किया गया है । जब एक बार वादी यह साबित कर देते हैं कि संपत्ति उनके पिता की है, वे अपने पिता के नैसर्गिक वारिस होने के आधार पर, भले ही वे विवाहित पुत्रियां हैं, वाद संपत्ति विरासत में पाने की हकदार हैं परंतु ऐसा तब हो सकता है जब प्रतिवादी उस रूढ़िजन्य विधि को साबित करने में असफल रहते हैं जो उनके समुदाय को लागू

---

[1] ए. आई. आर. 1956 एस. सी. 548.

होती है और जिसके अनुसार विवाहित पुत्रियों को विरासत की संपत्ति से अपवर्जित किया गया है ।

26. अब प्रश्न यह सामने आता है कि क्या वर्तमान मामले में उन प्रतिवादियों द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत किया गया है जिन्होंने यह प्रतिरक्षा ली है कि विवाहित पुत्रियां इन संपत्ति में हिस्सा प्राप्त नहीं कर सकती ?

27. विचारण न्यायालय ने इन्दर लाल (अभि. सा. 1) के साक्ष्य का अवलंब लिया है जिसकी परीक्षा वादियों की ओर से कराई गई है । इस साक्षी ने पैरा 5 में यह कथन किया है कि उनके परिवार में पुत्रियों को उनके पिता की संपत्ति में हिस्सा नहीं दिया जाता है । किन्तु विचारण न्यायालय ने उक्त साक्षी के कथन की अंतिम पंक्ति को अनदेखा करते हुए यह मत व्यक्त किया कि यदि पिता का कोई पुत्र नहीं है, तब पुत्री को संपत्ति में हिस्सा दिया जाएगा । इससे अन्यथा भी प्रतिवादियों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे अभिलेख पर यह सिद्ध करने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करें कि उरांव जाति में विवाहित पुत्रियों को उनके पिता की संपत्ति में हिस्सा नहीं दिया जाता । यह उपधारित नहीं किया जा सकता कि इस समुदाय को लागू होने वाली रूढ़िजन्य विधि के अन्तर्गत महिलाओं को उनके पिता की संपत्ति विरासत में पाने से अपवर्जित किया गया है । इन्दर लाल (अभि. सा. 1) द्वारा स्वीकार किए जाने के आधार पर रूढ़ि को साबित किया गया नहीं माना जा सकता ।

28. **दहियाभाई मोतीराम भट और अन्य** बनाम **चुन्नीलाल किशोरदास पाण्डेय और अन्य**[1] वाले मामले में मुम्बई उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि स्वीकार किए जाने के आधार पर रूढ़ि को साबित नहीं किया जा सकता और निम्न प्रकार अभिनिर्धारित किया गया है :–

> "पहली बार में भी साक्ष्य द्वारा रूढ़ि साबित की जानी चाहिए और जब एक बात यह साबित हो जाती है तब न्यायालय इसकी विद्यमानता को स्वीकार करने के हकदार हैं । न्यायालय के समक्ष

[1] ए. आई. आर. 1914 मुम्बई 120.

पक्षकारों या उनके काउंसेलों द्वारा स्वीकार किए जाने से कोई रूढ़ि साबित नहीं हो सकती ।"

29. इसी प्रकार इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने **महादेव और अन्य** बनाम **बालेश्वर प्रसाद और अन्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि किसी रूढ़ि पर विचार करते समय संपूर्ण साक्ष्य के संचयी प्रभाव का परिशीलन किया जाना चाहिए । यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि रूढ़ि के प्रश्न से संबंधित साक्ष्य पर विचार पूर्ण रूप से किया जाना चाहिए और संपूर्ण साक्ष्य का संचयी रूप से परिशीलन करने पर भी किसी निष्कर्ष पर पहुंचना चाहिए ।

30. **हसन भट** बनाम **गुलाम अहमद खाण्डे और अन्य**[2] वाले मामले में विरासत को लेकर रूढ़ि के मुद्दे पर विचार करते समय उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि रूढ़ि सबूत का विषय है । रूढ़ि को उपधारणा या अनुमान के आधार पर सिद्ध नहीं किया जा सकता । इसे तर्कसम्मत साक्ष्य के आधार पर सिद्ध किया जाना चाहिए जिससे यह पता चलता हो कि यह रूढ़ि युक्तियुक्त और प्राचीन है जो निरंतर बनी हुई है ।

31. ऊपर कथित विश्लेषण को दृष्टिगत करते हुए इस न्यायालय की सुविचारित राय में निचले दोनों न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करने में न्यायोचित नहीं किया है कि यद्यपि वादी चिलबिलो की विधिक वारिस हैं और उनका पाण्डू के अन्य पुत्रों के साथ इस संपत्ति पर उत्तराधिकार है किंतु वे मात्र इस आधार पर इस संपत्ति में हिस्सा प्राप्त नहीं कर सकतीं कि वे विवाहित हैं बल्कि वहां प्रचलित रूढ़ि भी विवाहित पुत्रियों को विरासत की संपत्ति से अपवर्जित करती है, परिणामस्वरूप इस निष्कर्ष से संबंधित निचले दोनों न्यायालयों के निर्णय और डिक्री अनुचित होने के कारण अपास्त किए जाने चाहिएं, अत: अपास्त किए जाते हैं ।

---

[1] ए. आई. आर. 1939 इलाहाबाद 626.

[2] (2005) सप्ली. जे. के. जे. 251.

32. प्रतिवादियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री सक्सेना ने **जानकी वासुदेव भोजवाणी** (उपरोक्त) जो मुख्तारनामा धारक है, से संबंधित एक विनिश्चय उद्धृत किया है जिसमें यह मत व्यक्त किया गया है कि मुख्तारनामा धारक व्यक्ति मूल वादी की ओर से अभिसाक्ष्य नहीं दे सकता जो कि सुस्थापित है । किंतु वर्तमान मामले में निचले दोनों न्यायालयों ने समवर्ती रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि यह संपत्ति पाण्डू की है और उसके चार पुत्रों का उस पर उत्तराधिकार है, तथापि, निचले दोनों न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करते हुए वादियों का वाद खारिज कर दिया कि उरांव जाति में विवाहित पुत्रियों को उनके पिता की संपत्ति में हिस्सा नहीं दिया जाता और यह तथ्य साक्ष्य द्वारा सिद्ध नहीं किया गया है । इस प्रकार मूल प्रतिवादियों की परीक्षा न कराए जाने से इस मामले में कोई फर्क नहीं पड़ता है, क्योंकि अभिलेख पर इसे स्वीकार किया गया है और सम्यक् रूप से यह निष्कर्ष अभिलिखित किया गया है कि पाण्डू ने विरासत में संपत्ति प्राप्त की है और वह वादियों के पिता का उत्तराधिकारी है । मामले को इस प्रकार दृष्टिगत करते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया है कि वादी अपने पिता की संपत्ति से संबंधित हक की घोषणा की हकदार हैं और उनके पिता ग्राम कालिया, तहसील बगीचा, जिला जाशपुर में स्थित 29.53 एकड़ क्षेत्रफल वाली कुल संपत्ति के एक चौथाई भाग का स्वामी है । चूंकि विभाजन किए जाने का तथ्य साबित नहीं किया गया है, अत: वादी टायटल की इस घोषणा की हकदार हैं कि पाण्डू के मरणोपरांत बची हुई संपत्ति के एक चौथाई भाग, जिसे चिलबिलो ने विरासत में प्राप्त किया था, की हकदार होंगी ।

33. ऊपर उल्लिखित सीमा तक अपील मंजूर की जाती है । पक्षकार अपना-अपना खर्चा स्वयं वहन करेंगे ।

34. तदनुसार अपील-डिक्री तैयार की जाए ।

अपील भागतः मंजूर की गई ।

अस.

डेली सुबह कश्मीर

बनाम

जम्मू-कश्मीर संघ राज्यक्षेत्र

(2020 की लेटर्स पेटेन्ट अपील सं. 73)

तारीख 13 अगस्त, 2020

न्यायमूर्ति राजेश बिन्दल और न्यायमूर्ति रजनेश ओसवाल

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 – अन्तरिम अनुतोष – वाद संपत्ति के शांतिपूर्ण कब्जे और अधिभोग में हस्तक्षेप करने से रोकने हेतु याची का अभिवाक् – अवैध कब्जे को लेकर याची के विरुद्ध प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करना – याची का वाद संपत्ति पर विधिक अधिभोग साबित करने में असफल रहना – याची वाद संपत्ति पर अपने कब्जे और अधिभोग को साबित करने में असफल रहा है और उसने अपने अवैध कब्जे को वैध बनाने के आशय से मुकदमेबाजी का सहारा लिया है, अतः निचले न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

अपीलार्थी ने 2020 की रिट (सिविल) याचिका सं. 909 में फाइल किए गए सिविल प्रकीर्ण आवेदन सं. 2023/2020 में पारित किए गए तारीख 19 जून, 2020 के उस आदेश को चुनौती दी है जिसके द्वारा अपीलार्थी को यह अंतरिम अनुतोष दिए जाने से इनकार किया गया कि प्रत्यर्थी को पुनर्वास काम्पलेक्स, जहांगीर चौक, श्रीनगर के निकट दुकान सं. 50, 51, 52, 53 का शांतिपूर्ण अधिभोग और कब्जे में कोई हस्तक्षेप करने से रोका जाए । अपील के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी को उपरोक्त दुकानों का कब्जा ई.आर.ए. अर्थात् इकोनोमिक रिकंस्ट्रक्शन एजेंसी द्वारा वर्ष, 2016 में सौंपा गया था किंतु अपीलार्थी के पक्ष में कोई भी औपचारिक आदेश जारी नहीं किया गया । इसके पश्चात् अपीलार्थी ने सिविल वाद फाइल किया । अन्य अनुतोषों के अतिरिक्त अपीलार्थी ने इस संबंध में भी घोषणा कराए जाने की ईप्सा अपीलार्थी उपरोक्त दुकानों के संबंध में समुचित आबंटन आदेश जारी

किए जाने का हकदार है और उसने यह आज्ञापक व्यादेश जारी किए जाने की भी ईप्सा की कि इस मामले में के प्रतिवादियों को यह निदेश दिया जाए कि वे अपीलार्थी के पक्ष में समुचित आबंटन आदेश पारित करें । तथापि, इसके पश्चात् उपरोक्त वाद इस आश्वासन के साथ प्रत्यहृत कर लिया गया कि अपीलार्थी के मामले पर औपचारिक आबंटन को लेकर विचार किया जाएगा । चूंकि अपीलार्थी के दावे पर विचार नहीं किया गया इसलिए वर्तमान रिट याचिका प्रत्यर्थियों को यह निदेश दिए जाने के लिए फाइल की गई है कि वे पुनर्वास काम्पलेक्स, जहांगीर चौक, श्रीनगर में स्थित दुकान सं. 50, 51, 52 और 53 से संबंधित आबंटन आदेश औपचारिक रूप से जारी करें और निषेधाज्ञा जारी किए जाने का निदेश दिया जाए जिसके द्वारा प्रत्यर्थियों को ऊपर उल्लिखित दुकानों से संबंधित याची के शांतिपूर्ण अधिभोग और कब्जे में हस्तक्षेप करने से रोका जा सके । रिट याचिका के साथ अंतरिम अनुतोष का आवेदन भी फाइल किया गया । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने तारीख 19 जून, 2020 के आदेश द्वारा एकपक्षीय रूप में अंतरिम अनुतोष रद्द कर दिया और आक्षेप फाइल करने के लिए मामला आगे भेज दिया और इसके पश्चात् यह आदेश किया कि इस मामले की सुनवाई विरोधी पक्ष द्वारा आक्षेप फाइल किए जाने के पश्चात् की जाएगी । उपरोक्त आदेश को चुनौती देते हुए वर्तमान अपील फाइल की गई है । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह निर्विवादित तथ्य हैं कि अपीलार्थी के पक्ष में कोई भी आबंटन पत्र जारी नहीं किया गया है । अपीलार्थी की ओर से यह दलील दी गई है कि प्रत्यर्थी सं. 10 से 12 द्वारा गंभीर रूप से इस तथ्य पर विवाद किया गया है कि उसे वर्ष 2016 में स्वयं ई.आर.ए. द्वारा कब्जा दिलाया गया था और इस आक्षेप का यह आधार है कि ई.आर.ए. के कार्मिकों ने संबंधित एस.बी.पी.ओ. से संपर्क करके अपीलार्थी के प्रधान संपादक नजीर अहमद वानी के विरुद्ध प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई जिसमें उसके द्वारा दुकानों का बलपूर्वक कब्जा प्राप्त करने की शिकायत की गई और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत किए जाने के पश्चात् इस मामले का विचारण अभी तक लंबित है । उक्त तथ्य पर अपीलार्थी द्वारा

कोई विवाद नहीं किया गया है । इसके अतिरिक्त जम्मू-कश्मीर ई.आर.ए. के प्रोजेक्ट मैनेजर को जम्मू-कश्मीर ई.आर.ए./ जे.टी.एफ.आर.पी. द्वारा लिखी गई संसूचना सं. एस.आर.ई./जे.के./ ई.आर.ए./19/621-624 अपीलार्थी द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत की गई है जिसमें यह उल्लेख किया गया है कि यह सिद्ध करने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि अपीलार्थी को पुनर्वास काम्पलेक्स में रखा गया था और निर्दिष्ट की गई चार दुकानों का आबंटन ड्रा निकालने के पश्चात् चारों प्रतिवादियों को किया गया था । वर्तमान अपील में तारीख 21 जुलाई, 2020 को सुनवाई किए जाने के पश्चात् संयोग से तारीख 23 जुलाई, 2020 को मूल रिट याचिका सं. 60/2018 हम में से एक न्यायमूर्ति रजनेश ओसवाल के समक्ष सुनवाई के लिए सूचीबद्ध की गई । इस याचिका में याची सं. 2 ने यह शिकायत की कि दुकान सं. जी-52 का कब्जा अप्राधिकृत व्यक्तियों को दिया गया है और रिट याचिका की सुनवाई किए जाने के समय यह पता चला कि दुकान सं. 50, 51, 52 और 53 भिन्न व्यक्तियों को आबंटित की गई थी जबकि रिट याचिका के अनुसार दुकान सं. 52 का आबंटन याची के नाम किया गया था । इस प्रकार प्रत्यर्थी सं. 10 से 12 के विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई दलील निराधार प्रतीत होती है । इस प्रक्रम पर अपीलार्थी यह साबित नहीं कर सका है उसे ई.आर.ए. द्वारा चारों दुकानों का कब्जा कब और कैसे दिया गया था । यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी ने चार नामनिर्दिष्ट-बंदियों को ऐसी प्रतिकूल अवस्था में पहुंचाया है कि वे ड्रा में सम्यक् रूप से निकली गई दुकानों को अपने अधिभोग में न ले सकें । अतः, इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा निकाले गए निष्कर्ष में कोई भी ऐसी अवैधता या अनुचितता नहीं है जिससे यह पता चलता हो कि अपीलार्थी ने किसी तरकीब से चारों दुकानों का कब्जा प्राप्त किया है । मात्र इस कारण से कि ई.आर.ए. द्वारा तैयार की गई पुनर्वासियों की सूची में अपीलार्थी का नाम 74वें स्थान पर है, अपीलार्थी की पदास्थिति में कोई भी प्रबलता नहीं आती है । तारीख 26 फरवरी, 2020 को हुई उपखंड स्तरीय समिति की बैठक में अपीलार्थी की ओर से एक अधिवक्ता प्रस्तुत हुआ । उस बैठक में अधिवक्ता ने यह सहमति व्यक्त की कि वह

प्रश्नगत चार दुकानों को खाली कर देगा ताकि उनका आबंटन अधिकारवान व्यक्तियों को किया जा सके । किंतु उन दुकानों को खाली करने के बजाय अपीलार्थी ने रिट याचिका फाइल कर दी । अपीलार्थी ने इस दुविधा से बचने के लिए न्यायालय के समक्ष यह अभिवाक् किया कि उसके काउंसेल ने 26 फरवरी, 2020 को उपखंड स्तरीय समिति के समक्ष दुकाने खाली करने से संबंधित ऐसा कोई कथन नहीं दिया था । अपीलार्थी ने रिट याचिका में भी ऐसा अभिवाक् नहीं किया था और न ही उपखंड स्तरीय समिति के समक्ष बैठक में तय किए गए बिन्दुओं में संशोधन किए जाने हेतु कोई आवेदन किया था । अपीलार्थी द्वारा की गई यह प्रतिक्रिया बाद में आए विचार के सिवाय कुछ नहीं है ताकि विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा निकाले गए निष्कर्ष से बचा जा सके । ऐसा करना अननुज्ञेय है । अपीलार्थी अपील में ऐसा कोई नया मुद्दा नहीं उठा सकता जिसका अभिवाक् उसने निचले न्यायालय के समक्ष न किया हो । अपीलार्थी अभिलेख से ऐसी कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं कर सका है जिससे यह पता चलता हो कि उसके पास संपत्ति का विधिक अधिभोग है । ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलार्थी अवैध अधिभोग को मुकदमेबाजी के माध्यम से विधिपूर्ण बनाने का प्रयास कर रहा है और इस प्रकार अपीलार्थी यह साबित करने में असफल रहा है कि यह न्यायालय उसके अप्राधिकृत अधिभोग को संरक्षित करने के लिए हस्तक्षेप नहीं कर सकता । अपीलार्थी की यह दलील है कि इस बात का भी गलत अर्थ लगाया गया है कि अन्य किराएदारों को न्यायालय द्वारा संरक्षा दी गई थी और समतुल्यता के आधार पर उसके कब्जे को भी संरक्षा दी जानी चाहिए । अभिलेख से यह उपदर्शित नहीं होता है कि अपीलार्थी का पक्षकथन किस आधार पर समतुल्यता के अधीन आता है । समतुल्यता का सिद्धांत केवल तब लागू होगा जब अपीलार्थी का पक्षकथन अन्य किराएदारों के मामले से मेल खाता हो और यही कारण है कि विद्वान् एकल न्यायाधीश ने संबंधित सभी मामलों को अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई रिट याचिका के साथ सूचीबद्ध करने का आदेश किया है । इस प्रकार विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए आदेश में कोई भी अवैधता नहीं है और यह कायम रखा जाता है । (पैरा 7, 8, 9 और 10)

सिविल रिट अधिकारिता : 2020 की लेटर्स पेटेन्ट अपील सं. 73.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका ।

याची की ओर से श्री जहांगीर इकबाल गनई (ज्येष्ठ अधिवक्ता) और सुश्री हुमैरा शफी

प्रत्यर्थी की ओर से श्री एन. ए. शाह (अपर महाधिवक्ता) और मोमिन खान

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति रजनेश ओसवाल ने दिया ।

न्या. ओसवाल – अपीलार्थी ने 2020 की रिट (सिविल) याचिका सं. 909 में फाइल किए गए सिविल प्रकीर्ण आवेदन सं. 2023/2020 में पारित किए गए तारीख 19 जून, 2020 के उस आदेश को चुनौती दी है जिसके द्वारा अपीलार्थी को यह अंतरिम अनुतोष दिए जाने से इनकार किया गया कि प्रत्यर्थी को पुनर्वास काम्पलेक्स, जहांगीर चौक, श्रीनगर के निकट दुकान सं. 50, 51, 52, 53 का शांतिपूर्ण अधिभोग और कब्जे में कोई हस्तक्षेप करने से रोका जाए ।

2. अपील के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी को उपरोक्त दुकानों का कब्जा ई.आर.ए. अर्थात् इकोनोमिक रिकंस्ट्रक्शन एजेंसी द्वारा वर्ष, 2016 में सौंपा गया था किंतु अपीलार्थी के पक्ष में कोई भी औपचारिक आदेश जारी नहीं किया गया । इसके पश्चात् अपीलार्थी ने सिविल वाद फाइल किया । अन्य अनुतोषों के अतिरिक्त अपीलार्थी ने इस संबंध में भी घोषणा कराए जाने की ईप्सा की कि अपीलार्थी उपरोक्त दुकानों के संबंध में समुचित आबंटन आदेश जारी किए जाने का हकदार है और उसने यह आज्ञापक व्यादेश जारी किए जाने की भी ईप्सा की कि इस मामले में के प्रतिवादियों को यह निदेश दिया जाए कि वे अपीलार्थी के पक्ष में समुचित आबंटन आदेश पारित करें । तथापि, इसके पश्चात् उपरोक्त वाद इस आश्वासन के साथ प्रत्याहृत कर लिया गया कि अपीलार्थी के मामले पर औपचारिक आबंटन को लेकर विचार किया जाएगा । चूंकि अपीलार्थी के दावे पर विचार नहीं किया गया इसलिए वर्तमान रिट याचिका प्रत्यर्थियों को यह निदेश दिए

जाने के लिए फाइल की गई है कि वे पुनर्वास काम्पलेक्स, जहांगीर चौक, श्रीनगर में स्थित दुकान सं. 50, 51, 52 और 53 से संबंधित आबंटन आदेश औपचारिक रूप से जारी करें और निषेधाज्ञा जारी किए जाने का निदेश दिया जाए जिसके द्वारा प्रत्यर्थियों को ऊपर उल्लिखित दुकानों से संबंधित याची के शांतिपूर्ण अधिभोग और कब्जे में हस्तक्षेप करने से रोका जा सके । रिट याचिका के साथ अंतरिम अनुतोष का आवेदन भी फाइल किया गया । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने तारीख 19 जून, 2020 के आदेश द्वारा एकपक्षीय रूप में अंतरिम अनुतोष रद्द कर दिया और आक्षेप फाइल करने के लिए मामला आगे भेज दिया और इसके पश्चात् यह आदेश किया कि इस मामले की सुनवाई विरोधी पक्ष द्वारा आक्षेप फाइल किए जाने के पश्चात् की जाएगी । उपरोक्त आदेश को चुनौती देते हुए वर्तमान अपील फाइल की गई है ।

3. अपीलार्थी ने आक्षेपित आदेश को इस आधार पर चुनौती दी है कि विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा निकाला गया यह निष्कर्ष कि अपीलार्थी ने चार दुकानों का कब्जा किसी प्रकार प्राप्त कर लिया है, वास्तव में गलत है क्योंकि अपीलार्थी को यह कब्जा वर्ष 2016 में ही ई.आर.ए. द्वारा दिया गया था । इसके अतिरिक्त अपीलार्थी का नाम कामर्शियल इन्टरप्राइजेज के पुनर्वासकर्ताओं की सूची में क्रम सं. 74 पर आता है और यह सूची ई.आर.ए. द्वारा ही तैयार की गई है । अपीलार्थी ने यह भी अभिवाक् किया है कि इसी प्रकार के मामलों में इस न्यायालय ने अन्य किराएदारों की भी संरक्षा की है और याची का मामला भी ऐसा ही है किंतु विद्वान् एकल न्यायाधीश ने अपीलार्थी के साथ एकरूपता के आधार पर कार्यवाही नहीं की है ।

4. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री जहांगीर इकबाल गनई ने दृढ़तापूर्वक यह दलील दी है कि अपीलार्थी के पास चार दुकानों का कब्जा है और चूंकि अन्य किराएदारों को इस न्यायालय से संरक्षा मिली है, इसी प्रकार एकरूपता के आधार पर अपीलार्थी को भी ऐसी संरक्षा मिलनी चाहिए । विद्वान् काउंसेल द्वारा यह भी दलील दी गई है कि प्रत्यर्थियों द्वारा दिए गए आश्वासन के आधार पर

अपीलार्थियों ने सिविल वाद वापस लिया है और जब प्रत्यर्थी अपने आश्वासन पर कायम नहीं हैं, इसीलिए अपीलार्थी ने विवश होकर रिट याचिका फाइल की है ।

5. इसके प्रतिकूल श्रीनगर नगर निगम की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री मोमिन खान ने दृढ़तापूर्वक यह दलील दी है कि अपीलार्थी अतिचारी है और उसने उक्त दुकानों का अवैध रूप से अधिभोग किया है । उन्होंने यह भी दलील दी है कि फरवरी, 2016 में ई.आर.ए. कश्मीर के प्रोजेक्ट मैनेजर ने एस.डी.पी.ओ. शेरगढ़ी पुलिस थाना हफ्तचिनार में अपीलार्थी के प्रधान संपादक नजीर अहमद वानी के विरुद्ध प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने हेतु संपर्क किया जिसमें यह शिकायत की कि नजीर अहमद वानी ने उक्त दुकानों में अवैध रूप से अतिचार किया है । इस शिकायत के संबंध में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 7/2016 रणबीर दंड संहिता की धारा 448 के अधीन दर्ज की गई और उक्त अपीलार्थी के प्रधान संपादक अर्थात् नजीर अहमद वानी के विरुद्ध वन विभाग मजिस्ट्रेट श्रीनगर के समक्ष चालान भी लंबित है । विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि अपीलार्थी ने न केवल वाद फाइल किया है, जिसे बाद में वापस ले लिया था और जिसके संबंध में रिट याचिका में निर्देश भी संलग्न है, अपितु वर्ष 2016 में भी उसने ऐसा ही वाद फाइल किया था । उस वाद को भी वापस ले लिया था । विद्वान् काउंसेल ने कोविड-19 की महामारी के कारण विस्तृत आक्षेप फाइल न करने से संबंधित अपनी अक्षमता व्यक्त की है किंतु फिर भी उन्होंने दृढ़तापूर्वक यह दलील दी है कि प्रश्नगत दुकानों का आबंटन अन्य व्यक्तियों को किया गया था और अपीलार्थी द्वारा उन पर अवैध रूप से कब्जा किया गया है । इस न्यायालय में जो मुकदमा लंबित है उसमें अधिकारवान आबंटितियों ने इन दुकानों का कब्जा पाने की ईप्सा की है ।

6. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों की सुनवाई की गई है और सुसंगत रूप से निर्दिष्ट किए गए अभिलेख का परिशीलन किया गया है ।

7. यह निर्विवादित तथ्य है कि अपीलार्थी के पक्ष में कोई भी आबंटन पत्र जारी नहीं किया गया है । अपीलार्थी की ओर से यह दलील दी गई है कि प्रत्यर्थी सं. 10 से 12 द्वारा गंभीर रूप से इस तथ्य पर

विवाद किया गया है कि उसे वर्ष 2016 में स्वयं ई.आर.ए. द्वारा कब्जा दिलाया गया था और इस आक्षेप का यह आधार है कि ई.आर.ए. के कार्मिकों ने संबंधित एस.बी.पी.ओ. से संपर्क करके अपीलार्थी के प्रधान संपादक नजीर अहमद वानी के विरुद्ध प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई जिसमें उसके द्वारा दुकानों का बलपूर्वक कब्जा प्राप्त करने की शिकायत की गई और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत किए जाने के पश्चात् इस मामले का विचारण अभी तक लंबित है । उक्त तथ्य पर अपीलार्थी द्वारा कोई विवाद नहीं किया गया है । इसके अतिरिक्त जम्मू-कश्मीर ई.आर.ए. के प्रोजेक्ट मैनेजर को जम्मू-कश्मीर ई.आर.ए./जे.टी.एफ. आर.पी. द्वारा लिखी गई संसूचना सं. एस.आर.ई./जे.के./ई.आर.ए./ 19/621-624 अपीलार्थी द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत की गई है जिसमें यह उल्लेख किया गया है कि यह सिद्ध करने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि अपीलार्थी को पुनर्वास काम्पलेक्स में रखा गया था और निर्दिष्ट की गई चार दुकानों का आबंटन ड्रा निकालने पश्चात् चारों प्रतिवादियों को किया गया था । वर्तमान अपील में तारीख 21 जुलाई, 2020 को सुनवाई किए जाने के पश्चात् संयोग से तारीख 23 जुलाई, 2020 को मूल रिट याचिका सं. 60/2018 हम में से एक न्यायमूर्ति रजनेश ओसवाल के समक्ष सुनवाई के लिए सूचीबद्ध की गई । इस याचिका में याची सं. 2 ने यह शिकायत की कि दुकान सं. जी-52 का कब्जा अप्राधिकृत व्यक्तियों को दिया गया है और रिट याचिका की सुनवाई किए जाने के समय यह पता चला कि दुकान सं. 50, 51, 52 और 53 भिन्न व्यक्तियों को आबंटित की गई थी जबकि रिट याचिका के अनुसार दुकान सं. 52 का आबंटन याची के नाम किया गया था । इस प्रकार प्रत्यर्थी सं. 10 से 12 के विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई दलील निराधार प्रतीत होती है ।

8. इस प्रक्रम पर अपीलार्थी यह साबित नहीं कर सका है उसे ई.आर.ए. द्वारा चारों दुकानों का कब्जा कब और कैसे दिया गया था । यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी ने चार नामनिर्दिष्ट-बंदियों को ऐसी प्रतिकूल अवस्था में पहुंचाया है कि वे ड्रा में सम्यक् रूप से निकाली गई दुकानों को अपने अधिभोग में न ले सकें । अतः, इस न्यायालय का यह

निष्कर्ष है कि विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा निकाले गए निष्कर्ष में कोई भी ऐसी अवैधता या अनुचितता नहीं है जिससे यह पता चलता हो कि अपीलार्थी ने किसी तरकीब से चारों दुकानों का कब्जा प्राप्त किया है । मात्र इस कारण से कि ई.आर.ए. द्वारा तैयार की गई पुनर्वासियों की सूची में अपीलार्थी का नाम 74वें स्थान पर है, अपीलार्थी की पदास्थिति में कोई भी प्रबलता नहीं आती है । तारीख 26 फरवरी, 2020 को हुई उपखंड स्तरीय समिति की बैठक में अपीलार्थी की ओर से एक अधिवक्ता प्रस्तुत हुआ । उस बैठक में अधिवक्ता ने यह सहमति व्यक्त की कि वह प्रश्नगत चार दुकानों को खाली कर देगा ताकि उनका आबंटन अधिकारवान व्यक्तियों को किया जा सके । किंतु उन दुकानों को खाली करने के बजाय अपीलार्थी ने रिट याचिका फाइल कर दी । अपीलार्थी ने इस दुविधा से बचने के लिए न्यायालय के समक्ष यह अभिवाक् किया कि उसके काउंसेल ने 26 फरवरी, 2020 को उपखंड स्तरीय समिति के समक्ष दुकाने खाली करने से संबंधित ऐसा कोई कथन नहीं दिया था । अपीलार्थी ने रिट याचिका में भी ऐसा अभिवाक् नहीं किया था और न ही उपखंड स्तरीय समिति के समक्ष बैठक में तय किए गए बिन्दुओं में संशोधन किए जाने हेतु कोई आवेदन किया था । अपीलार्थी द्वारा की गई यह प्रतिक्रिया बाद में आए विचार के सिवाय कुछ नहीं है ताकि विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा निकाले गए निष्कर्ष से बचा जा सके । ऐसा करना अननुज्ञेय है । अपीलार्थी अपील में ऐसा कोई नया मुद्दा नहीं उठा सकता जिसका अभिवाक् उसने निचले न्यायालय के समक्ष न किया हो ।

9. अपीलार्थी अभिलेख से ऐसी कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं कर सका है जिससे यह पता चलता हो कि उसके पास संपत्ति का विधिक अधिभोग है । ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलार्थी अवैध अधिभोग को मुकदमेबाजी के माध्यम से विधिपूर्ण बनाने का प्रयास कर रहा है और इस प्रकार अपीलार्थी यह साबित करने में असफल रहा है कि यह न्यायालय उसके अप्राधिकृत अधिभोग को संरक्षित करने के लिए हस्तक्षेप नहीं कर सकता ।

10. अपीलार्थी की यह दलील है कि इस बात का भी गलत अर्थ लगाया गया है कि अन्य किराएदारों को न्यायालय द्वारा संरक्षा दी गई थी और समतुल्यता के आधार पर उसके कब्जे को भी संरक्षा दी जानी चाहिए । अभिलेख से यह उपदर्शित नहीं होता है कि अपीलार्थी का पक्षकथन किस आधार पर समतुल्यता के अधीन आता है । समतुल्यता का सिद्धांत केवल तब लागू होगा जब अपीलार्थी का पक्षकथन अन्य किराएदारों के मामले से मेल खाता हो और यही कारण है कि विद्वान् एकल न्यायाधीश ने संबंधित सभी मामलों को अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई रिट याचिका के साथ सूचीबद्ध करने का आदेश किया है । इस प्रकार विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए आदेश में कोई भी अवैधता नहीं है और यह कायम रखा जाता है । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने आक्षेपित निर्णय पारित करते समय संबंधित सभी मामलों को सूचीबद्ध करने का पहले ही निदेश दिया है और यह न्याय हित में होगा कि सुश्री दिलशाद आरा और एक अन्य बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य और अन्य (मूल रिट याचिका सं. 60/2018) को संबंधित सभी मामलों के साथ सूचीबद्ध किया जाए । रजिस्ट्री विभाग को यह निदेश दिया जाता है कि उक्त रिट याचिका को रिट याचिका सं. 909/2020 के साथ सूचीबद्ध किया जाए ।

11. तद्नुसार अपील खारिज की जाती है । तथापि, यह स्पष्ट किया जाता है कि जो कुछ ऊपर व्यक्त किया गया है उसे गुणता के आधार पर व्यक्त किए गए मत के रूप में नहीं माना जाएगा । इस न्यायालय के समक्ष कुछ तथ्य आए हैं और उनके संबंध में न्यायालय को निष्कर्ष अभिलिखित करने पड़े हैं क्योंकि इस मामले में विस्तार से दलीलें दी गई थीं और यदि न्यायालय निष्कर्ष अभिलिखित नहीं करता तो पक्षकार यह आपत्ति कर सकते थे कि उनकी दलीलों पर न्यायालय द्वारा विचार नहीं किया गया है ।

अपील खारिज की गई ।

अस.

सेन्थन प्रोपर्टीज (मैसर्स)

बनाम

मैसर्स एस. वी. एस. इन्फ्रा सर्विसेज प्राइवेट लिमिटेड

(2020 की सिविल पुनरीक्षण याचिका सं. 1173)

तारीख 21 जनवरी, 2021

न्यायमूर्ति पी. अमरनाथ गौड़

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – आदेश 39, नियम 1 और 2क [सपठित संविधान, 1950 का अनुच्छेद 227] – निचले न्यायालय द्वारा पुलिस सहायता उपलब्ध कराने की मंजूरी – जब तक अंतरिम व्यादेश अंतिम नहीं हो जाता तब तक न्यायालय पुलिस सहायता प्रदान नहीं कर सकता क्योंकि जिस पक्षकार के पक्ष में अनंतरिम आदेश मंजूर किया गया है, वह परिस्थिति का अनुचित लाभ ले सकता है और अन्य पक्षकार को असम्यक् हानि पहुंचा सकता है, अतः पुलिस सहायता उपलब्ध कराने संबंधी निचले न्यायालय का निर्णय न्यायोचित नहीं है ।

प्रधान जिला न्यायाधीश, मेदक के न्यायालय में फाइल किए गए मूल वाद सं. 318/2019 में संलग्न अंतरिम आवेदन 1671/2019 में तत्पश्चात् प्रस्तुत अंतरिम आवेदन 430/2020 में तारीख 12 दिसंबर, 2020 को पारित उस आदेश को भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन फाइल किए गए इस सिविल पुनरीक्षण याचिका में चुनौती दी गई है जिसके द्वारा विद्वान् जिला न्यायाधीश ने आवेदक/वादी को पुलिस सहायता प्रदान किए जाने से संबंधित अंतरिम आवेदन सं. 430/2020 मंजूर किया था । इस सिविल पुनरीक्षण याचिका पर विचार किए जाने से संबंधित संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं कि इस मामले में के प्रत्यर्थी ने मूल वाद सं. 318/2019 फाइल किया जिसमें यह कहा गया कि इस मामले में के द्वितीय प्रत्यर्थी ने इस मामले में के आवेदक के प्रोप्राइटर की हैसियत से संपत्ति को 26 करोड़ 86 लाख 50 हजार रुपए में विक्रय

करने का प्रस्ताव रखा जिसका उल्लेख वाद की अनुसूची-क में किया गया है जिसका क्षेत्रफल 4 एकड़ और 39 गुंटा है (जिसे वादपत्र का "अनुसूची संपत्ति" कहा गया है) और तद्नुसार प्रथम प्रत्यर्थी ने द्वितीय प्रत्यर्थी के साथ तारीख 14 मार्च, 2019 को 4,25,00,000/- रुपए का अग्रिम धन के रूप में संदाय करते हुए करार निष्पादित किया जिसमें 22,61,50,000/- रुपए की शेष राशि का संदाय 3 मास के भीतर करने के लिए सहमति व्यक्त की गई । प्रथम प्रत्यर्थी तारीख 15 जून, 2019 तक अपने नाम में संपत्ति का पंजीकरण कराने के लिए शेष विक्रय प्रतिफल के साथ तैयार हो गया । यद्यपि उसके पास 3 मास का समय था और उसने इस संबंध में द्वितीय प्रत्यर्थी को सूचित कर दिया था और उसने निवेदन किया कि संपत्ति का सरकारी सर्वेक्षण और पैमाइश कराई जाए ताकि उसका सीमांकन किया जा सके किंतु यह सब पूरा करने में द्वितीय प्रत्यर्थी असफल रहा । ऐसा करने के बजाय द्वितीय प्रत्यर्थी ने प्रथम प्रत्यर्थी से यह निवेदन किया कि वह कुल भूमि 4 एकड़ 39 गुंटा (अनुसूची-ख वाली संपत्ति) में से 3 एकड़ भूमि क्रय कर ले और इसके लिए वह प्रतिफल के रूप में 16,20,00,000/- रुपए का संदाय करे क्योंकि प्रत्यर्थी दो को धन की अत्यधिक आवश्यकता है और उसने यह वचन दिया कि वह अनुसूची-क वाली संपत्ति का सर्वेक्षण और सीमांकन बाद में कराएगा । प्रथम प्रत्यर्थी इसके लिए सहमत हो गया और उसने मुख्तारनामा-आम (तारीख 21.6.2019 की सं. 30288/2019) के साथ अनुसूची-क वाली संपत्ति के पश्चिमी भाग के संबंध में विक्रय करार प्राप्त किया । प्रथम प्रत्यर्थी ने द्वितीय प्रत्यर्थी को 16,20,00,000/- रुपए की संपूर्ण रकम का संदाय कर दिया । प्रथम प्रत्यर्थी ने यह भी कथन किया है कि कई बार निवेदन किए जाने के पश्चात् भी प्रथम प्रत्यर्थी ने अनुसूची-क वाली संपत्ति का सर्वेक्षण और पैमाइश कराने के संबंध में कोई कदम नहीं उठाया । तारीख 15 दिसंबर, 2019 को प्रथम प्रत्यर्थी ने 1 एकड़ 39 गुंटा (अनुसूची-ग वाली संपत्ति) के संबंध में द्वितीय प्रत्यर्थी से अपने पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित और पंजीकृत कराने की मांग की जिसके लिए वह 10,66,50,000/- रुपए की धनराशि प्रतिफल के रूप में देने को तैयार था जिस पर द्वितीय

प्रत्यर्थी ने यह कथन किया कि वह किसी तृतीय पक्षकार को वह संपत्ति पहले ही बेच चुका है । इस पर प्रथम प्रत्यर्थी ने पूछताछ की विल्लंगम प्रमाणपत्र उप-रजिस्ट्रार, संगारेड्डी के कार्यालय से प्राप्त किया जिससे यह पता चला कि द्वितीय प्रत्यर्थी ने इस मामले में के आवेदन के पक्ष में अनुसूची-ग वाली संपत्ति के संबंध में तारीख 8 नवंबर, 2019 को विक्रय करार सह-मुख्तारनामा-आम और तारीख 16 नवंबर, 2019 को विक्रय विलेख निष्पादित कर दिया है जिसने साथ ही तारीख 16 नवंबर, 2019 को एक मिथ्या विक्रय विलेख सं. 48684/2019 इस मामले में के प्रत्यर्थी सं. 3 से प्रत्यर्थी सं. 6 के पक्ष में निष्पादित किया । द्वितीय प्रत्यर्थी ने तारीख 14 अप्रैल, 2019 के आरंभिक विक्रय करार की शर्तों का अतिलंघन किया है और प्रथम प्रत्यर्थी के साथ निष्पादित किए गए विक्रय विलेख को गुप्त रखते हुए एक अतिरिक्त मिथ्या विक्रय विलेख निष्पादित किया । प्रथम प्रत्यर्थी का यह अभिकथन है कि तारीख 14 अप्रैल, 2019 वाले मूल विक्रय करार को छिपाते हुए प्रत्यर्थी सं. 3 से प्रत्यर्थी सं. 6 ने अनुसूची-ग वाली संपत्ति को तीसरे पक्षकार के पक्ष में तारीख 16 नवंबर, 2019 के मिथ्या विक्रय विलेख के आधार पर अलग किया है ताकि प्रथम प्रत्यर्थी को हानि पहुंच सके और उन्होंने अनुसूची-ग वाली संपत्ति की प्रकृति में परिवर्तन करने का भी प्रयास किया है । अत: प्रथम प्रत्यर्थी ने अंतरिम आवेदन सं. 1671/2019 फाइल की जिसमें विचारण न्यायालय ने प्रथम प्रत्यर्थी के पक्ष में अंतर्वर्ती व्यादेश प्रदान किया । इसके पश्चात् तारीख 29 जुलाई, 2020 और 31 जुलाई, 2020 को प्रत्यर्थी सं. 3 से प्रत्यर्थी सं. 6 और उनके सहयोगी अनुसूची-ग वाली संपत्ति पर पहुंचे और उन्होंने वहां विद्यमान सड़क को मनमाने तरीके से नष्ट किया और भूमि समतल करने का प्रयास किया तथा नई सड़कें बनाईं और उन्होंने प्रथम प्रत्यर्थी को धमकी भी दी । अत: भयोपरत होकर और अनुसूची-ग वाली संपत्ति को संरक्षित करने के लिए प्रथम प्रत्यर्थी ने अंतरिम आवेदन सं. 1671/2019 में पारित किए गए तारीख 20 दिसंबर, 2019 के उस अनंतरिम आदेश के क्रियान्वयन और प्रत्यर्थी सं. 3 से प्रत्यर्थी सं. 6 तथा उनके अभिकर्ताओं को अनुसूची-ग वाली संपत्ति की प्रकृति में परिवर्तन करने से रोकने हेतु पुलिस सहायता

के लिए 2020 का अंतरिम आवेदन सं. 430 फाइल किया और इस अनंतरिम आदेश की अवधि समय-समय पर बढ़ाई गई है । प्रत्यर्थी सं. 2 से प्रत्यर्थी सं. 6 में अपने प्रत्युत्तर फाइल किए जिनमें शपथपत्र में किए गए सारभूत प्रकथनों से इनकार करते हुए यह कथन किया है कि द्वितीय प्रत्यर्थी ने यह संपत्ति उनके पक्ष में स्थानांतरित की है और यह कि चूंकि अंतरिम आवेदन सं. 16/2019 में पारित आदेश विद्यमान नहीं है इसलिए पुलिस सहायता उपलब्ध कराने का प्रश्न ही नहीं उठता है और यह कि उन्होंने तारीख 20 दिसंबर, 2019 के आदेश का अतिक्रमण नहीं किया है । विचारण न्यायालय ने दोनों पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों को सुनने के पश्चात् अंतरिम आवेदन सं. 430/2020 में यह आदेश करते हुए पुलिस अमीनपुर को निदेश दिया कि वे अंतरिम आवेदन सं. 1671/2019 में किए गए तारीख 20 दिसंबर, 2019 के उस अंतरिम आदेश के क्रियान्वयन के लिए जब भी आवश्यक हो प्रथम प्रत्यर्थी/वादी को पुलिस सहायता उपलब्ध कराएं जो वर्तमान सिविल पुनरीक्षण याचिका में आक्षेपित है । याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह स्वीकृत तथ्य है कि आक्षेपित आदेश एक अनंतरिम आदेश है और यह भी स्वीकृत है कि इस मामले में के आवेदक ने इस न्यायालय के समक्ष, 2019 का अंतरिम आवेदन सं. 1671 में निचले न्यायालय द्वारा पारित अनंतरिम आदेश को चुनौती देते हुए, सिविल प्रकीर्ण अपील फाइल की थी । निस्संदेह वह सिविल प्रकीर्ण अपील वापस लिए जाने के आधार पर खारिज की गई । जब तक अंतरिम व्यादेश अंतिम नहीं हो जाता और जब तक पक्षकारों के अधिकार स्पष्ट नहीं हो जाते तब तक न्यायालय आम तौर पर पुलिस सहायता प्रदान नहीं कर सकता क्योंकि जिस पक्षकार के पक्ष में अनंतरिम आदेश मंजूर किया गया है वह परिस्थिति का अनुचित लाभ ले सकता है और अन्य पक्षकार को असम्यक् हानि पहुंचा सकता है । ऊपर उद्धृत सभी मामलों में यही विनिश्चयाधार है । यदि इस मामले में के आवेदक ने, जिसके विरुद्ध एकपक्षीय व्यादेश प्रदान किया गया है, व्यादेश का अतिक्रमण किया था तब प्रथम प्रत्यर्थी सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 का आदेश 39, नियम 2(क) जिसके अन्तर्गत दंडित किए जाने की विधि अधिकथित की गई है

ताकि व्यादेश का अनुपालन करने के लिए पक्षकार को आबद्ध किया जा सके, के अधीन आवेदन फाइल कर सकता है । किंतु न्यायालय अंतरिम व्यादेश के आवेदन का निपटारा किए बिना सीधे ही पुलिस सहायता के लिए आदेश नहीं कर सकता क्योंकि एकपक्षीय व्यादेश कार्यान्वित कराने के लिए पुलिस सहायता उपलब्ध कराने से दूसरे पक्षकार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है जिसकी सुनवाई किए जाने के बिना उसके विरुद्ध व्यादेश प्रदान किया गया था । मामले को इस प्रकार दृष्टिगत करते हुए मेरा यह मत है कि निचले न्यायालय ने गुणागुण के आधार पर 2019 का अंतरिम आवेदन सं. 1671 का निपटारा किए बिना पुलिस सहायता उपलब्ध कराने हेतु आवेदन मंजूर करने में गलती की है । मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को दृष्टिगत करते हुए तथा साथ ही ऊपर उद्धृत मामलों में अधिकथित सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए मेरी यह सुविचारित राय है कि आक्षेपित आदेश में सारभूत रूप से कमी है और इसलिए यह अपास्त किया जाना चाहिए । (पैरा 8 और 10)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2018] 2018 (6) ए. एल. टी. 778 (एकल न्यायपीठ) :
गंगूपन्तुला रानग राव बनाम **बतूला लक्षमैया और अन्य** ; 5

[2008] 2008 (6) ए. एल. डी. 90 :
कस्तूरी वेंकट सुबय्या और अन्य बनाम **विरप्पारेड्डी यशोदम्मा** ; 5

[2004] 2004 (4) ए. एल. टी. 267 (एकल न्यायपीठ) :
वंगा बूची रेड्डी बनाम **वंगा मधुसूदन रेड्डी** ; 5

[1999] ए. आई. आर. 1999 केरल 383 :
अधिकारथ वलप्पिल बनाम **कोरथ इलथ वलप्पिल मम्मी** । 9

सिविल रिट अधिकारिता : 2020 की सिविल पुनरीक्षण याचिका सं. 1173.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन पुनरीक्षण याचिका ।

याची की ओर से श्री जे. सी. फ्रांसिस

प्रत्यर्थी की ओर से श्री जी. विवेकानंद

आदेश

प्रधान जिला न्यायाधीश, मेदक के न्यायालय में फाइल किए गए मूल वाद सं. 318/2019 में संलग्न अंतरिम आवेदन 1671/2019 में तत्पश्चात् प्रस्तुत अंतरिम आवेदन 430/2020 में तारीख 12 दिसंबर, 2020 को पारित उस आदेश को भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन फाइल किए गए इस सिविल पुनरीक्षण याचिका में चुनौती दी गई है जिसके द्वारा विद्वान् जिला न्यायाधीश ने आवेदक/वादी को पुलिस सहायता प्रदान किए जाने से संबंधित अंतरिम आवेदन सं. 430/2020 मंजूर किया था ।

2. इस सिविल पुनरीक्षण याचिका पर विचार किए जाने से संबंधित संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं कि इस मामले में के प्रत्यर्थी ने मूल वाद सं. 318/2019 फाइल किया जिसमें यह कहा गया कि इस मामले में के द्वितीय प्रत्यर्थी ने इस मामले में के आवेदक के प्रोप्राइटर की हैसियत से संपत्ति को 26 करोड़ 86 लाख 50 हजार रुपए में विक्रय करने का प्रस्ताव रखा जिसका उल्लेख वाद की अनुसूची-क में किया गया है जिसका क्षेत्रफल 4 एकड़ और 39 गुंटा है (जिसे वादपत्र का "अनुसूची संपत्ति" कहा गया है) और तद्नुसार प्रथम प्रत्यर्थी ने द्वितीय प्रत्यर्थी के साथ तारीख 14 मार्च, 2019 को 4,25,00,000/- रुपए का अग्रिम धन के रूप में संदाय करते हुए करार निष्पादित किया जिसमें 22,61,50,000/- रुपए की शेष राशि का संदाय 3 मास के भीतर करने के लिए सहमति व्यक्त की गई । प्रथम प्रत्यर्थी तारीख 15 जून, 2019 तक अपने नाम में संपत्ति का पंजीकरण कराने के लिए शेष विक्रय प्रतिफल के साथ तैयार हो गया । यद्यपि उसके पास 3 मास का समय था और उसने इस संबंध में द्वितीय प्रत्यर्थी को सूचित कर दिया था और उसने निवेदन किया कि संपत्ति का सरकारी सर्वेक्षण और पैमाइश कराई जाए ताकि उसका सीमांकन किया जा सके किंतु यह सब पूरा करने में द्वितीय प्रत्यर्थी असफल रहा । ऐसा करने के बजाय द्वितीय

प्रत्यर्थी ने प्रथम प्रत्यर्थी से यह निवेदन किया कि वह कुल भूमि 4 एकड़ 39 गुंटा (अनुसूची-ख वाली संपत्ति) में से 3 एकड़ भूमि क्रय कर ले और इसके लिए वह प्रतिफल के रूप में 16,20,00,000/- रुपए का संदाय करे क्योंकि प्रत्यर्थी दो को धन की अत्यधिक आवश्यकता है और उसने यह वचन दिया कि वह अनुसूची-क वाली संपत्ति का सर्वेक्षण और सीमांकन बाद में कराएगा । प्रथम प्रत्यर्थी इसके लिए सहमत हो गया और उसने मुख्तारनामा-आम (तारीख 21.6.2019 की सं. 30288/2019) के साथ अनुसूची-क वाली संपत्ति के पश्चिमी भाग के संबंध में विक्रय करार प्राप्त किया । प्रथम प्रत्यर्थी ने द्वितीय प्रत्यर्थी को 16,20,00,000/- रुपए की संपूर्ण रकम का संदाय कर दिया ।

प्रथम प्रत्यर्थी ने यह भी कथन किया है कि कई बार निवेदन किए जाने के पश्चात् भी प्रथम प्रत्यर्थी ने अनुसूची-क वाली संपत्ति का सर्वेक्षण और पैमाइश कराने के संबंध में कोई कदम नहीं उठाया । तारीख 15 दिसंबर, 2019 को प्रथम प्रत्यर्थी ने 1 एकड़ 39 गुंटा (अनुसूची-ग वाली संपत्ति) के संबंध में द्वितीय प्रत्यर्थी से अपने पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित और पंजीकृत कराने की मांग की जिसके लिए वह 10,66,50,000/- रुपए की धनराशि प्रतिफल के रूप में देने को तैयार था जिस पर द्वितीय प्रत्यर्थी ने यह कथन किया कि वह किसी तृतीय पक्षकार को वह संपत्ति पहले ही बेच चुका है । इस पर प्रथम प्रत्यर्थी ने पूछताछ की विल्लंगम प्रमाणपत्र उप-रजिस्ट्रार, संगारेड्डी के कार्यालय से प्राप्त किया जिससे यह पता चला कि द्वितीय प्रत्यर्थी ने इस मामले में के आवेदन के पक्ष में अनुसूची-ग वाली संपत्ति के संबंध में तारीख 8 नवंबर, 2019 को विक्रय करार सह-मुख्तारनामा-आम और तारीख 16 नवंबर, 2019 को विक्रय विलेख निष्पादित कर दिया है जिसने साथ ही तारीख 16 नवंबर, 2019 को एक मिथ्या विक्रय विलेख सं. 48684/2019 इस मामले में के प्रत्यर्थी सं. 3 से प्रत्यर्थी सं. 6 के पक्ष में निष्पादित किया । द्वितीय प्रत्यर्थी ने तारीख 14 अप्रैल, 2019 के आरंभिक विक्रय करार की शर्तों का अतिलंघन किया है और प्रथम प्रत्यर्थी के साथ निष्पादित किए गए विक्रय विलेख को गुप्त रखते हुए एक अतिरिक्त मिथ्या विक्रय विलेख निष्पादित किया ।

प्रथम प्रत्यर्थी का यह अभिकथन है कि तारीख 14 अप्रैल, 2019

वाले मूल विक्रय करार को छिपाते हुए प्रत्यर्थी सं. 3 से प्रत्यर्थी सं. 6 ने अनुसूची-ग वाली संपत्ति को तीसरे पक्षकार के पक्ष में तारीख 16 नवंबर, 2019 के मिथ्या विक्रय विलेख के आधार पर अलग किया है ताकि प्रथम प्रत्यर्थी को हानि पहुंच सके और उन्होंने अनुसूची-ग वाली संपत्ति की प्रकृति में परिवर्तन करने का भी प्रयास किया है । अत: प्रथम प्रत्यर्थी ने अंतरिम आवेदन सं. 1671/2019 फाइल की जिसमें विचारण न्यायालय ने प्रथम प्रत्यर्थी के पक्ष में अंतर्वर्ती व्यादेश प्रदान किया । इसके पश्चात् तारीख 29 जुलाई, 2020 और 31 जुलाई, 2020 को प्रत्यर्थी सं. 3 से प्रत्यर्थी सं. 6 और उनके सहयोगी अनुसूची-ग वाली संपत्ति पर पहुंचे और उन्होंने वहां विद्यमान सड़क को मनमाने तरीके से नष्ट किया और भूमि समतल करने का प्रयास किया तथा नई सड़कें बनाईं और उन्होंने प्रथम प्रत्यर्थी को धमकी भी दी । अत: भयोपरत होकर और अनुसूची-ग वाली संपत्ति को संरक्षित करने के लिए प्रथम प्रत्यर्थी ने अंतरिम आवेदन सं. 1671/2019 में पारित किए गए तारीख 20 दिसंबर, 2019 के उस अनंतरिम आदेश के क्रियान्वयन और प्रत्यर्थी सं. 3 से प्रत्यर्थी सं. 6 तथा उनके अभिकर्ताओं को अनुसूची-ग वाली संपत्ति की प्रकृति में परिवर्तन करने से रोकने हेतु पुलिस सहायता के लिए 2020 का अंतरिम आवेदन सं. 430 फाइल किया और इस अनंतरिम आदेश की अवधि समय-समय पर बढ़ाई गई है ।

3. प्रत्यर्थी सं. 2 से प्रत्यर्थी सं. 6 में अपने प्रत्युत्तर फाइल किए जिनमें शपथपत्र में किए गए सारभूत प्रकथनों से इनकार करते हुए यह कथन किया है कि द्वितीय प्रत्यर्थी ने यह संपत्ति उनके पक्ष में स्थानांतरित की है और यह कि चूंकि अंतरिम आवेदन सं. 16/2019 में पारित आदेश विद्यमान नहीं है इसलिए पुलिस सहायता उपलब्ध कराने का प्रश्न ही नहीं उठता है और यह कि उन्होंने तारीख 20 दिसंबर, 2019 के आदेश का अतिक्रमण नहीं किया है ।

4. विचारण न्यायालय ने दोनों पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों को सुनने के पश्चात् अंतरिम आवेदन सं. 430/2020 में यह आदेश करते हुए पुलिस अमीनपुर को निदेश दिया कि वे अंतरिम आवेदन सं. 1671/2019 में किए गए तारीख 20 दिसंबर, 2019 के उस अंतरिम आदेश के क्रियान्वयन के लिए जब भी आवश्यक हो प्रथम

प्रत्यर्थी/वादी को पुलिस सहायता उपलब्ध कराएं जो वर्तमान सिविल पुनरीक्षण याचिका में आक्षेपित है ।

5. याची के विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया है कि अंतरिम आवेदन सं. 1671/2019 में पारित आदेश मात्र एक अंतरिम आदेश है और जब तक अंतरिम आदेश पक्षकार के पक्ष में अंतिम नहीं हो जाता तब तक न्यायालय उस पक्षकार को पुलिस सहायता उपलब्ध नहीं करा सकता । विद्वान् काउंसेल ने **कस्तूरी वेंकट सुबय्या और अन्य** बनाम **विरप्पारेड्डी यशोदम्मा**[1], **गंगूपन्तुला रानग राव** बनाम **बतूला लक्षमैया और अन्य**[2] और **वंगा बूची रेड्डी** बनाम **वंगा मधुसूदन रेड्डी**[3] वाले निर्णयों में अधिकथित विनिश्चयाधार का अवलंब लिया ।

6. इसके प्रतिकूल प्रथम प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि चूंकि प्रत्यर्थी सं. 3 से प्रत्यर्थी सं. 6 एकपक्षीय अंतरिम आदेश का अतिक्रमण करते हुए वाद अनुसूची संपत्ति को लेकर प्रथम अभ्यर्थी के कब्जे में हस्तक्षेप कर रहे हैं इसलिए प्रथम प्रत्यर्थी को 2020 का अंतरिम आवेदन 430 फाइल करना पड़ा है और इस आवेदन को विचारण न्यायालय ने मंजूर किया और पुलिस सहायता दिए जाने के लिए आदेश किया और यह भी मत व्यक्त किया कि आक्षेपित आदेश पूर्णतया विधि के अनुसरण में पारित किया गया है और इसमें कोई भी सारभूत कमी या अवैधता या खामी नहीं है, इस प्रकार वर्तमान पुनरीक्षण याचिका संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन चलने योग्य नहीं है ।

7. उपरोक्त बातों को दृष्टिगत करते हुए न्यायालय को इस प्रश्न का उत्तर देना है कि क्या पुनरीक्षण आवेदन के अन्तर्गत अनंतरिम व्यादेश के प्रक्रम पर पुलिस सहायता उपलब्ध कराना उचित है ?

8. यह स्वीकृत तथ्य है कि आक्षेपित आदेश एक अनंतरिम आदेश है और यह भी स्वीकृत है कि इस मामले में के आवेदक ने इस न्यायालय के समक्ष, 2019 का अंतरिम आवेदन सं. 1671 में निचले न्यायालय द्वारा पारित अनंतरिम आदेश को चुनौती देते हुए, सिविल

---

[1] 2008 (6) ए. एल. डी. 90.

[2] 2018 (6) ए. एल. टी. 778 (एकल न्यायपीठ).

[3] 2004 (4) ए. एल. टी. 267 (एकल न्यायपीठ).

प्रकीर्ण अपील फाइल की थी । निस्संदेह वह सिविल प्रकीर्ण अपील वापस लिए जाने के आधार पर खारिज की गई । जब तक अंतरिम व्यादेश अंतिम नहीं हो जाता और जब तक पक्षकारों के अधिकार स्पष्ट नहीं हो जाते तब तक न्यायालय आमतौर पर पुलिस सहायता प्रदान नहीं कर सकता क्योंकि जिस पक्षकार के पक्ष में अनंतरिम आदेश मंजूर किया गया है वह परिस्थिति का अनुचित लाभ ले सकता है और अन्य पक्षकार को असम्यक् हानि पहुंचा सकता है । ऊपर उद्धृत सभी मामलों में यही विनिश्चयाधार है । यदि इस मामले में के आवेदक ने, जिसके विरुद्ध एकपक्षीय व्यादेश प्रदान किया गया है, व्यादेश का अतिक्रमण किया था तब प्रथम प्रत्यर्थी सिविल प्रक्रिया संहिता, 1905 का आदेश 39, नियम 2(क) जिसके अन्तर्गत दंडित किए जाने की विधि अधिकथित की गई है ताकि व्यादेश का अनुपालन करने के लिए पक्षकार को आबद्ध किया जा सके, के अधीन आवेदन फाइल कर सकता है । किंतु न्यायालय अंतरिम व्यादेश के आवेदन का निपटारा किए बिना सीधे ही पुलिस सहायता के लिए आदेश नहीं कर सकता क्योंकि एकपक्षीय व्यादेश कार्यान्वित कराने के लिए पुलिस सहायता उपलब्ध कराने से दूसरे पक्षकार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है जिसकी सुनवाई किए जाने के बिना उसके विरुद्ध व्यादेश प्रदान किया गया था । मामले को इस प्रकार दृष्टिगत करते हुए मेरा यह मत है कि निचले न्यायालय ने गुणागुण के आधार पर 2019 का अंतरिम आवेदन सं. 1671 का निपटारा किए बिना पुलिस सहायता उपलब्ध कराने हेतु आवेदन मंजूर करने में गलती की है ।

9. **अधिकारथ वलप्पिल** बनाम **कोरथ इलथ वलप्पिल मम्मी**[1] वाले मामले में केरल उच्च न्यायालय ने निम्न मत व्यक्त किया :–

> "हमारा यह मत है कि यह न्यायालय, सिविल न्यायालय के एकपक्षीय अनंतरिम आदेश के आधार पर पुलिस सहायता उपलब्ध कराने जैसे सिविल अधिकारों के मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा और पुलिस सहायता का प्रयोग केवल सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 39, नियम 1 या नियम 2 के अधीन पारित अंतिम आदेश के आधार पर ही किया जा सकता है । अत: हम यह अभिनिर्धारित

[1] ए. आई. आर. 1999 केरल 383.

करते हैं कि विद्वान् एकल न्यायाधीश का वह निर्णय जिसमें एकपक्षीय व्यादेश का अतिक्रमण रोकने हेतु पुलिस सहायता उपलब्ध कराने का आदेश किया गया है, उचित नहीं है और आक्षेपित निर्णय द्वारा पुलिस प्राधिकारियों को यह अधिकार दिया गया है कि वे ये विनिश्चित कर सकें कि सिविल न्यायालय द्वारा पारित व्यादेश का अतिक्रमण तो नहीं किया गया है । हम यह भी महसूस करते हैं कि एकपक्षीय व्यादेश किए जाने की स्थिति में न्यायालयों को पुलिस सहायता उपलब्ध कराने के मामले में जल्दबाजी से काम नहीं लेना चाहिए क्योंकि ऐसा किए जाने पर दोनों पक्षकारों के बीच आगे और मुकदमेबाजी बढ़ सकती है, चूंकि पक्षकार पुलिस संरक्षा उपलब्ध कराने के आधार पर पुलिस की मिलीभगत के साथ निर्माण कार्य पूरा करवा सकता है और ऐसे कार्य भी कर सकता है जिन्हें वह सिविल न्यायालय द्वारा अंतिम आदेश पारित किए जाने के पश्चात् भी नहीं कर सकता । इस न्यायालय के समक्ष ऐसे बहुत-से मामले आए हैं ।"

10. मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को दृष्टिगत करते हुए तथा साथ ही ऊपर उद्धृत मामलों में अधिकथित सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए मेरी यह सुविचारित राय है कि आक्षेपित आदेश में सारभूत रूप से कमी है और इसलिए यह अपास्त किया जाना चाहिए ।

11. परिणामत: सिविल पुनरीक्षण याचिका मंजूर की जाती है, पुनरीक्षणाधीन आदेश अपास्त किया जाता है और निचले न्यायालय को यह निदेश दिया जाता है कि 2019 के अंतरिम आवेदन सं. 1671 का निपटारा समुचित रूप से करे । खर्चों के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता ।

12. इस सिविल पुनरीक्षण याचिका के साथ यदि कोई प्रकीर्ण आवेदन लंबित है तो उसका भी निपटारा किया जाता है ।

याचिका मंजूर की गई ।

अस.

स्वप्न सिन्हा

बनाम

बिमल सिन्हा

(2019 की वैवाहिक अपील सं. 21)

तारीख 5 फरवरी, 2021

न्यायमूर्ति एस. तलपात्रा और न्यायमूर्ति एस. जी. चट्टोपाध्याय

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 13(1)(i-क) और (i-ख) [सपठित कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 19] – विवाह-विच्छेद – क्रूरता और अभित्यजन – पति और उसकी माता के साथ पत्नी द्वारा क्रूरता कारित किए जाने का आरोप - पति द्वारा लगाए गए आरोपों का तुच्छ पाया जाना – पति-पत्नी के बीच 24 वर्ष तक वैवाहिक संबंधों का बने रहना – पति-पत्नी के बीच भ्रान्ति का पाया जाना – पति-पत्नी के बीच वैवाहिक संबंध 24 वर्ष से बने हुए हैं और इस दौरान उन्होंने अपने बच्चों का उनके वयस्क होने तक पालन-पोषण किया है और वे निरंतर एक दूसरे की कमियों को माफ करते रहे हैं तथा उनके बीच विवाद घरेलू नोंक-झोंक से अधिक नहीं पाया गया है, अत: निचले न्यायालय का न्यायिक पृथक्करण के समर्थन में दिया गया निर्णय अपास्त किए जाने योग्य है ।

यह अपील जिला न्यायाधीश, उत्तरी त्रिपुरा, न्यायिक जिला, धर्मानगर द्वारा 2017 के विवाह-विच्छेद मामला सं. 53 में तारीख 5 जनवरी, 2019 को पारित निर्णय के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है । इस मामले में के प्रत्यर्थी अर्थात् पति ने जिला न्यायाधीश उत्तरी त्रिपुरा, धर्मानगर के समक्ष हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में "अधिनियम, 1955" कहा गया है) की धारा 13(1)(i-क) और (i-ख) के अधीन पत्नी (जो इस मामले में अपीलार्थी है) के विरुद्ध अर्जी फाइल की थी जिसमें क्रूरता और अभित्यजन के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित किए जाने के लिए प्रार्थना की । विद्वान् जिला

मजिस्ट्रेट ने उस वाद में विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान/करने से इनकार कर दिया । 2017 के विवाह-विच्छेद मामला सं. 53 में तारीख 5 जनवरी, 2019 के आक्षेपित निर्णय द्वारा विद्वान् जिला न्यायाधीश ने अधिनियम, 1955 की धारा 13-क के अधीन प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए न्यायिक पृथक्करण की डिक्री पारित की । अत: व्यथित पत्नी ने कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 19 के साथ पठित अधिनियम, 1955 की धारा 28 के अधीन यह अपील प्रस्तुत की है जिसमें विद्वान् जिला न्यायाधीश, धर्मानगर, उत्तरी त्रिपुरा द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय की विधिमान्यता को चुनौती दी है । यह निर्विवादित है कि पति और पत्नी दोनों हिन्दू हैं और उनको अधिनियम, 1955 के उपबंध लागू होते हैं । इन दोनों का विवाह हिन्दू रीति-रिवाज के अनुसार तारीख 13 सितंबर, 1993 को हुआ था और इस विवाह-बंधन से उनके यहां एक पुत्री और एक पुत्र ने जन्म लिया । विवाह-विच्छेद की कार्यवाही के दौरान पति ने अपनी पत्नी के विरुद्ध क्रूरता को लेकर अनेक अभिकथन किए । पति के अनुसार विवाह के पूर्व पति-पत्नी के बीच प्रेम-प्रसंग था । चूंकि उनके परिजनों ने इस संबंध को स्वीकार नहीं किया था इसलिए उन्होंने दामचेरा स्थित महादेव मंदिर में विवाह किया । विवाह के पश्चात् वे दामचेरा स्थित पति के पैतृक गृह में रहने लगे । जहां उस समय दसदा आरडी ब्लाक में पंचायत सचिव के पद पर पति की तैनाती हुई थी । कुछ वर्षों के भीतर उनके यहां एक पुत्री और एक पुत्र ने जन्म लिया । पति द्वारा यह अभिकथन किया गया है कि उसकी पत्नी और उसकी माता के बीच संबंध अच्छे नहीं थे । अपीलार्थी-पत्नी सदैव प्रत्यर्थी-पति की माता से अलग रहना चाहती थी और वह अपने पति पर यह जोर देती रहती थी कि वह किराए पर अन्य किसी स्थान पर मकान ले ले ताकि पत्नी अपनी सास से दूर रह सके । चूंकि प्रत्यर्थी-पति ने अपीलार्थी-पत्नी के इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया इसलिए वह प्रत्यर्थी-पति की माता के साथ दुर्व्यवहार करने लगी । अपीलार्थी-पत्नी ने घर पर खाना बनाना बंद कर दिया और छोटी-मोटी बातों पर भी अपने पति के साथ झगड़ा करती थी । मध्यरात्रि में भी पत्नी अपने पति से चीख-पुकार करते हुए झगड़ा किया करती थी । उनके इस प्रकार झगड़ा करने पर पड़ोसियों ने आपत्ति की । इसके

पश्चात् पति ने राजबारी, धर्मानगर में किराए पर मकान लिया और वह अपनी पत्नी और बच्चों के साथ रहने लगा । धीरे-धीरे पति-पत्नी के बीच संबंध और खराब हो गए और पति-पत्नी से दूर कीर्तनतली, केला शहर, ऊनाकोटी में जाकर अलग रहने लगा । दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की संभावना न होने पर पति ने जिला न्यायाधीश के समक्ष क्रूरता और अभित्यजन के आधार पर विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल की । पत्नी ने अर्जी का प्रतिवाद किया और अपने पति द्वारा लगाए गए आरोपों का खंडन किया । उसने भी अपने पति पर आरोप लगाए । पत्नी के अनुसार उसके पति द्वारा लगाए गए आरोप मिथ्या और निराधार थे । पत्नी ने यह अभिकथन किया कि उसके पति ने उसका अभित्यजन किया है और मार्च, 2017 में वह उसके दोनों बच्चों को असहाय छोड़कर चला गया था और फिर कभी वापस नहीं आया । पत्नी द्वारा यह भी अभिकथन किया गया कि विवाह के पश्चात् जब वह अपने पति के साथ दामचेरा में रहती थी तब उसका पति और उसकी सास दहेज को लेकर उसे तंग किया करते थे । उसके पति ने उससे एक लाख रुपए की मांग की और इस मांग को पूरा करने के लिए वह शराब पीकर उसके साथ यातनापूर्ण व्यवहार किया करता था । अपीलार्थी-पत्नी की सास सदैव प्रत्यर्थी-पति का पक्ष लिया करती थी । विवाह के कुछ वर्षों के बाद अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के यहां पुत्री और पुत्र ने जन्म लिया जिसके उपरांत भी प्रत्यर्थी-पति के व्यवहार में कोई सुधार नहीं आया । वह लगभग प्रत्येक रात्रि में अपीलार्थी-पत्नी को यातना दिया करता था । मार्च, 2006 में वे राजबाई धर्मानगर जाकर रहने लगे जहां प्रत्यर्थी-पति ने किराए पर मकान ले रखा था । इसके पश्चात् उन्होंने धर्मानगर में एक मकान क्रय कर लिया जिसमें वे 11 वर्ष तक रहे । 8 मार्च, 2017 की रात्रि में प्रत्यर्थी-पति नशे की हालत में घर वापस आया और उसने अपनी पत्नी पर बुरी तरह हमला किया । पत्नी के चीखने की आवाज सुनकर पड़ोसी वहां पहुंचे और उन्होंने उसे बचाया । इसके तत्काल पश्चात् प्रत्यर्थी-पति घर छोड़कर चला गया और फिर कभी वापस नहीं आया । पत्नी ने यह कथन किया कि वह अपने पति के साथ सुखद दाम्पत्य जीवन जीने का प्रयास करती थी । किंतु उसके पति की ओर से सहयोग नहीं मिलता था । प्रत्यर्थी-पति सदैव क्रूरतापूर्ण व्यवहार किया

करता था और परिणामस्वरूप वह अपीलार्थी-पत्नी और उसके बच्चों को छोड़कर चला गया । क्रूरता और अभित्यजन के आरोपों का खंडन करते हुए अपीलार्थी-पत्नी ने प्रत्यर्थी-पति द्वारा फाइल की गई अर्जी के खारिज किए जाने की प्रार्थना की । विचारण न्यायालय ने तथ्यात्मक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए विस्तार से मामले पर विचार किया और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का मूल्यांकन किया तथा अधिसंभाव्यता की प्रबलता की कसौटी पर यह निष्कर्ष निकाला कि पति का पक्षकथन पत्नी के पक्षकथन की तुलना में अधिक प्रबल है । किंतु इस तथ्य पर विचार करते हुए कि पत्नी अपने बच्चों सहित अभी भी पति के साथ रहने में इच्छुक है और वे दोनों इस वाद के संस्थित किए जाने के पूर्व मात्र डेढ़ वर्ष से अलग-अलग रह रहे थे और उन दोनों के बीच संबंध पूर्णतया समाप्त नहीं हुए थे इसलिए विद्वान् जिला न्यायाधीश ने विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित करने के बजाय न्यायिक पृथक्करण का वाद डिक्रीत किया । जिला न्यायाधीश के इस आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी-पत्नी ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों में अधिकथित कसौटी को लागू करने के बाद, हमारा यह विचार है कि पति द्वारा अपनी पत्नी के खिलाफ साबित किए गए आरोप "वैवाहिक जीवन कि सामान्य नोक-झोंक कि परिधि में आते हैं । विद्वान् विचारण न्यायालय को इस तथ्य की सराहना करनी चाहिए थी कि पक्षकारों के बीच विवाह 1993 में हुआ था और वे अपनी कलह और मतभेदों के बावजूद 24 से अधिक वर्षों तक वैवाहिक बंधन में रहे और उन्होंने अपने बच्चों का पालन-पोषण एक साथ किया और ये बच्चे अब वयस्क हो चुके हैं । उनका यह नाता बहुत पहले समाप्त हो गया होता यदि पति-पत्नी ने एक दूसरे को निरंतर क्षमा न किया होता । ऊपर दिए गए निर्णयों में उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित परीक्षणों को दृष्टिगत करते हुए, पत्नी के आचरण, जिसके लिए उसके पति ने उसे जिम्मेदार ठहराया है, को विवाह-विच्छेद के प्रयोजनार्थ क्रूरता नहीं माना जा सकता । पति द्वारा बताई गई घटनाओं को केवल पक्षों के बीच गलतफहमी माना जा सकता है और इस तरह हमारा यह मानना है कि पति इस मामले में

विवाह-विच्छेद के किसी भी आधार को साबित करने में विफल रहा है । यह विधि कि सुस्थापित प्रतिपादना है कि विवाह-विच्छेद का आधार बनने पर भी, न्यायालय अपने विवेक से विवाह-विच्छेद करने के बजाय 1955 के अधिनियम की धारा 13क के अधीन न्यायिक प्रथक्करण की डिक्री पारित कर सकता है । जैसे कि ऊपर चर्चा की गई है, पति विचारण न्यायालय में अपनी पत्नी के विरुद्ध अभित्यजन या क्रूरता के किसी भी आधार को सिद्ध करने में विफल रहा है । इस प्रकार, पति न तो विवाह-विच्छेद और न ही न्यायिक पृथक्करण की डिक्री का हकदार था । चूंकि विद्वान् जिला न्यायाधीश ने देखा था कि पति-पत्नी के बीच संबंध अधिक दुर्बल नहीं हैं और उनके संबंध के नवीनीकरण की संभावना हैं, इसलिए उन्हें न्यायिक प्रथक्करण की डिक्री देकर उनके इस रिश्ते को निलंबित नहीं करना चाहिए था । (पैरा 28, 29, 30 और 31)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2007]	(2007) 4 एस. सी. सी. 511 : **समर घोष** बनाम **जया घोष** ;	27
[2007]	(2007) 3 एस. सी. सी. 136 : **माया देवी (श्रीमती)** बनाम **जगदीश प्रसाद** ;	26
[2006]	(2006) 3 एस. सी. सी. 778 : **विनीता सक्सेना** बनाम **पंकज पंडित** ;	24
[1994]	(1994) 1 एस. सी. सी. 337 : **वी. भगत** बनाम **डी. भगत (श्रीमती)** ;	23
[1988]	(1988) 1 एस. सी. सी. 105 : **शोभा रानी** बनाम **मधुकर रेड्डी** ।	26

अपीली सिविल अधिकारिता : 2019 की वैवाहिक अपील सं. 21.

2017 के विवाह-विच्छेद मामला सं. 53 में जिला न्यायाधीश, उत्तर त्रिपुरा, न्यायिक जिला, धर्मानगर द्वारा तारीख 5 जनवरी, 2019 को पारित निर्णय के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सुश्री ए. देब बर्मा

प्रत्यर्थी की ओर से श्री डी. सी. साहा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एस. जी. चट्टोपाध्याय ने दिया ।

न्या. चट्टोपाध्याय – यह अपील जिला न्यायाधीश, उत्तरी त्रिपुरा, न्यायिक जिला, धर्मानगर द्वारा 2017 के विवाह-विच्छेद मामला सं. 53 में तारीख 5 जनवरी, 2019 को पारित निर्णय के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है । इस मामले में के प्रत्यर्थी अर्थात् पति ने जिला न्यायाधीश उत्तरी त्रिपुरा, जिला धर्मानगर के समक्ष हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में "अधिनियम, 1955" कहा गया है) की धारा 13(1)(i-क) और (i-ख) के अधीन पत्नी (जो इस मामले में अपीलार्थी है) के विरुद्ध अर्जी फाइल की थी जिसमें क्रूरता और अभित्यजन के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित किए जाने के लिए प्रार्थना की । विद्वान् जिला मजिस्ट्रेट ने उस वाद में विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान करने से इनकार कर दिया । 2017 के विवाह-विच्छेद मामला सं. 53 में तारीख 5 जनवरी, 2019 के आक्षेपित निर्णय द्वारा विद्वान् जिला न्यायाधीश ने अधिनियम, 1955 की धारा 13-क के अधीन प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए न्यायिक पृथक्करण की डिक्री पारित की । अत: व्यथित पत्नी ने कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 19 के साथ पठित अधिनियम, 1955 की धारा 28 के अधीन यह अपील प्रस्तुत की है जिसमें विद्वान् जिला न्यायाधीश, धर्मानगर, उत्तरी त्रिपुरा द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय की विधिमान्यता को चुनौती दी है ।

2. यह निर्विवादित है कि पति और पत्नी दोनों हिन्दू हैं और उनको अधिनियम, 1955 के उपबंध लागू होते हैं । इन दोनों का विवाह हिन्दू रीति-रिवाज के अनुसार तारीख 13 सितंबर, 1993 को हुआ था और इस विवाह-बंधन से उनके यहां एक पुत्री और एक पुत्र ने जन्म लिया ।

3. विवाह-विच्छेद की कार्यवाही के दौरान पति ने अपनी पत्नी के विरुद्ध क्रूरता को लेकर अनेक अभिकथन किए । पति के अनुसार विवाह के पूर्व पति-पत्नी के बीच प्रेम-प्रसंग था । चूंकि उनके परिजनों ने इस संबंध को स्वीकार नहीं किया था इसलिए उन्होंने दामचेरा स्थित महादेव

मंदिर में विवाह किया । विवाह के पश्चात् वे दामचेरा स्थित पति के पैतृक गृह में रहने लगे । जहां उस समय दसदा आरडी ब्लाक में पंचायत सचिव के पद पर पति की तैनाती हुई थी । कुछ वर्षों के भीतर उनके यहां एक पुत्री और एक पुत्र ने जन्म लिया । पति द्वारा यह अभिकथन किया गया है कि उसकी पत्नी और उसकी माता के बीच संबंध अच्छे नहीं थे । अपीलार्थी-पत्नी सदैव प्रत्यर्थी-पति की माता से अलग रहना चाहती थी और वह अपने पति पर यह जोर देती रहती थी कि वह किराए पर अन्य किसी स्थान पर मकान ले ले ताकि पत्नी अपनी सास से दूर रह सके । चूंकि प्रत्यर्थी-पति ने अपीलार्थी-पत्नी के इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया इसलिए वह प्रत्यर्थी-पति की माता के साथ दुर्व्यवहार करने लगी । अपीलार्थी-पत्नी ने घर पर खाना बनाना बंद कर दिया और छोटी-मोटी बातों पर भी अपने पति के साथ झगड़ा करती थी । मध्यरात्रि में भी पत्नी अपने पति से चीख-पुकार करते हुए झगड़ा किया करती थी । उनके इस प्रकार झगड़ा करने पर पड़ोसियों ने आपत्ति की । इसके पश्चात् पति ने राजबारी, धर्मानगर में किराए पर मकान लिया और वह अपनी पत्नी और बच्चों के साथ रहने लगा । धीरे-धीरे पति-पत्नी के बीच संबंध और खराब हो गए और पति-पत्नी से दूर कीर्तनतली, केला शहर, ऊनाकोटी में जाकर अलग रहने लगा । दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की संभावना न होने पर पति ने जिला न्यायाधीश के समक्ष क्रूरता और अभित्यजन के आधार पर विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल की ।

4. पत्नी ने अर्जी का प्रतिवाद किया और अपने पति द्वारा लगाए गए आरोपों का खंडन किया । उसने भी अपने पति पर आरोप लगाए । पत्नी के अनुसार उसके पति द्वारा लगाए गए आरोप मिथ्या और निराधार थे । पत्नी ने यह अभिकथन किया कि उसके पति ने उसका अभित्यजन किया है और मार्च, 2017 में वह उसके दोनों बच्चों को असहाय छोड़कर चला गया था और फिर कभी वापस नहीं आया । पत्नी द्वारा यह भी अभिकथन किया गया कि विवाह के पश्चात् जब वह अपने पति के साथ दामचेरा में रहती थी तब उसका पति और उसकी सास दहेज को लेकर उसे तंग किया करते थे । उसके पति ने उससे एक लाख रुपए की मांग की और इस मांग को पूरा करने के लिए वह शराब

पीकर उसके साथ यातनापूर्ण व्यवहार किया करता था । अपीलार्थी-पत्नी की सास सदैव प्रत्यर्थी-पति का पक्ष लिया करती थी । विवाह के कुछ वर्षों के बाद अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के यहां पुत्री और पुत्र ने जन्म लिया जिसके उपरांत भी प्रत्यर्थी-पति के व्यवहार में कोई सुधार नहीं आया । वह लगभग प्रत्येक रात्रि में अपीलार्थी-पत्नी को यातना दिया करता था । मार्च, 2006 में वे राजबाई धर्मानगर जाकर रहने लगे जहां प्रत्यर्थी-पति ने किराए पर मकान ले रखा था । इसके पश्चात् उन्होंने धर्मानगर में एक मकान क्रय कर लिया जिसमें वे 11 वर्ष तक रहे । 8 मार्च, 2017 की रात्रि में प्रत्यर्थी-पति नशे की हालत में घर वापस आया और उसने अपनी पत्नी पर बुरी तरह हमला किया । पत्नी के चीखने की आवाज सुनकर पड़ोसी वहां पहुंचे और उन्होंने उसे बचाया । इसके तत्काल पश्चात् प्रत्यर्थी-पति घर छोड़कर चला गया और फिर कभी वापस नहीं आया । पत्नी ने यह कथन किया कि वह अपने पति के साथ सुखद दाम्पत्य जीवन जीने का प्रयास करती थी । किंतु उसके पति की ओर से सहयोग नहीं मिलता था । प्रत्यर्थी-पति सदैव क्रूरतापूर्ण व्यवहार किया करता था और परिणामस्वरूप वह अपीलार्थी-पत्नी और उसके बच्चों को छोड़कर चला गया । क्रूरता और अभित्यजन के आरोपों का खंडन करते हुए अपीलार्थी-पत्नी ने प्रत्यर्थी-पति द्वारा फाइल की गई अर्जी के खारिज किए जाने की प्रार्थना की ।

5. विद्वान् विचारण न्यायालय ने पक्षकारों की ओर से किए गए पूर्वोक्त अभिवाक् के आधार पर वाद में निम्न मुद्दे विरचित किए :–

(i) क्या पक्षकारों का विवाह दामचेरा महादेब मंदिर में हिन्दू रीति-रिवाज के अनुसार हुआ था ?

(ii) क्या पति क्रूरता और अभित्यजन के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री पाने का हकदार है ?

(iii) अन्य कोई अनुतोष जिसके लिए पक्षकार हकदार है ?

6. अपना पक्षकथन साबित करने के लिए पति ने अपने सहित दो अन्य साक्षी प्रस्तुत किए । जिन साक्षियों की परीक्षा कराई गई वे निम्न प्रकार हैं :–

(i) श्री बिमल सिन्हा (अभि. सा. 1) पति है,

(ii) श्री मणिकांता सिन्हा (अभि. सा. 2) पति का पड़ोसी है,

(iii) श्री खेलेन्द्र राजकुमार (अभि. सा. 3) पति का दूसरा पड़ोसी है ।

7. दूसरी ओर अपीलार्थी-पत्नी ने अपने सहित दो अन्य साक्षी प्रस्तुत किए । ये साक्षी निम्न प्रकार हैं :–

(i) श्रीमती स्वप्न सिन्हा (प्रतिवादी साक्षी 1) पत्नी है,

(ii) श्री गोपी सेन सिन्हा (प्रतिवादी साक्षी 2) पड़ोसी है,

(iii) श्रीमती माया घोष चक्रवर्ती (प्रतिवादी साक्षी 3) पक्षकारों का दूसरा पड़ोसी है ।

8. विचारण न्यायालय ने तथ्यात्मक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए विस्तार से मामले पर विचार किया और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का मूल्यांकन किया तथा अधिसंभाव्यता की प्रबलता की कसौटी पर यह निष्कर्ष निकाला कि पति का पक्षकथन पत्नी के पक्षकथन की तुलना में अधिक प्रबल है । किंतु इस तथ्य पर विचार करते हुए कि पत्नी अपने बच्चों सहित अभी भी पति के साथ रहने में इच्छुक है और वे दोनों इस वाद के संस्थित किए जाने के पूर्व मात्र डेढ़ वर्ष से अलग-अलग रह रहे थे और उन दोनों के बीच संबंध पूर्णतया समाप्त नहीं हुए थे इसलिए विद्वान् जिला न्यायाधीश ने विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित करने के बजाय न्यायिक पृथक्करण का वाद डिक्रीत किया । विद्वान् जिला न्यायाधीश द्वारा निकाले गए निष्कर्ष का सुसंगत भाग निम्न प्रकार है :–

> "17. प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत किया गया यह साक्ष्य कि विवाह के पांच वर्ष बाद ही अर्जीदार (पति) शराब पीकर देर रात घर वापस आया करता था और धन की मांग को लेकर पत्नी के साथ यातनापूर्ण व्यवहार किया करता था, विश्वसनीय नहीं है जिसका मात्र आधार यह है कि यदि पति दहेज की मांग को लेकर पत्नी के साथ नियमित रूप से दुर्व्यवहार करता तब ऐसी स्थिति में कम से

कम पत्नी एक बार तो किसी भी प्राधिकारी के समक्ष शिकायत करती किंतु पत्नी ने कहीं भी ऐसी कोई शिकायत नहीं की । पत्नी द्वारा प्रस्तुत किए गए इस साक्ष्य पर भी विश्वास नहीं किया जा सकता कि अर्जीदार पति अपनी अप्राप्तवय पुत्री और पुत्र के साथ भी यातनापूर्ण व्यवहार किया करता था और इसके लिए पत्नी अपने पुत्र और पुत्री को साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए न्यायालय में पेश कर सकती थी किंतु उसने ऐसा नहीं किया ।

18. स्थिति कुछ भी हो अर्जीदार पति का पक्षकथन साक्ष्य की प्रबलता द्वारा सिद्ध किया गया है । प्रत्यर्थी-पत्नी, अर्जीदार पति के साक्ष्य का खंडन करने में असफल रही है । अधिनियम की धारा 13(1)(i-क) के अधीन स्पष्ट रूप से यह उपबंध किया गया है कि क्रूरता विवाह-विच्छेद का एक आधार है और अर्जीदार-पति ने यह सिद्ध किया है कि प्रत्यर्थी-पत्नी ने विवाह के पश्चात् से ही उसके साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार किया है । अब यह प्रश्न है कि क्या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित करने के बजाय न्यायिक पृथक्करण की डिक्री पारित करना पर्याप्त होगा । मैंने यह पाया है कि यद्यपि अर्जीदार ने यह साबित किया है कि प्रत्यर्थी-पत्नी ने इसके साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार किया है किंतु वह अभी भी अपने पति के साथ बच्चों सहित शांतिपूर्वक रहने के लिए इच्छुक है । पति-पत्नी अचानक झगड़ा होने के कारण केवल लगभग डेढ़ वर्ष से अलग-अलग रह रहे हैं । अत: यह कहा जा सकता है कि विवाह-विच्छेद इस कोटि का नहीं हुआ है जिसे दोबारा से न जोड़ा जा सके । दोनों पक्षकारों के बीच वैवाहिक संबंध में सुधार किए जाने की आशा अभी भी बनी हुई है । अत:, मामले की तथ्यात्मक परिस्थिति में क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद के बजाय न्यायिक पृथक्करण की डिक्री प्रदान करना न्यायोचित है । न्यायिक पृथक्करण इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के प्रयोजन को पूरा करेगा ।

आदेश

19. उपरोक्त विनिश्चय को दृष्टिगत करते हुए यह डिक्रीत

किया जाता है कि अर्जीदार-पति और प्रत्यर्थी-पत्नी न्यायिक रूप से अलग-अलग रहेंगे । अर्जीदार-पति प्रत्यर्थी-पत्नी के साथ सहवास करने के लिए आबद्ध नहीं है ।"

9. हमने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को विस्तार से सुना है । पत्नी की ओर से हाजिर होने वाली विद्वान् अधिवक्ता सुश्री ए. देबबर्मा ने दृढ़तापूर्वक यह दलील दी है कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि पति गलती पर है जिसने सदैव अपनी पत्नी के साथ यातनापूर्ण व्यवहार किया है और उसे अंत में असहाय छोड़कर चला गया है । सुश्री ए. देबबर्मा के अनुसार पति ने अपनी पत्नी के विरुद्ध विचारण न्यायालय के समक्ष ऐसा कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है जिससे यह साबित होता हो कि पत्नी ने पति के साथ अभित्यजन और क्रूरता कारित की है । किंतु फिर भी विद्वान् विचारण न्यायालय ने साक्ष्य का मूल्यांकन किए बिना ही पति द्वारा प्रस्तुत किए गए निराधार साक्ष्य की बुनियाद पर न्यायिक पृथक्करण की डिक्री पारित की है । परिणामत: विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए न्यायिक पृथक्करण की डिक्री इस अपील में खारिज किए जाने योग्य है ।

10. प्रत्यर्थी-पति की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री डी. सी. साहा ने यह दलील दी है कि अपीलार्थी-पत्नी और प्रत्यर्थी-पति के बीच संबंध पूर्णतया समाप्त हो गए हैं और पुन: स्थापित होने की कोई संभावना नहीं है । विद्वान् काउंसेल के अनुसार विचारण न्यायालय के समक्ष यह साबित किया गया है कि अपीलार्थी-पत्नी ने अपने पति के साथ मानसिक क्रूरता कारित की है और परिणामस्वरूप बिना किसी ठोस कारण उसके अधित्यजन किया है और इसके पश्चात् उसने अपने पति और सास पर निराधार आरोप लगाए हैं जिन्हें विचारण न्यायालय में मिथ्या पाया गया । विद्वान् काउंसेल श्री साहा के अनुसार विचारण न्यायालय ने न्यायिक पृथक्करण की डिक्री ठीक ही पारित की है जिसमें इस अपील के माध्यम से हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

11. जैसाकि हमारे द्वारा अवेक्षा की गई है कि पति ने इस विवाह तथा बच्चों के पैतृत्व से इनकार नहीं किया है । उसने क्रूरता और अभित्यजन के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री पाने की ईप्सा की है

और यह पक्षकथन साबित करने का प्रयास किया है कि विवाह के आरंभ से ही उसकी पत्नी ने उसके और उसकी माता के साथ दुर्व्यवहार किया है और एक समय पर पत्नी इतनी हिंसक हो गई थी कि पति को अपना निवास स्थान बदलना पड़ा और वह दामचेरा से धर्मानगर चला गया और इसी स्थान से वे मार्च, 2017 में एक-दूसरे से अलग हो गए । अपनी पत्नी के असहनीय आचरण के कारण पति ने अपनी पत्नी और बच्चों से दूर रहना आरंभ कर दिया और वह कीर्तनतली, केला शहर, ऊनाकोटी में रहने लगा ।

पति द्वारा किए गए दावे की सच्चाई को परखने के लिए यह आवश्यक है कि उसके द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य पर पुर्नविचार किया जाए ।

12. पति ने शपथपत्र के माध्यम से की गई अपनी मुख्य परीक्षा में उसने वाद पत्र में कही गई बातों को दोहराया है । पति के अनुसार उसकी पत्नी उसके और उसकी माता के साथ विवाह के बाद से ही दुर्व्यवहार करने लगी थी । जिसके परिणामस्वरूप पति-पत्नी के बीच दाम्पत्य संबंध बिगड़ने लगे और मार्च, 2017 में वे एक-दूसरे से पृथक् हो गए । पति ने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान अपनी पत्नी के इस सुझाव से इनकार किया है कि उसकी पत्नी ने उसके और उसकी माता के साथ कभी-भी दुर्व्यवहार नहीं किया है । पति ने इस सुझाव से भी इनकार किया है कि वह पत्नी को दहेज को लेकर तंग किया करता था और अंत में उसे छोड़कर चला गया ।

13. श्री मणिकांता सिन्हा (अभि. सा. 2) ने विचारण न्यायालय के समक्ष पति के समर्थन में अपनी सशपथ मुख्य परीक्षा के दौरान अभिसाक्ष्य दिया है । अभि. सा. 2 ने न्यायालय को यह बताया कि पत्नी अपने पति से अर्धरात्रि में झगड़ा किया करती थी । इसके परिणामस्वरूप पति को दामचेरा छोड़कर जाना पड़ा और उसने धर्मानगर में स्थित राजबाई मोहल्ले में किराए पर एक मकान ले लिया । जब पत्नी दामचेरा में रहती थी तब वह अपने पति और सास के लिए भोजन भी तैयार नहीं किया करती थी ।

अभि. सा. 2 ने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान पत्नी के इस सुझाव से इनकार किया है कि उसे मिथ्या साक्ष्य देने के लिए उसके पति द्वारा धन का संदाय किया गया है ।

14. श्री खेलेन्द्र राजकुमार (अभि. सा. 3) ने, जो पति-पत्नी का पड़ोसी है, पति के पक्षकथन का समर्थन किया है और विचारण न्यायालय को यह बताया है कि पत्नी अपनी सास के साथ रहने को तैयार नहीं थी और इस बात को लेकर पत्नी प्राय: अपने पति से झगड़ा किया करती थी । इस साक्षी ने पति को अपने परिवार के लिए खाना बनाते हुए कई बार देखा था क्योंकि उसकी पत्नी खाना बनाने से इनकार करती थी । पति-पत्नी के राजबाई, धर्मानगर में रहने के बावजूद पत्नी अपने पति से निरंतर झगड़ा करती रहती थी । अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान अभि. सा. 3 ने पति के पक्ष में मिथ्या साक्ष्य दिए जाने से इनकार किया है । उसने प्रतिपरीक्षा के दौरान पत्नी की ओर से दिए गए अन्य सभी सुझावों से इनकार किया है ।

15. इसके प्रतिकूल पत्नी ने अपने पति के पक्षकथन से इनकार करने के अतिरिक्त जिला न्यायालय में पति पर प्रति-आरोप भी लगाए हैं । पत्नी के अनुसार पति ही वैवाहिक संबंधों की समाप्ति के लिए जिम्मेदार है । अभि. सा. 1 द्वारा यह अभिकथन किया गया है कि उसका पति शराबी था जो नशे की हालत में प्रतिदिन रात्रि के समय दहेज की मांग पूरी करने के लिए यातना दिया करता था । पत्नी पर उसके पति द्वारा कई अवसरों पर हमला भी किया गया था और परिणामस्वरूप 8 मार्च, 2017 को उसका पति उसे छोड़कर चला गया और उस समय वह राजबाई, धर्मानगर में रहती थी ।

पत्नी ने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान अपने पति के इस सुझाव से इनकार किया है कि उसने अपने पति और उसकी माता के साथ दुर्व्यवहार किया है । पत्नी ने इस सुझाव से भी इनकार किया है कि उसने विचारण न्यायालय में अपने पति के विरुद्ध मिथ्या साक्ष्य प्रस्तुत किया है ।

16. पत्नी की ओर से हाजिर होने वाले साक्षी गोपीसेन सिन्हा

(प्रतिरक्षा साक्षी 2) ने अपनी मुख्य परीक्षा के दौरान उसके पक्षकथन का समर्थन किया है जिसमें इस साक्षी ने यह कथन किया है कि उसने उसके पति को उस पर हमला करते हुए देखा था और तारीख 8 मार्च, 2017 को यह साक्षी पत्नी से धर्मानगर स्थित घर पर मिला था जब पत्नी ने उसे यह बताया कि उसका पति शराब के नशे में उसके साथ मारपीट करके घर से चला गया है ।

अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान इस साक्षी (प्रतिरक्षा साक्षी 2) ने अपीलार्थी-पत्नी के साथ कोई भी संबंध होने से इनकार किया है । इस साक्षी ने पति की ओर से दिए गए इस सुझाव से इनकार किया है कि वह कभी-भी धर्मानगर स्थित मकान पर नहीं गया और यह कि उसने पति-पत्नी के बीच हुई कोई भी घटना नहीं देखी ।

17. श्रीमती माया घोष चक्रबोर्ती (प्रतिरक्षा साक्षी 3) ने अपनी सशपथ मुख्य परीक्षा में यह कथन किया है कि 2006 में पति-पत्नी ने अपने बच्चों के साथ धर्मानगर में किराए पर मकान लिया था और इसके पश्चात् उन्होंने अपना मकान क्रय कर लिया था । किराए के मकान में रहने के दौरान पति लगभग हर रात्रि नशे की हालत में अपनी पत्नी के साथ मारपीट करता था । मार्च, 2017 की रात्रि में प्रतिरक्षा साक्षी 3 और अन्य पड़ोसी उनके मकान पर आए और उन्होंने देखा कि पति अपनी पत्नी के साथ मारपीट कर रहा है । प्रत्यर्थी-पति पड़ोसियों को देखकर अपना सामान लेकर घर से चला गया ।

प्रतिपरीक्षा के दौरान इस साक्षी को यह सुझाव दिया गया कि अपीलार्थी-पत्नी के साथ मारपीट की अभिकथित घटना सत्य नहीं थी और यह कि उसने यह घटना नहीं देखी थी । इस साक्षी ने इस सुझाव से इनकार किया है ।

18. ऐसा प्रतीत होता है कि विचारण न्यायालय ने प्रत्यर्थी-पति का यह पक्षकथन स्वीकार किया है कि विवाह के पश्चात् से उसकी पत्नी ने उसके साथ क्रूरतापूर्वक व्यवहार किया है और अंत में उसे छोड़कर चली गई । यह निष्कर्ष अभिलिखित करने के पश्चात् कि प्रत्यर्थी-पति ने साक्ष्य प्रस्तुत करके विवाह-विच्छेद के आधार साबित किए हैं, विद्वान्

विचारण न्यायालय ने पति के पक्ष में विवाह-विच्छेद की डिक्री मंजूर करने के बजाय अधिनियम, 1955 की धारा 13(क) के अधीन न्यायिक पृथक्करण का वाद डिक्रीत किया क्योंकि न्यायालय को यह विश्वास हो गया था कि विवाह पूर्णतया समाप्त नहीं हुआ है ।

19. प्रत्यर्थी-पति ने तारीख 13 नवंबर, 2017 को जिला न्यायाधीश के समक्ष विवाह-विच्छेद की अर्जी पारित की थी । उसने अपनी अर्जी के पैरा 19 में यह कथन किया कि वह मार्च, 2017 से अपनी पत्नी से अलग रहता है । अत: यदि थोड़ी देर के लिए यह मान लिया जाए कि वर्ष, 2017 में पत्नी पति को छोड़कर चली गई थी, तब भी धारा 13(1)(i-ख) के अधीन अनुध्यात पति के विरुद्ध पत्नी द्वारा अभित्यजन किया जाना विधिवत् रूप से साबित नहीं होता है क्योंकि पति यह साबित नहीं कर सका था कि उसकी पत्नी विवाह-विच्छेद की कार्यवाही संस्थित किए जाने के 2 वर्ष से अनधिक अवधि के पश्चात् निरंतर रूप से पति से अलग रही है । इस प्रकार अधिनियम, 1955 की धारा 13(1)(i-ख) की अपेक्षा का समाधान नहीं हुआ है और इस धारा के अधीन परिकल्पित अभित्यजन किए जाने का आधार प्रत्यर्थी-पति को उपलब्ध नहीं हुआ है ।

20. क्रूरता के अभिकथन के संबंध में अभिलेख से यह प्रकट हुआ है कि पक्षकार एक-दूसरे पर संबंध बनाए न रखने का आरोप लगा रहे हैं । प्रत्यर्थी-पति का यह पक्षकथन है कि उसकी पत्नी ने सदैव उसके और उसकी माता के साथ दुर्व्यवहार किया है और उसे अपीलार्थी-पत्नी का साथ छोड़ देने के लिए विवश किया है । अपीलार्थी-पत्नी ने भी अपने पति के विरुद्ध प्रत्यारोप लगाए हैं और यह अभिकथन किया है कि उसका पति प्रत्येक रात्रि में शराब के नशे में उसके साथ मारपीट किया करता था और अंत में उसे छोड़कर उसे और उसके बच्चों को छोड़कर चला गया । पति-पत्नी दोनों ने ही अपने पक्षकथन के समर्थन में साक्ष्य प्रस्तुत किया है ।

21. हमने यह पाया है कि दम्पत्ति एक-दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोप लगाते हैं । क्रूरता पर विचार करते समय विचारण न्यायालय ने

अधिसंभाव्यता की प्रबलता का अवलंब लिया है और यह अभिनिर्धारित किया है कि क्रूरता को लेकर पति का पक्षकथन पत्नी के पक्षकथन की अपेक्षा अधिक संभावी है । विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत उचित नहीं है क्योंकि विचारण न्यायाधीश ने इस पर विचार नहीं किया है कि पत्नी ने पति के विरुद्ध अधिक गंभीर आरोप लगाए हैं जिनका समर्थन प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों द्वारा किया गया है । पत्नी ने यह अभिकथन किया है कि उसके पति ने शराब के नशे में उसके साथ मारपीट की है और इस तथ्य का समर्थन प्रतिरक्षा साक्षी 3 द्वारा किया गया है जो अचानक घटना के समय उनके घर पहुंच गई थी । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने स्पष्टत: पत्नी के साक्ष्य का मूल्यांकन उसी प्रकार किया है जिस प्रकार पति के साक्ष्य का किया है ।

22. विवाह-विच्छेद के प्रयोजनार्थ क्रूरता को परिभाषित नहीं किया गया है । हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(1)(i-क) के अधीन 'क्रूरता' विवाह-विच्छेद का एक आधार है जिसके अधीन यह उपबंध किया गया है कि कोई भी अनुष्ठापित विवाह पति या पत्नी द्वारा उपस्थापित अर्जी पर विवाह विच्छेद की डिक्री द्वारा इस आधार पर विघटित किया जा सकेगा कि :–

> "(i) . . .
>
> (i-क) दूसरे पक्षकार ने अनुष्ठापन के पश्चात् अर्जीदार के साथ क्रूरता का व्यवहार किया है ; या .....।"

23. उच्चतम न्यायालय ने बहुत से विनिश्चयों में यह चर्चा की है कि कौनसा कृत्य विवाह-विच्छेद की कोटि में आता है ।

शीर्ष अदालत ने कई फैसलों में इस बात पर चर्चा की है कि तलाक के लिए क्रूरता क्या है ।

वी. भगत बनाम **डी. भगत (श्रीमती)**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने संक्षेप में यह अभिनिर्धारित किया है कि वैवाहिक कार्यवाही के प्रयोजनार्थ क्रूरता उस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में

---

[1] (1994) 1 एस. सी. सी. 337.

रखते हुए ही अभिनिर्धारित की जानी चाहिए । इस निर्णय के पैरा 16 में उच्चतम न्यायालय ने निम्न प्रकार मत व्यक्त किया है :–

> "16. धारा 13(1)(i-क) में मानसिक क्रूरता को मोटे तौर पर उस आचरण के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो दूसरे पक्ष को ऐसा मानसिक कष्ट और पीड़ा देता है जिससे उस पक्ष के लिए दूसरे के साथ रहना संभव नहीं होता है । दूसरे शब्दों में मानसिक क्रूरता ऐसी प्रकृति की होनी चाहिए कि पक्षकारों से युक्तियुक्त रूप से एक साथ रहने की उम्मीद नहीं की जा सके है । स्थिति ऐसी होनी चाहिए कि गलती करने वाले पक्ष को युक्तियुक्त रूप से ऐसा आचरण करने और दूसरे पक्ष के साथ रहने के लिए नहीं कहा जा सके । यह सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है कि मानसिक क्रूरता ऐसी है जिससे अर्जीदार के स्वास्थ्य को क्षति पहुँचती है । इस तरह के निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए, पक्षकारों का सामाजिक और शैक्षिक स्तर, वह समाज जिसमें वे रहते हैं, यदि वे पहले से ही अलग रह रहे हैं तो उनके एक साथ रहने की संभावना या अन्यथा और सभी प्रासंगिक तथ्य और परिस्थितियां जिन्हें व्यापक रूप से निर्धारित करना न तो संभव है और न ही वांछनीय है, को ध्यान मे रखना चाहिए । एक कृत्य जो एक मामले में जो क्रूरता है वह दूसरे मामले में क्रूरता नहीं हो सकता । यह प्रत्येक मामले में उसके अपने तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए ही अभिनिर्धारित की जानी चाहिए । यदि यह अभिकथनों और आरोपों का मामला है, तो उस स्थिति को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए जिसमें वे लगाए गए थे ।"

24. इसी तरह का विचार उच्चतम न्यायालय ने बाद में **विनीता सक्सेना** बनाम **पंकज पंडित**[1] वाले मामले में व्यक्त किया था जो निम्नानुसार है :–

> "35. प्रत्येक मामला अपने तथ्यों और परिस्थितियों पर आधारित होता है । क्रूरता का सिद्धान्त समय, व्यक्ति और स्थान

---

[1] (2006) 3 एस. सी. सी. 778.

के हिसाब से बदलता रहता है जो व्यक्तियों के सामाजिक स्तर, आर्थिक दशा और अन्य बातों पर भी निर्भर होता है। जिस कृत्य की शिकायत की गई है क्या वह एक क्रूर कार्य था, इस प्रश्न का निर्धारण पूरे तथ्यों और पक्षों के बीच वैवाहिक संबंधों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए । इस संबंध में, संस्कृति, स्वभाव और जीवन का स्तर जैसे अन्य कई कारक हैं जिन पर विचार किया जाना चाहिए ।"

25. **विनीता सक्सेना** (उपरोक्त) वाले मामले में, उच्चतम न्यायालय ने क्रूरता के संबंध में, आगे मत व्यक्त किया है कि यह साबित किया जाना चाहिए कि विवाह में एक पक्षकार ने परिणाम की परवाह किए बिना इस तरह से व्यवहार किया है जो दूसरा पक्षकार ऐसी परिस्थितियों में नहीं कर सकता था, और उस कदाचार से दूसरे पक्षकार के स्वास्थ्य को क्षति पहुंची हो या पहुँचने की आशंका हो ।

26. **मायादेवी (श्रीमती)** बनाम **जगदीश प्रसाद**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने **शोभा रानी** बनाम **के मधुकर रेड्डी**[2] वाले मामले का अवलंब लेते हुए यह अभिनर्धारित किया कि क्रूरता का गठन करने के लिए शिकायत किया गया कृत्य गंभीर और घोर होना चाहिए ताकि इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सके कि युक्तियुक्त रूप से यह प्रत्याशा नहीं कि जा सकती कि पति-पत्नी एक-दूसरे के साथ रह सकते हैं और क्रूरता कि कोटि में आने वाला कृत्य, वैवाहिक जीवन में होने वाली नोक-झोंक से अधिक गंभीर होना चाहिए ।

27. **समर घोष** बनाम **जया घोष**[3] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने इस मुद्दे पर अपने पूर्ववर्ती निर्णयों की संवीक्षा और विश्लेषण करते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि मानसिक क्रूरता की कोई व्यापक परिभाषा नहीं हो सकती जिसके आधार पर मानसिक क्रूरता के सभी प्रकार के मामले विनिश्चित किए जा सकें । उच्चतम न्यायालय ने अपने निर्णय के पैरा 101 में कहा कि इस संबंध में मार्गदर्शन के लिए

---

[1] (2007) 3 एस. सी. सी. 136.

[2] (1988) 1 एस. सी.सी. 105.

[3] (2007) 4 एस. सी. सी. 511.

कोई समान मानक निर्धारित नहीं किया जा सकता और ऐसा मत व्यक्त करने के पश्चात् माननीय उच्चतम न्यायालय ने मानव व्यवहार के कुछ उदाहरण नीचे व्यक्त किए हैं जो मानसिक क्रूरता पर विचार करने हेतु सुसंगत हैं :–

"101..... अनुवर्ती पैराओं में दर्शाए गए दृष्टांत केवल उदहरणार्थ हैं और परम नहीं हैं –

(i) पक्षकारों के पूर्ण वैवाहिक जीवन पर विचार करने पर, यदि तीव्र मानसिक पीड़ा, संताप और कष्ट ऐसा है जिससे पार्टियों के लिए एक-दूसरे के साथ रहना संभव न हो सके, वह मानसिक क्रूरता के व्यापक मापदंडों के अंतर्गत आ सकती है ।

(ii) पक्षकारों के संपूर्ण वैवाहिक जीवन का व्यापक मूल्यांकन करने पर, यदि यह स्पष्ट हो जाता है कि स्थिति ऐसी है कि गलत पक्षकार को उचित रूप से इस तरह के आचरण के साथ दूसरे पक्षकार के साथ रहने के लिए नहीं कहा जा सकता है तब वह कृत्य क्रूरता कि कोटि में आ सकता है ।

(iii) केवल शीतलता या स्नेह की कमी क्रूरता नहीं हो सकती, भाषा की बार-बार अशिष्टता, व्यवहार में चिड़चिड़ापन, उदासीनता और उपेक्षा इस हद तक पहुंच जाए कि यह पति-पत्नी के लिए एक दूसरे के साथ रहना बिल्कुल असहनीय हो जाए तो इसे क्रूरता कहा जा सकता है ।

(iv) मानसिक क्रूरता मन की एक अवस्था है । लंबे समय तक दूसरे के आचरण के कारण एक पति या पत्नी में गहरी पीड़ा, निराशा, हताशा की भावना मानसिक क्रूरता का कारण बन सकती है ।

(v) पति या पत्नी को प्रताड़ित करने, परेशान करने या दयनीय जीवन बनाने के लिए अपमानजनक और निराशापूर्ण व्यवहार का निरंतर किया जाना, क्रूरता है ।

(vi) पति-पत्नी का निरंतर अनुचित आचरण और व्यवहार वास्तव में एक-दूसरे के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता है । ऐसे रोग का उपचार न कराए जाने की शिकायत करना जिसका परिणाम बहुत गंभीर और भयावय हो तब इस कृत्य को क्रूरता कहा जा सकता है ।

(vii) निरंतर निंदनीय आचरण, उपेक्षा किया जाना, उदासीनता या दाम्पत्य दया का सामान्य मानक से इतना कम पाया जाना कि उससे मानसिक स्वास्थ्य प्रभावित हो और परपीड़क सुख प्राप्त करना भी मानसिक क्रूरता की श्रेणी में आ सकता है ।

(viii) ऐसा आचरण जो ईर्ष्या, स्वार्थ और अधिकार-भावना से परे हो और दुख और असंतोष का कारण बने, क्रूरता कहलाएगा और भावनात्मक तनाव को मानसिक क्रूरता कि कोटि में रखकर विवाह-विच्छेद का आधार नहीं माना जा सकता ।

(ix) मामूली चिड़चिड़ाहट, झगड़ा, वैवाहिक जीवन की सामान्य टूट-फूट, जो दैनिक जीवन में घटित होती रहती हैं, मानसिक क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद देने के लिए पर्याप्त नहीं होगा ।

(x) विवाहित जीवन की समग्र रूप से समीक्षा की जानी चाहिए और कुछ ही वर्षों के व्यवहार का उदाहरण क्रूरता की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता । दुर्व्यवहार काफी लंबी अवधि के लिए लगातार होना चाहिए, जहां संबंध इस सीमा तक खराब हो गए हों कि पति-पत्नी के कार्यों और व्यवहार के कारण, गलत पक्ष को दूसरे पक्ष के साथ रहना अत्यंत कठिन लगता हो, तब इसे मानसिक क्रूरता कि कोटि में रखा जा सकता है ।

(xi) यदि कोई पति चिकित्सीय कारणों और अपनी पत्नी की सहमति या ज्ञान के बिना नसबंदी के ऑपरेशन के लिए

खुद को प्रस्तुत करता है और इसी तरह अगर पत्नी बिना चिकित्सीय कारण के या अपने पति की सहमति या ज्ञान के बिना अपनी नसबंदी या गर्भपात करवाती है, तो ऐसा कृत्य मानसिक क्रूरता की कोटि में आ सकता है ।

(xii) बिना किसी शारीरिक अक्षमता या वैध कारण के काफी समय तक संभोग करने से इनकार करने का एकतरफा निर्णय मानसिक क्रूरता की कोटि में आ सकता है ।

(xiii) शादी के बाद पति या पत्नी में से किसी एक का शादी से बच्चा न होने देने का एकतरफा निर्णय क्रूरता की कोटि में आ सकता है ।

(xiv) जहां पति-पत्नी लंबे समय से लगातार अलग रह रहे हैं, वहां समुचित रूप से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वैवाहिक बंधन में सुधार नहीं किया जा सकता । जहां विधि द्वारा समर्थित होने के बावजूद विवाह एक कल्पना बन गया हो वहाँ उस विवाह बंधन को बनाए रखने से इंकार करना के, विवाह की पवित्रता को दूषित करना ही नहीं अपितु दंपत्ति की भावनाओं का सम्मान करना है । ऐसी परिस्थितियों में, गलत पक्षकार का कृत्य मानसिक क्रूरता कि कोटि में आता है ।

28. उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों में अधिकथित कसौटी को लागू करने के बाद, हमारा यह विचार है कि पति द्वारा अपनी पत्नी के खिलाफ साबित किए गए आरोप "वैवाहिक जीवन कि सामान्य नोक-झोंक की परिधि में आते हैं । विद्वान् विचारण न्यायालय को इस तथ्य की सराहना करनी चाहिए थी कि पक्षकारों के बीच विवाह 1993 में हुआ था और वे अपनी कलह और मतभेदों के बावजूद 24 से अधिक वर्षों तक वैवाहिक बंधन में रहे और उन्होंने अपने बच्चों का पालन-पोषण एक साथ किया और ये बच्चे अब वयस्क हो चुके हैं । उनका यह नाता बहुत पहले समाप्त हो गया होता यदि पति पत्नी ने एक दूसरे को निरंतर क्षमा न किया होता ।

29. ऊपर दिए गए निर्णयों में उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित परीक्षणों को दृष्टिगत करते हुए, पत्नी के आचरण, जिसके लिए उसके पति ने उसे जिम्मेदार ठहराया है, को विवाह विच्छेद के प्रयोजनार्थ क्रूरता नहीं माना जा सकता । पति द्वारा बताई गई घटनाओं को केवल पक्षों के बीच गलतफहमी माना जा सकता है और इस तरह हमारा यह मानना है कि पति इस मामले में विवाह-विच्छेद के किसी भी आधार को साबित करने में विफल रहा है ।

30. यह विधि कि सुस्थापित प्रतिपादना है कि विवाह-विच्छेद का आधार बनने पर भी, न्यायालय अपने विवेक से विवाह-विच्छेद करने के बजाय 1955 के अधिनियम की धारा 13क के अधीन न्यायिक प्रथक्करण की डिक्री पारित कर सकता है ।

31. जैसे कि ऊपर चर्चा की गई है, पति विचारण न्यायालय में अपनी पत्नी के विरुद्ध अभित्यजन या क्रूरता के किसी भी आधार को सिद्ध करने में विफल रहा है । इस प्रकार, पति न तो विवाह-विच्छेद और न ही न्यायिक पृथक्करण की डिक्री का हकदार था । चूंकि विद्वान् जिला न्यायाधीश ने देखा था कि पति-पत्नी के बीच संबंध अधिक दुर्बल नहीं हैं और उनके संबंध के नवीनीकरण की संभावना हैं, इसलिए उन्हें न्यायिक प्रथक्करण की डिक्री देकर उनके इस रिश्ते को निलंबित नहीं करना चाहिए था ।

32. परिणामतः, आक्षेपित निर्णय अपास्त किया जाता है और अपील स्वीकार की जाती है ।

निचले न्यायालय का अभिलेख वापस भेजा जाए ।

अपील स्वीकार की गई ।

अस.

मलकीत सिंह और एक अन्य

बनाम

कोमल शर्मा

(2021 की नियमित द्वितीय अपील सं. 99)

तारीख 24 मार्च, 2021

न्यायमूर्ति जी. एस. संधवालिया

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 (1963 का 47) – धारा 22 [सपठित संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 55(1)(क)] – अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विक्रय करार – प्रत्यर्थी द्वारा अग्रिम राशि का संदाय किया जाना – अपीलार्थी का संपत्ति पर हक न पाया जाना – प्रत्यर्थी द्वारा अग्रिम धन का प्रतिदाय किए जाने की मांग किया जाना – यदि विक्रेता अपने संपत्ति पर के हक में किसी ऐसी तात्विक त्रुटि को प्रकट नहीं करता है जिसे वह तो जानता है किन्तु क्रेता मामूली सावधानी से उसका पता नहीं लगा सकता, तब ऐसे प्रकटीकरण का लोप कपटपूर्ण समझा जाएगा, अतः अपीलार्थी उक्त राशि का प्रतिदाय करने का जिम्मेदार है और निचले दोनों न्यायालयों के निर्णयों में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

यह द्वितीय अपील निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए उन समवर्ती निष्कर्षों को अपास्त करने के लिए फाइल की गई है जिसके द्वारा वादी-प्रत्यर्थी के पक्ष में अग्रिम धन के रूप में 55 लाख रुपए की वसूली हेतु डिक्री पारित की गई थी साथ ही इस राशि पर 9 प्रतिशत की दर से वाद फाइल किए जाने की तारीख से आदेश पारित किए जाने की तारीख तक की अवधि के लिए ब्याज का संदाय किए जाने तथा इसी दर पर भावी ब्याज का भुगतान किए जाने का भी आदेश किया गया । यह आदेश सिविल जज, एस. ए. एस. नगर, मोहाली द्वारा तारीख 12 मार्च, 2018 के पारित निर्णय और डिक्री के विरुद्ध किया गया है जिसे

तत्कालीन जिला न्यायाधीश द्वारा तारीख 14 अगस्त, 2019 को अपील की सुनवाई के परिणामस्वरूप मान्य ठहराया गया है । जिला न्यायालय के आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की है । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – जब एक बार अपीलार्थियों का संपूर्ण उस भूखंड पर विधिमान्य हक नहीं था जिसके संबंध में उन्होंने करार निष्पादित किया था तब वे यह दावा नहीं कर सकते कि वे प्राप्त की गई 55 लाख रुपए की एक बड़ी राशि अपने पास रखने के लिए हकदार हैं । इस आश्वासन के कारण कि उनके पास हक था, वादी को इस वचन के आधार पर इतनी बड़ी राशि से वंचित किया गया कि वे विक्रय विलेख निष्पादित करने की स्थिति में थे और इस संबंध में करार तैयार किया गया था । वादी द्वारा तारीख 7 जनवरी, 2014 को दांडिक कार्रवाई भी संस्थित की गई थी जिसके दौरान अपीलार्थियों को इस आधार पर दोषमुक्त किया गया है कि वादी समुचित सिविल उपचार का उपयोग करने के लिए स्वतंत्र होगा । यह विवाद सिविल प्रकृति का था और यदि यह राशि गलत तरीके से प्राप्त की गई होती तो इसकी वसूली की जा सकती थी । संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 55(1)(क) के अनुसार उस संपत्ति में या विक्रेता के उस संपत्ति पर के हक में किसी ऐसी तात्विक त्रुटि को, जिसे विक्रेता जानता हो और क्रेता नहीं जानता हो और क्रेता जिसका पता मामूली सावधानी से नहीं लगा सकता था, क्रेता को प्रकट करे । ऐसे प्रकटीकरण का लोप किया जाना कपटपूर्ण समझा जाएगा । इस प्रकार, यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि यह प्रकट करना अपीलार्थियों का दायित्व था कि उनको संपत्ति पर पूर्ण हक प्राप्त था, अत:, ऐसा न किए जाने पर करार का अवलंब नहीं लिया जा सकता था । इस प्रकार क्रेता अग्रिम धन का प्रतिदाय कराने के लिए हकदार है । विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 22 में भी यह उपबंध किया गया है कि भावी क्रेता अग्रिम धन के प्रतिदाय का दावा करने का हकदार है । इन परिस्थितियों में, यह नहीं कहा जा सकता है कि निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए निष्कर्षों में ऐसी कोई अवैधता या

अनियमितता है जिसके कारण इस न्यायालय को हस्तक्षेप करना पड़े और इस संबंध में विधि का कोई भी सारभूत प्रश्न उद्भूत नहीं होता है । यह दलील कि अपीलार्थी धनराशि का समपहरण करने के हकदार हैं, निराधार है क्योंकि वादी की ओर से कोई भी त्रुटि कारित नहीं की गई है और ऐसा नहीं है कि वह विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए तैयार और इच्छुक नहीं था । वास्तव में, तारीख 10 मई, 2013 के 10 दिन बाद अर्थात् तारीख 20 मई, 2013 को करार निष्पादित किए जाने के पश्चात् उसके द्वारा 5 लाख रुपए का संदाय और किया गया था । अपीलार्थियों का यह पक्षकथन नहीं है कि उन्होंने वादी-प्रत्यर्थी को इस संबंध में नोटिस तामील कराया था कि वह 22 लाख रुपए की शेष राशि का भुगतान करे क्योंकि वे उसके पक्ष में पहले से ही विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए तैयार थे । (पैरा 10, 11, 12 और 14)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2018]	(2018) 1 एस. सी. सी. 610 = ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 5682 : **रावणसिद्दइया** बनाम **गंगम्मा** उर्फ **शशिकला और एक अन्य** ;	13
[2016]	(2016) 4 आर. सी. आर. (सिविल) 469 : **बसवनटप्पा** बनाम **इरप्पा (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधि और अन्य** ;	8
[2015]	(2015) 1 पी. एल. जे. 385 : **कृष्ण कुमार** बनाम **राम पाल** ;	9
[2009]	(2009) 17 एस. सी. सी. 341 = ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 2439 : **तिरीवीधि चनैया** बनाम **गुडीपुडी वेंकट सुब्बाराव (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधि और अन्य ।**	12

अपीली सिविल अधिकारिता : 2021 की नियमित द्वितीय अपील सं. 99.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री कन्हैया सोनी

प्रत्यर्थी की ओर से –

न्यायमूर्ति जी. एस. संधवालिया – वर्तमान नियमित द्वितीय अपील निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए उन समवर्ती निष्कर्षों को अपास्त करने के लिए फाइल की गई है जिसके द्वारा वादी-प्रत्यर्थी के पक्ष में अग्रिम धन के रूप में 55 लाख रुपए की वसूली हेतु डिक्री पारित की गई थी साथ ही इस राशि पर 9 प्रतिशत की दर से वाद फाइल किए जाने की तारीख से आदेश पारित किए जाने की तारीख तक की अवधि के लिए ब्याज का संदाय किए जाने तथा इसी दर पर भावी ब्याज का भुगतान किए जाने का भी आदेश किया गया । यह आदेश सिविल जज, एस. ए. एस. नगर, मोहाली द्वारा तारीख 12 मार्च, 2018 के पारित निर्णय और डिक्री के विरुद्ध किया गया था जिसे तत्कालीन जिला न्यायाधीश द्वारा तारीख 14 अगस्त, 2019 को अपील की सुनवाई के परिणामस्वरूप मान्य ठहराया गया ।

2. शुरू-शुरू में अपील सं. 5594/2019 फाइल की गई थी जिसे वापस लिए जाने के परिणामस्वरूप 18 फरवरी, 2020 को खारिज कर दिया गया था और समन्वय न्यायपीठ ने यह अभिलिखित किया कि थोड़ी देर बहस करने के पश्चात् विद्वान् काउंसेल ने इस स्वतंत्रता के साथ वर्तमान अपील वापस ली है कि वह नए सिरे से दोबारा अपील फाइल कर सके । परिणामत: अपील इस अधिकार को सुरक्षित रखते हुए खारिज कर दी गई । इस प्रकार द्वितीय अपील फाइल की गई है जिसके साथ इस अपील को फाइल करने में हुए 123 दिन के विलंब की माफी के लिए आवेदन भी प्रस्तुत किया गया है जिसमें यह प्रकथन किया गया है कि पूर्ववर्ती काउंसेल ने अपीलार्थी को सूचित नहीं किया था और जब नीलाम-नोटिस चस्पा किया गया तब जाकर अपीलार्थी को इस संबंध में जानकारी मिली और उसने विलंब की माफी की ईप्सा की है ।

3. प्रथमत: यदि हम प्रथम अपील वापस लिए जाने की तारीख को गणना में लें तब भी इस न्यायालय की राय में 123 दिन का विलंब नहीं है क्योंकि अपील न्यायालय द्वारा तारीख 14 अगस्त, 2019 को निर्णय और डिक्री पारित किए गए थे और अपील 1 मार्च, 2021 से पहले फाइल नहीं हो सकी । चूंकि मुख्य अपील नीचे दिए गए कारणों के आधार पर गुणागुण को दृष्टिगत करते हुए विनिश्चित की जा रही है, इसलिए विलंब की माफी के लिए फाइल किए गए आवेदन पर गंभीर रूप से विचार करना आवश्यक नहीं है ।

4. पेपर-बुक (अभिलेख) का परिशीलन करने पर यह दर्शित होता है कि तारीख 10 मई, 2013 का विक्रय-करार पक्षकारों के बीच, ग्राम बूधनपुर, तहसील बनूर, जिला एस. ए. एस. नगर, मोहाली में स्थित 32 बीघा भूमि (40,25,000/- रुपए प्रति एकड़ की दर से) निष्पादित किया गया था । यह भूखंड 82 बीघा, 9 बिस्वा में से 2006-2007 में की गई जमाबंदी के आधार पर लिया गया था । इस भूखंड के विक्रय विलेख के लिए अंतिम तारीख 12 अगस्त, 2013 नियत की गई थी और तारीख 20 मई, 2013 को 5,00,000/- रुपए की अतिरिक्त राशि भी प्राप्त की गई थी । तारीख 12 अगस्त, 2013 को स्वयं अपीलार्थियों ने समय-सीमा बढ़ाई और उक्त करार के पिछले पृष्ठ पर प्रविष्टि करते हुए अंतिम तारीख 22 अगस्त, 2013 नियत की ।

5. वाद इस आधार पर फाइल किया गया कि प्रतिवादी 32 बीघा भूमि के नहीं अपितु केवल 7 बीघा भूमि के स्वामी हैं, अत: यह करार कपटपूर्ण किया गया है जिसके संबंध में तारीख 7 जनवरी, 2014 को भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 406, 419, 420 और 120-ख के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 10/2014 पुलिस थाना राजपुरा नगर में प्रतिवादियों के विरुद्ध दर्ज कराई गई थी । वादी-प्रत्यर्थी का यह पक्षकथन था कि वह करार में किए गए अपने वचन को पूरा करने के लिए तत्पर व इच्छुक है और वह उप-रजिस्टार, बनूर के समक्ष पेश भी हुआ था और अपनी उपस्थिति भी दर्ज कराई थी । परिणामत: तारीख 10 मई, 2016 को उक्त रकम की वसूली के लिए वाद फाइल किया गया था ।

6. अपीलार्थियों की ओर से यह प्रतिरक्षा ली गई थी कि 55 लाख रुपए के अग्रिम धन की राशि समपहृत हो गई थी क्योंकि वादी करार में दिए गए अपने वचन को पूरा नहीं कर सका था और तारीख 27 अगस्त, 2013 को उसे इस संबंध में विधिक-नोटिस भी जारी किया गया था ।

7. प्रतिरक्षा साक्षी-1 (इस मामले में का अपीलार्थी सं. 1) के कथन को दृष्टिगत करने के पश्चात् विचारण न्यायालय ने यह अभिलिखित किया कि अग्रिम धन के रूप में 55 लाख रुपए की राशि प्राप्त करना स्वीकार किया गया था और यह भी स्वीकार किया गया था कि वह 27 बीघा भूमि का ही स्वामी था जिसका उल्लेख पटवारी हलका-बूधनपुर अर्थात् तेजिन्द्र पाल सिंह (प्रतिरक्षा साक्षी-3) के कथन में किया गया है और इस साक्षी की परीक्षा वादी (अभियोजन साक्षी-2) द्वारा कराई गई थी । यह भी उल्लेख किया गया है कि अपीलार्थी सं. 2, अपीलार्थी सं. 1 का भाई होने के नाते प्रतिपरीक्षा के लिए साक्षी कठघरे में नहीं आया, अत: उसके साक्ष्य पर विचार नहीं किया जा सकता । परिणामस्वरूप उस भूमि का विक्रय विलेख निष्पादित न किए जाने के कारण, जिसके संबंध में करार निष्पादित किया गया था, अपीलार्थियों के इस पक्षकथन को खारिज करते हुए राशि का प्रतिदाय किए जाने का आदेश पारित किया गया कि करार रद्द किया जा चुका था और यह कि उक्त राशि समपहृत हो गई थी क्योंकि वादी-प्रत्यर्थी 22 लाख रुपए की शेष राशि का संदाय करने के लिए तैयार और इच्छुक था ।

8. निचले अपील न्यायालय ने **बसवनटप्पा** बनाम **इरप्पा (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधि और अन्य**[1] वाले मामले में पारित किए गए उच्चतम न्यायालय के निर्णय का अवलंब लेते हुए अपील खारिज की है ।

9. **कृष्ण कुमार** बनाम **रामपाल**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने इस तथ्य के विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए फाइल की गई वादी की अपील खारिज की कि प्रतिवादी को निर्बंधित शर्त के साथ भूमि का आबंटन किया गया था और यह अभिनिर्धारित किया कि विनिर्दिष्ट

---

[1] (2016) 4 आर. सी. आर. (सिविल) 469.

[2] (2015) 1 पी. एल. जे. 385.

अनुपालन को प्रवृत्त नहीं किया जा सकता । तथापि, इस तथ्य को दृष्टिगत करते हुए कि उसने 1,15,000/- रुपए की राशि प्राप्त की है, यह अभिनिर्धारित किया गया कि उक्त राशि का प्रतिदाय 9 प्रतिशत ब्याज की दर के साथ किया जाएगा ।

10. जब एक बार अपीलार्थियों का उस भूखंड पर संपूर्ण विधिमान्य हक नहीं था जिसके संबंध में उन्होंने करार निष्पादित किया था तब वे यह दावा नहीं कर सकते कि वे प्राप्त की गई 55 लाख रुपए की एक बड़ी राशि अपने पास रखने के लिए हकदार हैं । इस आश्वासन के कारण कि उनके पास हक था और यह कि वे विक्रय विलेख निष्पादित करने की स्थिति में थे वादी को इस वचन के आधार पर इतनी बड़ी राशि से वंचित किया गया कि और इस संबंध में करार भी तैयार किया गया था । वादी द्वारा तारीख 7 जनवरी, 2014 को दांडिक कार्रवाई भी संस्थित की गई थी जिसके दौरान अपीलार्थियों को इस आधार पर दोषमुक्त किया गया है कि वादी समुचित सिविल उपचार का उपयोग करने के लिए स्वतंत्र होगा । यह विवाद सिविल प्रकृति का था और यदि यह राशि गलत तरीके से प्राप्त की गई होती तो इसकी वसूली की जा सकती थी ।

11. संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 55(1)(क) के अनुसार उस संपत्ति में या विक्रेता के उस संपत्ति पर के हक में किसी ऐसी तात्विक त्रुटि को, जिसे विक्रेता जानता हो और क्रेता नहीं जानता हो और क्रेता जिसका पता मामूली सावधानी से नहीं लगा सकता था, क्रेता को प्रकट करे । ऐसे प्रकटीकरण का लोप किया जाना कपटपूर्ण समझा जाएगा । इस प्रकार, यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि यह प्रकट करना अपीलार्थियों का दायित्व था कि उनको संपत्ति पर पूर्ण हक प्राप्त था, अत:, ऐसा न किए जाने पर करार का अवलंब नहीं लिया जा सकता था । इस प्रकार क्रेता अग्रिम धन का प्रतिदाय कराने के लिए हकदार है ।

12. विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 22 में भी यह उपबंध किया गया है कि भावी क्रेता अग्रिम धन के प्रतिदाय का दावा

करने का हकदार है । **तिरीवीधि चनैया** बनाम **गुडीपुडी वेंकट सुब्बाराव (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधि और अन्य**[1] वाले मामले में उच्च न्यायालय के समक्ष ऐसी ही स्थिति आई थी जिसमें भूमि अर्जन की कार्यवाही से उद्भूत मुकदमेबाजी के कारण करार प्रवृत्त नहीं किया जा सका । इस प्रकार विचारण न्यायालय ने विनिर्दिष्ट अनुपालन के वाद को धनराशि जमा कराने की शर्त के साथ मंजूर किया । उच्च न्यायालय ने उक्त निर्णय उलट दिया और यह निष्कर्ष निकाला कि क्रेता करार में किए गए अपने वचन को पूरा करने के लिए तैयार नहीं है और वह भूमि अर्जन की कार्यवाही से अवगत है । उच्चतम न्यायालय द्वारा इस आधार पर अपील मंजूर की गई कि नोटिस तामील किया जा चुका था और प्रतिदाय की मांग की गई थी जिसके आधार पर विक्रेता को समपहरण संबंधी खंड का अवलंब लेना पड़ा । इन परिस्थितियों में विशेष इजाजत याचिका मंजूर की गई और ऐसा न किए जाने की स्थिति में ब्याज के साथ अग्रिम धनराशि वापस किए जाने का निदेश जारी किया गया । इस प्रकार, प्रत्यर्थी को उक्त अनुतोष पाने के लिए ठीक ही हकदार ठहराया गया है ।

13. **रावणसिद्दइया** बनाम **गंगम्मा** उर्फ **शशिकला और एक अन्य**[2] वाले मामले में साम्या का संतुलन बनाने के लिए अग्रिम धन का संदाय किए जाने का निदेश उन विधिक प्रतिनिधियों को वाद संपत्ति का कब्जा वापस दिलाने की शर्त के साथ, दिया गया जिनका पिता वाद भूमि का मूल स्वामी था और जिसने वाद भूमि क्रय करने के लिए करार निष्पादित किया था । भावी क्रेता को भूमि का कब्जा भी दिया गया था जिसने विधिक प्रतिनिधियों द्वारा घोषणा और कब्जे के लिए फाइल किए गए वाद का प्रतिवाद किया था । विचारण न्यायालय ने प्रत्यर्थियों के पक्ष में उनके स्वामित्व को लेकर घोषणात्मक डिक्री फाइल की किंतु कब्जे का लाभ नहीं दिया । इसी दौरान विनिर्दिष्ट अनुपालन का वाद

---

[1] (2009) 17 एस. सी. सी. 341 = ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 2439.

[2] (2018) 1 एस. सी. सी. 610 = ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 5682.

फाइल किया गया और खारिज कर दिया गया । विधिक प्रतिनिधियों द्वारा फाइल की गई अपील उच्च न्यायालय द्वारा मंजूर की गई और उन्हें वाद भूमि के कब्जे का दावा करने के लिए हकदार अभिनिर्धारित किया गया क्योंकि भावी क्रेता की ओर से विनिर्दिष्ट अनुपालन का वाद खारिज किया गया था । इन परिस्थितियों में व्यथित क्रेता को अनुबद्ध अवधि के भीतर अग्रिम धनराशि का प्रतिदाय किए जाने के लिए हकदार अभिनिर्धारित किया गया जिसका व्यतिक्रम किए जाने पर 6 प्रतिशत वार्षिक ब्याज की दर से भुगतान करना होगा और यह निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को भी लागू होगा ।

14. इन परिस्थितियों में, यह नहीं कहा जा सकता है कि निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए निष्कर्षों में ऐसी कोई अवैधता या अनियमितता है जिसके कारण इस न्यायालय को हस्तक्षेप करना पड़े और इस संबंध में विधि का कोई भी सारभूत प्रश्न उद्भूत नहीं होता है । यह दलील कि अपीलार्थी धनराशि का समपहरण करने के हकदार हैं, निराधार है क्योंकि वादी की ओर से कोई भी त्रुटि कारित नहीं की गई है और ऐसा नहीं है कि वह विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए तैयार और इच्छुक नहीं था । वास्तव में, तारीख 10 मई, 2013 के 10 दिन बाद अर्थात् तारीख 20 मई, 2013 को करार निष्पादित किए जाने के पश्चात् उसके द्वारा 5 लाख रुपए का संदाय और किया गया था । अपीलार्थियों का यह पक्षकथन नहीं है कि उन्होंने वादी-प्रत्यर्थी को इस संबंध में नोटिस तामील कराया था कि वह 22 लाख रुपए की शेष राशि का भुगतान करे क्योंकि वे उसके पक्ष में पहले से ही विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए तैयार थे ।

15. तद्नुसार, वर्तमान अपील आरंभ से ही खारिज की जाती है क्योंकि विधि का कोई भी सारभूत प्रश्न उद्भूत नहीं हुआ है ।

अपील खारिज की गई ।

अस.

सुखविन्दर राम

बनाम

भारत संघ और अन्य

(2021 की सिविल रिट याचिका सं. 5991)

तारीख 25 मार्च, 2021

न्यायमूर्ति जसगुरप्रीत सिंह पुरी

पासपोर्ट अधिनियम, 1967 (1967 का 15) – धारा 6 – पासपोर्ट पुनः जारी किए जाने का आवेदन – याची के विरुद्ध प्रथम इत्तिला रिपोर्ट का लंबित पाया जाना – याची द्वारा पासपोर्ट आवेदन वापस लिए जाने के बाद पुनः नए सिरे से आवेदन किया जाना – तत्पश्चात् द्वितीय आवेदन के लंबित रहते हुए याचिका फाइल किया जाना – याची ने न्यायालय के समक्ष यह तथ्य छिपाया है कि एक बार पासपोर्ट आवेदन खारिज होने के पश्चात् उसने दूसरी बार नए सिरे से आवेदन फाइल किया है जिसके लंबित रहने के दौरान याचिका फाइल की गई है, अतः याची ने सत्य और पूर्ण तथ्यों का उल्लेख नहीं किया है, इसलिए याची के पक्ष में उत्प्रेषण रिट जारी नहीं की जा सकती ।

वर्तमान याचिका संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226/227 के अधीन फाइल की गई है जिसमें प्रत्यर्थी सं.2 द्वारा तारीख 4 फरवरी, 2021 को जारी उस पत्र (उपाबंध पी-11) को अपास्त कराने हेतु रिट, आदेश या निदेश विशेषकर उत्प्रेषण प्रकृति का जारी कराने के लिए प्रार्थना की गई है जिसके अनुसार याची की ओर से प्रस्तुत की गई फाइल बंद कर दी गई थी । जब तारीख 16 मार्च, 2021 को प्रस्ताव सूचना जारी की गई थी, तब याची के विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया था कि याची ने उसके पासपोर्ट में उसकी पत्नी का नाम जुड़वाने के लिए आवेदन किया था किंतु पासपोर्ट प्राधिकारियों ने इस संबंध में याची से अतिरिक्त ब्यौरे और दस्तावेज मांगे । विद्वान् काउंसेल ने यह भी निवेदन किया कि

याची कई बार पासपोर्ट कार्यालय आ चुका है और उसने आवश्यक सभी दस्तावेज प्रस्तुत किए हैं किंतु फिर भी पासपोर्ट अधिकारियों ने उन पर विचार नहीं किया है बल्कि उन्होंने ऐसा आदेश (उपाबंध पी-11) पारित किया है जिसके द्वारा याची के आवेदन को इस आधार पर खारिज किया है कि याची की ओर से कोई भी कदम नहीं उठाया गया है । याची के विद्वान् काउंसेल ने स्पष्ट रूप से यह भी निवेदन किया है कि याची कई बार पासपोर्ट कार्यालय गया है किंतु यह आदेश गलत तथ्यों के आधार पर जारी किया गया है और यह कि चूंकि वह इटली में कार्यरत है इसलिए उसे 6 अप्रैल, 2021 को प्रस्थान करना होगा । याची की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा रिट याचिका में किए गए कथनों और दी गई दलीलों के आधार पर इस न्यायालय ने तारीख 25 मार्च, 2021 के लिए प्रस्ताव-नोटिस (प्रस्ताव सूचना) जारी की और प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 (भारत संघ और क्षेत्रीय पासपोर्ट अधिकारी, जालंधर) की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री अंकुर शर्मा ने प्रस्ताव-नोटिस की तामीली स्वीकार की । राज्य की ओर से भी उप महाधिवक्ता, पंजाब हाजिर हुए । क्षेत्रीय पासपोर्ट अधिकारी, जालंधर को अगली तारीख की सुनवाई से पूर्व शपथ-पत्र फाइल करने का निदेश दिया गया और भारत संघ के विद्वान् काउंसेल को यह भी निदेश दिया गया कि यदि याची ने सभी दस्तावेज फाइल कर दिए हैं तब क्या उनके आधार पर विधि के अनुसरण में आक्षेपित आदेश का पुनर्विलोकन किया जा सकता है या नहीं । याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि याची को उसके पासपोर्ट से मात्र इस आधार पर वंचित किया गया है कि उसके विरुद्ध प्रथम इत्तिला रिपोर्ट लंबित है और इस प्रकार वंचित किए जाने से विधि का अतिक्रमण होता है क्योंकि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट का मात्र लंबित रहना पासपोर्ट की नामंजूरी का आधार नहीं हो सकता । प्रस्ताव-नोटिस के आदेश के अनुसरण में सहायक पासपोर्ट अधिकारी, जालंधर द्वारा शपथ-पत्र के माध्यम से एक संक्षिप्त उत्तर फाइल किया गया है जिसमें यह निवेदन किया गया है कि याची ने इस न्यायालय से महत्वपूर्ण तथ्य छिपाए हैं । शपथ-पत्र में यह भी निवेदन

किया गया है कि याची ने पासपोर्ट के लिए आवेदन किया था और उसे पेरिस में भारतीय दूतावास से तारीख 14 नवंबर, 2009 को जारी किए गए पुराने पासपोर्ट के आधार पर इटली ने भारतीय दूतावास से तारीख 10 मई, 2010 को 1 वर्ष की अवधि के लिए पासपोर्ट जारी किया गया था जिसकी विधिमान्यता तारीख 20 मई, 2011 तक थी और उस पासपोर्ट में याची का नाम सुखविन्दर राम पुत्र भजन राम और कुलवंत तथा जन्मतिथि 2 मार्च, 1980 लिखी हुई थी । इसके पश्चात् तारीख 26 दिसंबर, 2012 को याची ने पुन: अपने पुराने अल्पकालीन पासपोर्ट (वैधता की तारीख 10 मई, 2010) के आधार पर नया पासपोर्ट जारी कराने के लिए आवेदन किया और उसे तारीख 27 अप्रैल, 2012 को पुन: पासपोर्ट जारी किया गया जिसकी वैधता की अंतिम तारीख 26 अप्रैल, 2022 थी । तारीख 1 दिसंबर, 2020 को याची ने अपने पुराने पासपोर्ट के आधार पर नया पासपोर्ट जारी कराने के लिए प्रत्यर्थी के कार्यालय में आवेदन किया जिसमें उसने पवनदीप गिल का नाम अपनी पत्नी के रूप में दर्ज कराया और इस पासपोर्ट के लिए किए गए आवेदन में, 2020 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 23 को छिपाया जो याची के विरुद्ध दर्ज की गई थी । तथापि, पासपोर्ट के लिए उसका आवेदन मंजूर किया गया और पासपोर्ट पुन: जारी किए जाने के लिए कार्यवाही आरंभ की गई जिसमें पत्नी का नाम उपरोक्त रूप में दर्ज किया गया और कार्यालय की प्रक्रिया के अनुसार याची का मामला उसी दिन पुलिस प्राधिकारियों के समक्ष प्रस्तुत किया गया । तथापि, तारीख 16 दिसंबर, 2020 को पुलिस प्राधिकारियों ने याची के विरुद्ध टिप्पणी करते हुए अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें यह उल्लेख किया कि उपर्युक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट से संबंधित मामला न्यायालय में लंबित है, अत: उसकी पत्नी के नाम के साथ उसके इस कृत्य, आचरण और पुलिस द्वारा प्रस्तुत की गई प्रतिकूल रिपोर्ट के कारण नया पासपोर्ट पुन: जारी नहीं किया जा सका । शपथ-पत्र में यह भी निवेदन किया गया कि याची ने जब पासपोर्ट पुन: जारी किए जाने के लिए आवेदन किया था तब उसने अपने विरुद्ध लंबित प्रथम इत्तिला रिपोर्ट जैसे तात्विक तथ्य को छिपाया था । शपथ-पत्र में

यह भी कथन किया गया है कि तारीख 4 फरवरी, 2021 को याची प्रत्यर्थी सं. 2 के कार्यालय पर गया और उसने यह स्व-घोषणा की कि उसकी वर्तमान फाइल बंद कर दी जाए और इस दौरान उसने यह वचन दिया कि न्यायालय की अनुमति से वह नए सिरे से मामला फाइल करेगा । याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान याचिका और प्रस्ताव-सूचना आदेश से यह प्रतिबिम्बित होता है कि याची ने अपनी पत्नी का नाम पासपोर्ट में जुड़वाने के लिए आवेदन किया था और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि उसके विरुद्ध प्रथम इत्तिला रिपोर्ट लंबित है, पासपोर्ट पुन: जारी किए जाने से इनकार करने का आधार नहीं बन सकता और यह कि याची को तारीख 4 फरवरी, 2021 के पत्र (उपाबंध पी-11) के अनुसार पासपोर्ट जारी किए जाने से इनकार किया गया है । यह इस कारण से हुआ कि भारत संघ के विद्वान् काउंसेल को यह निदेश दिया गया कि यदि याची ऐसे सभी दस्तावेज उपलब्ध कराता है जो अपेक्षित है, तब ऐसी स्थिति में आक्षेपित आदेश का पुनर्विलोकन विधि के अनुसरण में किया जा सकता है या नहीं । तारीख 4 फरवरी, 2021 का आक्षेपित आदेश वर्तमान मामले में उपाबंध-पी-11 है । तथापि, यह आश्चर्य की बात है कि इस आक्षेपित आदेश के पश्चात्, जो तारीख 4 फरवरी, 2021 को पारित किया गया था, याची ने कभी-भी इसका उल्लेख वर्तमान याचिका में नहीं किया है कि पासपोर्ट प्राधिकारियों द्वारा इनकार किए जाने के पश्चात् याची ने नए सिरे से आवेदन फाइल किया था जो तारीख 4 फरवरी, 2021 के आक्षेपित आदेश (उपाबंध पी-11) द्वारा अनुज्ञात किया गया । इसके पश्चात् सहायक पासपोर्ट अधिकारी द्वारा उत्तर फाइल किया गया जिसमें यह कथन किया गया है कि याची ने तारीख 4 मार्च, 2021 को अर्थात् तारीख 4 फरवरी, 2021 के निरस्तीकरण आदेश के पश्चात् नए सिरे से आवेदन फाइल किया है और वह पहले से प्रक्रियाधीन है । याची द्वारा जानबूझकर महत्वपूर्ण तथ्यों को छिपाया गया है । यदि याचिका में यह पहले ही प्रकट कर दिया होता कि तारीख 4 फरवरी, 2021 के निरस्तीकरण आदेश के पश्चात् आवेदन लंबित था, तब यह न्यायालय पासपोर्ट अधिकारी को यह निदेश न देता कि तारीख

4 फरवरी, 2021 के आक्षेपित आदेश का पुनर्विलोकन करने की संभावना पर विचार किया जाए । संपूर्ण रिट याचिका इस आधार पर फाइल की गई कि तारीख 4 फरवरी, 2021 को उपाबंध पी-11 के अनुसार याची का आवेदन निरस्त किया गया है, अत: वर्तमान याचिका फाइल की गई है । तथापि, पासपोर्ट प्राधिकारी द्वारा सही तथ्यात्मक स्थिति स्पष्ट करते हुए यह उल्लेख किया गया है कि याची ने बाद में अर्थात् 4 मार्च, 2021 को एक अन्य आवेदन फाइल किया था जो पासपोर्ट प्राधिकारियों के समक्ष अभी भी लंबित है । इसके अतिरिक्त याची ने यह भी छिपाया है कि उसने उपाबंध आर-2 के अनुसार स्वयं यह निवेदन किया था कि उसकी फाइल बंद कर दी जाए । तथापि, उसने वर्तमान याचिका इस आधार पर फाइल की है कि उसकी फाइल बंद कर दी गई है । इस प्रक्रम पर इस न्यायालय ने इस संबंध में विचार नहीं किया है कि क्या प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के लंबित रहने के आधार पर आवेदन निरस्त करना विधि की दृष्टि से गलत है या नहीं किंतु इस न्यायालय ने इस मुद्दे पर अवश्य ही विचार किया है कि जो भी व्यक्ति न्यायालय में आवेदन करता है उसे छलकपट का सहारा नहीं लेना चाहिए और न्यायालय के समक्ष सत्य और पूर्ण तथ्यों को प्रस्तुत करना चाहिए । वर्तमान मामले में इस न्यायालय का यह मत है कि याची ने सत्य और पूर्ण तथ्यों का उल्लेख नहीं किया है और वह भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन असाधारण अधिकारिता का अवलंब नहीं ले सकता । तथापि, इस आदेश के अधीन विधि के अनुसरण में अपनी शिकायत के प्रतितोष के लिए पासपोर्ट प्राधिकारियों के समक्ष आवेदन करने के लिए याची पर कोई रोक नहीं है । (पैरा 11 और 12)

सिविल रिट अधिकारिता : 2021 की सिविल रिट याचिका सं. 5991.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226/227 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री विवेक के. ठाकुर

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री अंकुर शर्मा और पंकज गुप्ता (अपर महाधिवक्ता)

न्यायमूर्ति जसगुरप्रीत सिंह पुरी – वर्तमान याचिका संविधान,

1950 के अनुच्छेद 226/227 के अधीन फाइल की गई है जिसमें प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा तारीख 4 फरवरी, 2021 को जारी उस पत्र (उपाबंध पी-11) को अपास्त कराने हेतु रिट, आदेश या निदेश विशेषकर उत्प्रेषण प्रकृति का जारी कराने के लिए प्रार्थना की गई है जिसके अनुसार याची की ओर से प्रस्तुत की गई फाइल बंद कर दी गई थी ।

2. जब तारीख 16 मार्च, 2021 को प्रस्ताव सूचना जारी की गई थी, तब याची के विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया था कि याची ने उसके पासपोर्ट में उसकी पत्नी का नाम जुड़वाने के लिए आवेदन किया था किंतु पासपोर्ट प्राधिकारियों ने इस संबंध में याची से अतिरिक्त ब्यौरे और दस्तावेज मांगे ।

3. विद्वान् काउंसेल ने यह भी निवेदन किया कि याची कई बार पासपोर्ट कार्यालय आ चुका है और उसने आवश्यक सभी दस्तावेज प्रस्तुत किए हैं किंतु फिर भी पासपोर्ट अधिकारियों ने उन पर विचार नहीं किया है बल्कि उन्होंने ऐसा आदेश (उपाबंध पी-11) पारित किया है जिसके द्वारा याची के आवेदन को इस आधार पर खारिज किया है कि याची की ओर से कोई भी कदम नहीं उठाया गया है ।

4. याची के विद्वान् काउंसेल ने स्पष्ट रूप से यह भी निवेदन किया है कि याची कई बार पासपोर्ट कार्यालय गया है किंतु यह आदेश गलत तथ्यों के आधार पर जारी किया गया है और यह कि चूंकि वह इटली में कार्यरत है इसलिए उसे 6 अप्रैल, 2021 को प्रस्थान करना होगा ।

5. याची की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा रिट याचिका में किए गए कथनों और दी गई दलीलों के आधार पर इस न्यायालय ने तारीख 25 मार्च, 2021 के लिए प्रस्ताव-नोटिस (प्रस्ताव सूचना) जारी की और प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 (भारत संघ और क्षेत्रीय पासपोर्ट अधिकारी, जालंधर) की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री अंकुर शर्मा ने प्रस्ताव-नोटिस की तामीली स्वीकार की । राज्य की ओर से भी उप महाधिवक्ता, पंजाब हाजिर हुए । क्षेत्रीय पासपोर्ट अधिकारी, जालंधर को अगली तारीख की सुनवाई से पूर्व शपथ-

पत्र फाइल करने का निदेश दिया गया और भारत संघ के विद्वान् काउंसेल को यह भी निदेश दिया गया कि यदि याची ने सभी दस्तावेज फाइल कर दिए हैं तब क्या उनके आधार पर विधि के अनुसरण में आक्षेपित आदेश का पुनर्विलोकन किया जा सकता है या नहीं । प्रस्ताव-नोटिस का आदेश निम्न प्रकार है :–

> "याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि याची ने पासपोर्ट प्राधिकारियों के समक्ष पासपोर्ट में अपनी पत्नी का नाम जुड़वाने के लिए आवेदन किया था किंतु पासपोर्ट प्राधिकरियों ने उपाबंध पी-10 के अनुसार कुछ अतिरिक्त ब्यौरे और दस्तावेज मांगे । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि याची पासपोर्ट कार्यालय में कई बार आया है और उसने सभी दस्तावेज जमा कराए हैं किंतु पासपोर्ट प्राधिकारियों ने उन पर विचार नहीं किया है बल्कि इसके विपरीत उन्होंने एक आदेश (उपाबंध पी-11) जारी किया है जिसके अनुसार उसका आवेदन इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि याची की ओर से कोई उत्तर प्राप्त नहीं हुआ है ।
>
> विद्वान् काउंसेल ने स्पष्ट रूप से यह निवेदन किया है कि वह पासपोर्ट कार्यालय में कई बार आया है किंतु प्रश्नगत आदेश गलत तथ्यों के आधार पर जारी किया गया है । विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि याची इटली देश में कार्यरत है और उसे इटली के लिए 6 अप्रैल, 2021 को प्रस्थान करना है, अत: इस मामले में शीघ्र कार्यवाही आवश्यक है ।
>
> प्रस्ताव-सूचना तारीख 25 मार्च, 2021 के लिए जारी की गई है ।
>
> विद्वान् काउंसेल श्री अंकुर शर्मा ने प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 की ओर से प्रस्ताव-नोटिस स्वीकार किया है ।
>
> न्यायालय द्वारा पूछे जाने पर सुश्री मालूचहल (उप महाधिवक्ता पंजाब) ने प्रत्यर्थी सं. 3 और 4 की ओर से नोटिस स्वीकार किया है ।

क्षेत्रीय पासपोर्ट अधिकारी, जालंधर, पंजाब को अगली तारीख के पहले शपथ-पत्र फाइल करना होगा और साथ ही याची के विद्वान् काउंसेल को अग्रिम-प्रति उपलब्ध करानी होगी ।

भारत संघ के विद्वान् काउंसेल को यह निदेश दिया जाता है कि यदि याची ने आवश्यक सभी दस्तावेज उपलब्ध करा दिए हैं, तब आक्षेपित आदेश का पुनर्विलोकन विधि के अनुसरण में किया जा सकता है या नहीं ।"

6. याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि याची को उसके पासपोर्ट से मात्र इस आधार पर वंचित किया गया है कि उसके विरुद्ध प्रथम इत्तिला रिपोर्ट लंबित है और इस प्रकार वंचित किए जाने से विधि का अतिक्रमण होता है क्योंकि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट का मात्र लंबित रहना पासपोर्ट की नामंजूरी का आधार नहीं हो सकता ।

7. प्रस्ताव-नोटिस के आदेश के अनुसरण में सहायक पासपोर्ट अधिकारी, जालंधर द्वारा शपथ-पत्र के माध्यम से एक संक्षिप्त उत्तर फाइल किया गया है जिसमें यह निवेदन किया गया है कि याची ने इस न्यायालय से महत्वपूर्ण तथ्य छिपाए हैं । शपथ-पत्र में यह भी निवेदन किया गया है कि याची ने पासपोर्ट के लिए आवेदन किया था और उसे पेरिस में भारतीय दूतावास से तारीख 14 नवंबर, 2009 को जारी किए गए पुराने पासपोर्ट के आधार पर इटली ने भारतीय दूतावास से तारीख 10 मई, 2010 को 1 वर्ष की अवधि के लिए पासपोर्ट जारी किया गया था जिसकी विधिमान्यता तारीख 20 मई, 2011 तक थी और उस पासपोर्ट में याची का नाम सुखविन्दर राम पुत्र भजन राम और कुलवंत तथा जन्म तिथि 2 मार्च, 1980 लिखी हुई थी । इसके पश्चात् तारीख 26 दिसंबर, 2012 को याची ने पुन: अपने पुराने अल्पकालीन पासपोर्ट (वैधता की तारीख 10 मई, 2010) के आधार पर नया पासपोर्ट जारी कराने के लिए आवेदन किया और उसे तारीख 27 अप्रैल, 2012 को पुन: पासपोर्ट जारी किया गया जिसकी वैधता की अंतिम तारीख 26 अप्रैल, 2022 थी । तारीख 1 दिसंबर, 2020 को याची ने अपने पुराने पासपोर्ट के आधार पर नया पासपोर्ट जारी कराने के लिए प्रत्यर्थी के कार्यालय में

आवेदन किया जिसमें उसने पवनदीप गिल का नाम अपनी पत्नी के रूप में दर्ज कराया और इस पासपोर्ट के लिए किए गए आवेदन में, 2020 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 23 को छिपाया जो याची के विरुद्ध दर्ज की गई थी । तथापि, पासपोर्ट के लिए उसका आवेदन मंजूर किया गया और पासपोर्ट पुन: जारी किए जाने के लिए कार्यवाही आरंभ की गई जिसमें पत्नी का नाम उपरोक्त रूप में दर्ज किया गया और कार्यालय की प्रक्रिया के अनुसार याची का मामला उसी दिन पुलिस प्राधिकारियों के समक्ष प्रस्तुत किया गया । तथापि, तारीख 16 दिसंबर, 2020 को पुलिस प्राधिकारियों ने याची के विरुद्ध टिप्पणी करते हुए अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें यह उल्लेख किया कि उपर्युक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट से संबंधित मामला न्यायालय में लंबित है, अत: उसकी पत्नी के नाम के साथ उसके इस कृत्य, आचरण और पुलिस द्वारा प्रस्तुत की गई प्रतिकूल रिपोर्ट के कारण नया पासपोर्ट पुन: जारी नहीं किया जा सका । शपथ-पत्र में यह भी निवेदन किया गया कि याची ने जब पासपोर्ट पुन: जारी किए जाने के लिए आवेदन किया था तब उसने अपने विरुद्ध लंबित प्रथम इत्तिला रिपोर्ट जैसे तात्विक तथ्य को छिपाया था ।

8. शपथ-पत्र में यह भी कथन किया गया है कि तारीख 4 फरवरी, 2021 को याची प्रत्यर्थी सं. 2 के कार्यालय पर गया और उसने यह स्व-घोषणा की कि उसकी वर्तमान फाइल बंद कर दी जाए और इस दौरान उसने यह वचन दिया कि न्यायालय की अनुमति से वह नए सिरे से मामला फाइल करेगा । उक्त घोषणा के साथ शपथ-पत्र (उपाबंध आर-2) को संलग्न किया गया है और स्व-घोषणा की अन्तर्वस्तु निम्न प्रकार है :–

> "स्व-घोषणा
>
> मैं सुखविन्दर राम पुत्र भजन राम निवासी ग्राम अकबरपुर, डाकखाना बेगोवाल, जिला कपूरथला सत्यनिष्ठा से निम्न प्रकार घोषणा करता हूं –
>
> (1) यह कि मैंने फाइल सं. जेए-3075032148220 के अनुसार पासपोर्ट जारी किए जाने के लिए आवेदन किया है ।

(2) यह कि मैं आपको सूचित करता हूं कि मेरी पुलिस जांच ठीक नहीं पाई गई है क्योंकि मेरे विरुद्ध माननीय न्यायालय के समक्ष मामला लंबित है । अत: मैं अपनी वर्तमान फाइल बंद कराना चाहता हूं । मैं न्यायालय से अनुमति लेकर इसके लिए पुन: आवेदन करूंगा । अत: कृपा करके मेरी वर्तमान फाइल बंद कर दी जाए ।"

9. परिणामस्वरूप याची की फाइल उसके द्वारा निवेदन किए जाने पर तारीख 4 फरवरी, 2021 को बंद कर दी गई । सहायक पासपोर्ट अधिकारी द्वारा फाइल किए गए शपथ-पत्र में यह कथन किया गया है कि तारीख 4 मार्च, 2021 को याची ने तारीख 4 फरवरी, 2021 के पत्र के आधार पर पुन: पासपोर्ट जारी किए जाने के लिए आवेदन किया और याची का मामला पुन: स्वीकार किया गया और बिना किसी पक्षपात के पासपोर्ट जारी किए जाने की प्रक्रिया पुलिस रिपोर्ट के सकारात्मक पाए जाने के अध्यधीन आरंभ की गई । किंतु पुलिस रिपोर्ट अभी तक लंबित है और इसके पश्चात् तारीख 16 मार्च, 2021 को प्रत्यर्थी सं. 2 ने पहले ही उसे तारीख 16 मार्च, 2021 और तारीख 18 मार्च, 2021 के पत्र जारी कर दिए हैं जिनमें याची को प्रत्यर्थी सं. 2 के कार्यालय में किसी भी कार्यदिवस पर पूर्वाह्न 9.30 बजे से दोपहर 12.00 बजे के बीच उस पासपोर्ट तथा अन्य संबंधित दस्तावेजों के साथ आने को कहा जिसके आधार पर उसने विदेश यात्रा की थी । इसके अतिरिक्त शपथ-पत्र में यह भी कथन किया गया है कि मामला अस्वीकार किए जाने के प्रक्रम पर कभी-भी नहीं पहुंचा है अर्थात् अभी भी लंबित है और याची ने सक्षम प्राधिकारियों से उस उपचार का लाभ अभी तक नहीं लिया है जो उसे पासपोर्ट अधिनियम, 1967 की धारा 11 के अधीन पहले से उपलब्ध है और याची ने समुचित अभ्यावेदन के आधार पर अपनी शिकायत करने का अवसर लेने के बजाय निदेश जारी किए जाने के लिए इस न्यायालय के समक्ष आवेदन किया है । शपथ-पत्र के पैरा 11 में यह भी उल्लेख किया गया है कि यदि याची उस पासपोर्ट के साथ जिसके आधार पर उसने पहली बार विदेश यात्रा की थी, अपने पास रखे हुए दूसरे पासपोर्टों के ब्यौरे उपलब्ध कराता है, तब याची का पासपोर्ट न्याय के हित में

जारी किया जा सकता है किंतु यह पुलिस जांच में सही पाए जाने के अध्यधीन होगा जो कि पुन: पासपोर्ट जारी किए जाने के संबंध में पासपोर्ट अधिनियम, 1967 की धारा 24 के अधीन समय-समय पर संबंधित मंत्रालय द्वारा अधिकथित प्रक्रिया के अनुसरण में होगा ।

10. मैंने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुना है ।

11. वर्तमान याचिका और प्रस्ताव-सूचना आदेश से यह प्रतिबिम्बित होता है कि याची ने अपनी पत्नी का नाम पासपोर्ट में जुड़वाने के लिए आवेदन किया था और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि उसके विरुद्ध प्रथम इत्तिला रिपोर्ट लंबित है, पासपोर्ट पुन: जारी किए जाने से इनकार करने का आधार नहीं बन सकता और यह कि याची को तारीख 4 फरवरी, 2021 के पत्र (उपाबंध पी-11) के अनुसार पासपोर्ट जारी किए जाने से इनकार किया गया है । यह इस कारण से हुआ कि भारत संघ के विद्वान् काउंसेल को यह निदेश दिया गया कि यदि याची ऐसे सभी दस्तावेज उपलब्ध कराता है जो अपेक्षित है, तब ऐसी स्थिति में आक्षेपित आदेश का पुनर्विलोकन विधि के अनुसरण में किया जा सकता है या नहीं । तारीख 4 फरवरी, 2021 का आक्षेपित आदेश वर्तमान मामले में उपाबंध पी-11 है । तथापि, यह आश्चर्य की बात है कि इस आक्षेपित आदेश के पश्चात्, जो तारीख 4 फरवरी, 2021 को पारित किया गया था, याची ने कभी-भी इसका उल्लेख वर्तमान याचिका में नहीं किया है कि पासपोर्ट प्राधिकारियों द्वारा इनकार किए जाने के पश्चात् याची ने नए सिरे से आवेदन फाइल किया था जो तारीख 4 फरवरी, 2021 के आक्षेपित आदेश (उपाबंध-पी-11) द्वारा अनुज्ञात किया गया । इसके पश्चात् सहायक पासपोर्ट अधिकारी द्वारा उत्तर फाइल किया गया जिसमें यह कथन किया गया है कि याची ने तारीख 4 मार्च, 2021 को अर्थात् तारीख 4 फरवरी, 2021 के निरस्तीकरण आदेश के पश्चात् नए सिरे से आवेदन फाइल किया है और वह पहले से प्रक्रियाधीन है । याची द्वारा जानबूझकर महत्वपूर्ण तथ्यों को छिपाया गया है । यदि याचिका में यह पहले ही प्रकट कर दिया होता कि तारीख 4 फरवरी, 2021 के निरस्तीकरण आदेश के पश्चात् आवेदन लंबित था, तब यह न्यायालय

पासपोर्ट अधिकारी को यह निदेश न देता कि तारीख 4 फरवरी, 2021 के आक्षेपित आदेश का पुनर्विलोकन करने की संभावना पर विचार किया जाए । संपूर्ण रिट याचिका इस आधार पर फाइल की गई कि तारीख 4 फरवरी, 2021 को उपाबंध पी-11 के अनुसार याची का आवेदन निरस्त किया गया है, अत: वर्तमान याचिका फाइल की गई है । तथापि, पासपोर्ट प्राधिकारी द्वारा सही तथ्यात्मक स्थिति स्पष्ट करते हुए यह उल्लेख किया गया है कि याची ने बाद में अर्थात् 4 मार्च, 2021 को एक अन्य आवेदन फाइल किया था जो पासपोर्ट प्राधिकारियों के समक्ष अभी भी लंबित है । इसके अतिरिक्त याची ने यह भी छिपाया है कि उसने उपाबंध-आर-2 के अनुसार स्वयं यह निवेदन किया था कि उसकी फाइल बंद कर दी जाए । तथापि, उसने वर्तमान याचिका इस आधार पर फाइल की है कि उसकी फाइल बंद कर दी गई है ।

12. इस प्रक्रम पर इस न्यायालय ने इस संबंध में विचार नहीं किया है कि क्या प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के लंबित रहने के आधार पर आवेदन निरस्त करना विधि की दृष्टि से गलत है या नहीं किंतु इस न्यायालय ने इस मुद्दे पर अवश्य ही विचार किया है कि जो भी व्यक्ति न्यायालय में आवेदन करता है उसे छलकपट का सहारा नहीं लेना चाहिए और न्यायालय के समक्ष सत्य और पूर्ण तथ्यों को प्रस्तुत करना चाहिए । वर्तमान मामले में इस न्यायालय का यह मत है कि याची ने सत्य और पूर्ण तथ्यों का उल्लेख नहीं किया है और वह भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन असाधारण अधिकारिता का अवलंब नहीं ले सकता । तथापि, इस आदेश के अधीन विधि के अनुसरण में अपनी शिकायत के प्रतितोष के लिए पासपोर्ट प्राधिकारियों के समक्ष आवेदन करने के लिए याची पर कोई रोक नहीं है ।

13. परिणामत: एतदद्वारा वर्तमान याचिका खारिज की जाती है ।

रिट याचिका खारिज की गई ।

अस.

मेघा सूद

बनाम

अमित सूद

(2020 का सिविल पुनरीक्षण आवेदन सं. 1402)

तारीख 26 मार्च, 2021

न्यायमूर्ति सुधीर मित्तल

संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 (1890 का 8) – धारा 7, 10, 12 और 25 [सपठित हिन्दू अप्राप्तवय और संरक्षकता अधिनियम, 1956 की धारा 32] – माता द्वारा बच्चों की अंतरिम अभिरक्षा की मांग – विचारण न्यायालय द्वारा आवेदन खारिज किया जाना – विचारण न्यायालय के अंतरिम आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण आवेदन – आवेदक माता अर्थात् अर्जीदार साधन संपन्न हैं और उसने 10 वर्ष तक अध्यापिका के रूप में कार्य किया है जिसके पास अवश्य ही धनराशि होगी जिसका उपयोग बच्चों की देखरेख में किया जा सकता है और दोनों बच्चों को एक-दूसरे से अलग भी नहीं किया जा सकता, अत: विचारण न्यायालय का अभिरक्षा संबंधी अंतरिम आदेश न्यायोचित नहीं है ।

संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं कि पक्षकारों के बीच विवाह तारीख 3 मई, 2008 को हुआ था । इस विवाह से तारीख 16 जुलाई, 2009 को एक बालक ने और तारीख 13 मार्च, 2017 को एक बालिका ने जन्म लिया था जिनके नाम क्रमश: लक्षिण और तियाना हैं । इस प्रकार, लक्षिण की वर्तमान आयु लगभग साढ़े ग्यारह वर्ष और तियाना की आयु लगभग 4 वर्ष है । तारीख 16 फरवरी, 2019 से माता-पिता अलग-अलग रहते हैं । पत्नी का यह पक्षकथन है कि उसे घर से निकाल दिया गया है और उससे उसके बच्चे भी ले लिए हैं जबकि पति का यह कहना है कि उसकी पत्नी स्वयं घर छोड़ कर गई है । स्थिति कुछ भी हो, सच्चाई यह है कि तारीख 30 मई, 2019 को संरक्षक और प्रतिपाल्य

अधिनियम, 1890 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में "संरक्षक अधिनियम" कहा गया है) की धारा 7, 10 और 25 के अधीन एक अर्जी प्रस्तुत की गई है जिसमें इस अधिनियम की धारा 12 के अधीन अंतरिम अभिरक्षा मंजूर किए जाने के लिए आवेदन किया गया है । उक्त आवेदन तारीख 5 फरवरी, 2020 के आक्षेपित आदेश द्वारा खारिज किया गया है । अर्जीदार/आवेदक ने इसी आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया है । आवेदन मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – संरक्षक अधिनियम के अधीन फाइल किए गए आवेदन में विशिष्ट रूप से यह अभिवाक् किया गया है कि अर्जीदार स्नातकोत्तर है और यह कि वह दिल्ली पब्लिक स्कूल में पिछले 10 वर्षों से अध्यापन कार्य कर रही है । प्रत्यर्थी ने अपने लिखित कथन में इस तथ्य का खंडन नहीं किया है और इस प्रकार यही निष्कर्ष निकलता है कि अर्जीदार शिक्षित और योग्य महिला है । दलील के दौरान यह भी निवेदन किया गया है कि उसने फरवरी, 2019 में दिल्ली पब्लिक स्कूल से त्यागपत्र देने के पश्चात् जून, 2019 से जुलाई, 2019 के दौरान पंचकूला में स्कूल अध्यापिका के रूप में कार्य किया था । प्रत्यर्थी ने इस कथन का भी खंडन नहीं किया है और इस प्रकार यही निष्कर्ष निकलता है कि बच्चों के भरणपोषण के लिए अर्जीदार साधन-सम्पन्न हैं । वास्तव में उसने 10 वर्ष तक अध्यापिका के रूप में कार्य किया है इसलिए उसके पास अवश्य ही कुछ धनराशि उपलब्ध होगी जिसका उपयोग अंतरिम आधार पर बच्चों की देखरेख में किया जा सकता है । यह विवादित नहीं है कि वह अपने माता-पिता के साथ रहती है और यह कि मनसा देवी काम्पलेक्स, पंचकूला में उनका एक मकान है । विद्वान् न्यायमित्र की विस्तृत रिपोर्ट, जिसका उल्लेख निर्णय के पूर्ववर्ती भाग में किया गया है, से यह निष्कर्ष निकलता है कि बच्चों का हित अपनी माता की अभिरक्षा में जाने पर ही है । तियाना की आयु 5 वर्ष से कम है । अप्राप्तवयता अधिनियम की धारा 6(क) को दृष्टिगत करते हुए उसका हित माता की अभिरक्षा में अधिक सुरक्षित रहेगा । लक्षिण को उसकी बहिन से अलग नहीं किया जा सकता क्योंकि ऐसा करने से दोनों मानसिक रूप से विचलित हो सकते हैं । इस प्रकार, विचारण न्यायालय

द्वारा तारीख 5 फरवरी, 2020 को पारित आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है । यह निदेश दिया जाता है कि इस निर्णय की प्रमाणित प्रति प्राप्त होने की तारीख से 7 दिनों के भीतर अर्जीदार को अप्राप्तवय बच्चों की अभिरक्षा सौंपी जाए । (पैरा 8 और 10)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2019] ए. आई. आर. 2019 पंजाब-हरियाणा 160 = (2019) 4 आर. सी. आर. (सिविल) 342 : **मुकुल चौहान** बनाम **नेहा अग्रवाल और अन्य** ; 5

[2015] (2015) 2 आर. सी. आर. (सिविल) 93 = ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 2232 : **रॉक्सन शर्मा** बनाम **अरुण शर्मा** । 5

अपीली सिविल अधिकारिता : 2020 का सिविल पुनरीक्षण आवेदन सं. 1402.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 115 के अधीन पुनरीक्षण आवेदन ।

आवेदक की ओर से श्री विकास कुथियाला

प्रत्यर्थी की ओर से श्री विकास बहल, सुश्री प्रियंका कंसल और सुश्री अमरप्रीत कौर

आदेश

बच्चे निर्दोषिता का पात्र होते हैं । उनके आदर्श-विकास के लिए यह आवश्यक है कि निर्दोषिता की अवधि पोषित और संरक्षित की जाए । यद्यपि जहां माता-पिता आपस में झगड़ा करते रहते हैं वहां बच्चों के हित का ध्यान रखना दिन में सपना देखने के समान है । इस तरह के टकराव के कई कारण हो सकते हैं किंतु मुख्य कारण अहंकार और वासना है । कभी माता तो कभी पिता इस मौलिक इच्छा को रोकने में असमर्थ रहते हैं भले ही वह कथित रूप से समझदार और जिम्मेदार क्यों

न हों । परिणाम बच्चों को ही भुगतना पड़ता है । न्यायालयों को विनिश्चित करने के लिए जो कहा जाता है वह बच्चों के हित में सर्वोत्तम होना चाहिए क्योंकि माता-पिता अपने कर्तव्यों और जिम्मेदारियों से कतरा रहे हैं ।

2. संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं कि पक्षकारों के बीच विवाह तारीख 3 मई, 2008 को हुआ था । इस विवाह से तारीख 16 जुलाई, 2009 को एक बालक ने और तारीख 13 मार्च, 2017 को एक बालिका ने जन्म लिया था जिनके नाम क्रमश: लक्षिण और तियाना हैं । इस प्रकार, लक्षिण की वर्तमान आयु लगभग साढ़े ग्यारह वर्ष और तियाना की आयु लगभग 4 वर्ष है । तारीख 16 फरवरी, 2019 से माता-पिता अलग-अलग रहते हैं । पत्नी का यह पक्षकथन है कि उसे घर से निकाल दिया गया है और उससे उसके बच्चे भी ले लिए हैं जबकि पति का यह कहना है कि उसकी पत्नी स्वयं घर छोड़ कर गई है । स्थिति कुछ भी हो, सच्चाई यह है कि तारीख 30 मई, 2019 को संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में "संरक्षक अधिनियम" कहा गया है) की धारा 7, 10 और 25 के अधीन एक अर्जी प्रस्तुत की गई है जिसमें इस अधिनियम की धारा 12 के अधीन अंतरिम अभिरक्षा मंजूर किए जाने के लिए आवेदन किया गया है । उक्त आवेदन तारीख 5 फरवरी, 2020 के आक्षेपित आदेश द्वारा खारिज किया गया है । तथापि, माता को अप्राप्तवय बालक से मिलने के लिए अनुज्ञात किया गया है जैसाकि उक्त आदेश में उपबंधित है ।

3. अर्जीदार-माता दिल्ली पब्लिक स्कूल, सेक्टर 40, चंडीगढ़ में अप्रैल, 2009 से कार्यरत थी । उसने तारीख 15 फरवरी, 2019 को त्यागपत्र दे दिया । उसने स्नातकोत्तर की डिग्री प्राप्त की है । अलग होने के पश्चात् उसने पंचकूला में जून-जुलाई, 2019 में अध्यापन कार्य आरंभ किया है । हाल ही में वह मनसा देवी काम्पलेक्स, पंचकूला में अपने माता-पिता के साथ रहती है ।

4. कार्यवाही के दौरान नोटिस जारी करते समय माता-पिता और अप्राप्तवय बच्चों के बीच संव्यवहार कराने के लिए न्यायमित्र की

नियुक्ति की गई ताकि बच्चों के हित का आंकलन किया जा सके । विद्वान् न्यायमित्र ने तारीख 14 अगस्त, 2020 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसका परिशीलन किया गया है । उक्त रिपोर्ट में अनेक सभाओं में हुई घटनाओं का उल्लेख किया गया है और विभिन्न परिस्थितियों में बच्चों के व्यवहार को भी अभिलिखित किया गया है । यह पता चलता है कि बच्चे अपनी मां की संगति से वंचित हो रहे हैं । यह भी पता चलता है कि लड़के की आयु लड़की से अधिक है जिसे अपनी माता के विरुद्ध भड़काया जा रहा है । इसके बावजूद वह अपनी माता से मिलने के लिए अत्यंत इच्छुक है और वह उससे मिलकर बहुत प्रसन्न होता है । ऐसी परिस्थितियां भी अभिलिखित की गई हैं जिनसे प्रतिलक्षित होता है कि बच्चों का पिता और दादी बच्चों की मां की बुराई करते हैं ताकि वे अपनी मां से दूर हो सकें । दूसरी ओर बच्चों की माता ने कभी भी बच्चों के पिता और बच्चों के दादी-दादा के प्रति ऐसा कोई प्रयास नहीं किया ।

5. अर्जीदार के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि तियाना की आयु 5 वर्ष से कम है और हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम, 1956 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "संरक्षकता अधिनियम" कहा गया है) में यह अनुध्यात किया गया है कि आम तौर पर ऐसे बच्चे की अभिरक्षा उसकी माता को दी जाएगी । इस विधिक स्थिति को विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अनदेखा किया गया है । अर्जीदार शिक्षक के रूप में कार्य कर रही है और अपने माता-पिता के साथ रहती है जो उसे अत्यधिक प्यार करते हैं । ऐसे वातावरण में बच्चे प्रेमपूर्वक रहेंगे जबकि वे अपने पिता और दादी-दादा के यहां परेशान रहते हैं । अर्जीदार को यह सब जानकारी फोन पर बातचीत के दौरान प्राप्त हुई । अर्जीदार पर जो व्यभिचार का आरोप लगाया गया है वह मिथ्या और बाद में आया विचार प्रतीत होता है । विचारण न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला है कि व्यभिचार का आरोप साबित नहीं हुआ है फिर भी न्यायालय ने उक्त आरोप का अवलंब लेते हुए बच्चे की अंतरिम अभिरक्षा माता को दिए जाने से इनकार किया है । इस प्रकार आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि से अनुचित और प्रतिकूल होने के कारण अपास्त

किया जाता है । **मुकुल चौहान** बनाम **नेहा अग्रवाल और अन्य**[1] वाले मामले में पारित किए गए इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ के निर्णय और **रॉक्सन शर्मा** बनाम **अरुण शर्मा**[2] वाले मामले में पारित किए गए उच्चतम न्यायालय के निर्णय का अवलंब लिया गया है ।

6. प्रत्यर्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह दलील दी है कि संरक्षकता अधिनियम के अधीन अर्जी का उत्तर फाइल किया गया है जिसके साथ दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 के अधीन अर्जीदार द्वारा फाइल किया गया आवेदन भी संलग्न है । इन दस्तावेजों के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि अर्जीदार ने यह अभिवाक् किया है कि उसके पास अपने जीवन-निर्वाह के लिए आय का कोई भी स्रोत नहीं है । इस प्रकार, बच्चों को उसकी अभिरक्षा में नहीं दिया जा सकता क्योंकि वह उनका भरणपोषण नहीं कर सकती । उनकी शिक्षा और पालन-पोषण के लिए अत्यधिक धन आवश्यक है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन पुलिस द्वारा अभिलिखित हरजिन्दर नाम के व्यक्ति के कथन (जिसकी प्रति उत्तर के साथ संलग्न की गई है) को भी निर्दिष्ट किया गया है जिसमें उसने यह उल्लेख किया है कि अर्जीदार और वह दिल्ली पब्लिक स्कूल, सेक्टर-40, चंडीगढ़ में एक साथ काम करते थे और यह कि अर्जीदार उसे बार-बार कॉल किया करती थी । तारीख 14 फरवरी, 2019 को हरजिन्दर अर्जीदार के साथ स्कूल से सेक्टर 17, चंडीगढ़ गया था और अक्सर उसके साथ सेक्टर-40 की मार्किट में भी जाया करता था । हरजिन्दर ने यह अभिकथन किया है कि अर्जीदार उससे एक दिन में 5-6 बार बात किया करती थी और अर्जीदार ने उसे अन्य वस्तुओं के अतिरिक्त एक घड़ी भी उपहार में दी थी । उत्तर में किए गए कथनों को निर्दिष्ट करते हुए यह दलील दी गई है कि अर्जीदार का चरित्र संदिग्ध है और यदि बच्चों को उसकी अभिरक्षा में दिया गया तो उनका सामान्य रूप से विकास नहीं हो सकेगा । यह भी दलील दी गई है कि प्रत्यर्थी बच्चों के नाम में धनराशि का निवास कर रहा है और वह वर्तमान खर्चों को वहन करने के साथ-साथ उनके

---

[1] (2019) 4 आर. सी. आर. (सिविल) 342 = ए. आई. आर. 2019 पंजाब-हरियाणा 160.

[2] (2015) 2 आर. सी. आर. (सिविल) 93 = ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 2232.

भविष्य का भी ध्यान रखता है । इन सभी तथ्यों से यह दर्शित होता है कि बच्चों का ठीक प्रकार हित तभी होगा जब उन्हें पिता की अभिरक्षा में दिया जाए । अर्जीदार के विद्वान् काउंसेल द्वारा अवलंब लिए गए निर्णय भिन्न प्रकृति के हैं । अप्राप्तवयता अधिनियम की धारा 6-क के संबंध में यह दलील दी गई है कि यद्यपि इस धारा में यह उपबंध किया गया है कि अप्राप्तवय बच्चों का नैसर्गिक संरक्षक पिता होता है किंतु इसी परन्तुक में यह भी उल्लेख है कि यदि बच्चे की आयु 5 वर्ष से कम है तब वह आम तौर पर अपनी माता के साथ रहेगा । इस उल्लेख से यह सिद्ध होता है कि बच्चे के हित के लिए उसे इस अवधि के दौरान माता की अभिरक्षा में दिया जा सकता है । वर्तमान मामले में यह तथ्य सामने आया है कि अर्जीदार का चरित्र संदिग्ध है और इस प्रकार 5 वर्ष वाली शर्त यहां लागू नहीं हो सकती ।

7. संरक्षकता अधिनियम की धारा 17 तथा अप्राप्तवयता अधिनियम की धारा 13 के अन्तर्गत कोई संदेह नहीं रह जाता है कि अप्राप्तवय का कल्याण सर्वोपरि है जिसे न्यायालय को संरक्षक नियुक्त करते समय ध्यान में रखना चाहिए । इसीलिए इस निर्णय के प्रथम पैरा में बच्चों के प्रति होने वाले अन्याय पर विलाप व्यक्त किया गया है । दोनों पक्षकारों द्वारा एक-दूसरे पर अभिकथन और प्रति-अभिकथन विरचित किए गए हैं । संरक्षकता संबंधी फाइल की गई अर्जी में अर्जीदार ने यह अभिवाक् किया है कि प्रत्यर्थी अच्छा व्यक्ति नहीं है । वह और उसके माता-पिता अर्जीदार को दहेज के लिए तंग करते हैं और उसे शारीरिक यातना देते हैं । प्रत्यर्थी की ओर से फाइल किए गए उत्तर में उसने यह दावा किया है कि अर्जीदार कामुक प्रकृति की है और उसके विवाहेत्तर संबंध भी हैं । इसके अतिरिक्त उसके पास बच्चों के भरणपोषण के लिए भी साधन नहीं हैं । यद्यपि दोनों ओर से लगाए गए आरोपों पर इस प्रक्रम पर विचार नहीं किया जा सकता क्योंकि उन्हें साक्ष्य के आधार पर सिद्ध नहीं किया गया है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने आक्षेपित आदेश पारित करने में ठीक ही निष्कर्ष निकाला है किंतु फिर भी वह पति द्वारा पत्नी पर लगाए गए आरोपों से प्रभावित हुआ है और ऐसा किया जाना अनुचित है जिसमें सुधार करना अपेक्षित है ।

8. संरक्षक अधिनियम के अधीन फाइल किए गए आवेदन में विशिष्ट रूप से यह अभिवाक् किया गया है कि अर्जीदार स्नातकोत्तर है और यह कि वह दिल्ली पब्लिक स्कूल में पिछले 10 वर्षों से अध्यापन कार्य कर रही है । प्रत्यर्थी ने अपने लिखित कथन में इस तथ्य का खंडन नहीं किया है और इस प्रकार यही निष्कर्ष निकलता है कि अर्जीदार शिक्षित और योग्य महिला है । दलील के दौरान यह भी निवेदन किया गया है कि उसने फरवरी, 2019 में दिल्ली पब्लिक स्कूल से त्यागपत्र देने के पश्चात् जून, 2019 से जुलाई, 2019 के दौरान पंचकूला में स्कूल अध्यापिका के रूप में कार्य किया था । प्रत्यर्थी ने इस कथन का भी खंडन नहीं किया है और इस प्रकार यही निष्कर्ष निकलता है कि बच्चों के भरणपोषण के लिए अर्जीदार साधन-सम्पन्न हैं । वास्तव में उसने 10 वर्ष तक अध्यापिका के रूप में कार्य किया है इसलिए उसके पास अवश्य ही कुछ धनराशि उपलब्ध होगी जिसका उपयोग अंतरिम आधार पर बच्चों की देखरेख में किया जा सकता है । यह विवादित नहीं है कि वह अपने माता-पिता के साथ रहती है और यह कि मनसा देवी काम्पलेक्स, पंचकूला में उनका एक मकान है । विद्वान् न्यायमित्र की विस्तृत रिपोर्ट, जिसका उल्लेख निर्णय के पूर्ववर्ती भाग में किया गया है, से यह निष्कर्ष निकलता है कि बच्चों का हित अपनी माता की अभिरक्षा में जाने पर ही है । तियाना की आयु 5 वर्ष से कम है । अप्राप्तवयता अधिनियम की धारा 6(क) को दृष्टिगत करते हुए उसका हित माता की अभिरक्षा में अधिक सुरक्षित रहेगा । लक्षिण को उसकी बहिन से अलग नहीं किया जा सकता क्योंकि ऐसा करने से दोनों मानसिक रूप से विचलित हो सकते हैं ।

9. **मुकुल चौहान** (उपरोक्त) वाले मामले को दृष्टिगत करने पर भी मेरा यही निष्कर्ष है । यद्यपि प्रत्यर्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने इस आधार पर विभेद करने का प्रयास किया है कि उक्त मामले में माता डिलोइट टाउशे टोमटसू इंडिया एल.एल.पी. (संगठित) में कर्मचारी होने के नाते अच्छी धनराशि कमा रही थी, इस प्रकार दिखाए गए विभेद को अनदेखा किया जाना चाहिए क्योंकि मेरा यह निष्कर्ष है कि अर्जीदार के पास भी बच्चों के भरणपोषण के लिए साधन उपलब्ध हैं, मैं अपनी

दलील के समर्थन में **रॉक्सन शर्मा** (उपरोक्त) वाले मामले का अवलंब ले सकता हूं जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने कतिपय शर्तों के अध्यधीन माता की अभिरक्षा में देने के लिए उच्च न्यायालय के आदेश को अपास्त किया है । प्रत्यर्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने इस निर्णय को इस आधार पर विभेदकारी ठहराया है कि इस मामले में पिता स्वापक ओषधि का सेवन करता था और यह तथ्य मेरी राय में ऐसा एकमात्र कारण नहीं है जिसके आधार पर पिता को अंतरिम अभिरक्षा देने से इनकार किया जा सके । उच्चतम न्यायालय ने जिस प्राथमिक आधार का अवलंब लिया है वह अप्राप्तवय का 5 वर्ष से कम आयु का पाया जाना है ।

10. इस प्रकार, विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 5 फरवरी, 2020 को पारित आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है । यह निदेश दिया जाता है कि इस निर्णय की प्रमाणित प्रति प्राप्त होने की तारीख से 7 दिनों के भीतर अर्जीदार को अप्राप्तवय बच्चों की अभिरक्षा सौंपी जाए । प्रत्यर्थी को 3.00 बजे अपराह्न से 5.00 बजे अपराह्न के बीच अर्जीदार के घर पर उसकी उपस्थिति में प्रत्येक माह के प्रथम और तृतीय शनिवार को मुलाकात करने का अधिकार होगा । तथापि, अभिरक्षा के लिए फाइल की गई मुख्य अर्जी विनिश्चित किए जाने तक, प्रत्यर्थी का बच्चों से मुलाकात करने का अधिकार बना रहेगा किंतु यदि किसी भी पक्षकार के समक्ष कोई कठिनाई आती है तब मुलाकात के अधिकार में, यदि आवश्यक हो, उपांतरण किया जा सकता है ।

आवेदन मंजूर किया गया ।

अस.

के. कुमारकृष्णन और अन्य

बनाम

टी. पी. पदमाजा

(2019 की सिविल प्रकीर्ण अपील सं. 4286)

तारीख 18 नवंबर, 2020

न्यायमूर्ति आर. सुब्बिया और न्यायमूर्ति सी. सरवानन

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 13(1)(i-ख) – अभित्यजन के आधार पर पति द्वारा विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल किया जाना – पति द्वारा अभिवाक् किया जाना कि पत्नी पुण्यदानम समारोह में सम्मिलित नहीं हुई – पत्नी पर अपीलार्थी का मानभंग किए जाने का आरोप – प्रत्यर्थी-पत्नी को अपीलार्थी-पति के यहां यात्रा करना इसलिए संभव नहीं था कि प्रत्यर्थी-पत्नी का सिजेरियन आपरेशन हुआ था और पत्नी को किराए का मकान इसलिए छोड़ना पड़ा कि समनुदेशन/करार की अवधि समाप्त हो रही थी और नवजात शिशु को लेकर उसे अपने माता-पिता के यहां रहना था जिसे स्वयं अपीलार्थी के पिता द्वारा गृहस्थी के सामान के साथ स्थानांतरित करने की व्यवस्था की गई थी, अत: पति के विरुद्ध पत्नी द्वारा क्रूरता कारित किए जाने का कोई आधार नहीं है और निचले न्यायालय का निर्णय न्यायोचित है ।

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 – धारा 13(1)(i-क) – विवाह-विच्छेद – पति द्वारा आरोप लगाया जाना कि कुटुंब पंचायत में उसका अपमान किया गया है – यह भी आरोप लगाया जाना कि पत्नी अपने मायके में रहती है – पति की माता का गठिया रोग से ग्रसित होने के कारण जच्चा-बच्चा की देखरेख में अक्षम पाया जाना – पत्नी का उस समय मायके में रहना जब पति अमेरिका गया हुआ था – पति द्वारा पत्नी के विरुद्ध किए गए अभिकथन तुच्छ प्रकृति के हैं और कुटुंब पंचायत में पति ने पत्नी के विरुद्ध साक्ष्य प्रस्तुत करने के बजाय पत्नी

से साक्ष्य प्रस्तुत करने को कहा और इसके अतिरिक्त अपीलार्थी की माता गठिया की रोगी थी जिस कारण वह प्रत्यर्थी या अप्राप्तवय शिशु की देखरेख नहीं कर सकती थी और उसी दौरान पति अमेरिका चला गया था, अत: विवश होकर पत्नी का अपने मायके में रहना पति के विरुद्ध क्रूरता की कोटि में नहीं आता है ।

वर्तमान अपील पति के द्वारा 2019 के अर्जी सं. 101 अर्थात् हिन्दू विवाह मूल अर्जी (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अर्जी" कहा गया है) सं. 101 में विल्लुपुरम के कुटुंब न्यायालय द्वारा पारित किए गए निर्णय और डिक्री तारीख 30 सितंबर, 2019 के विरुद्ध फाइल की गई है । आक्षेपित निर्णय और डिक्री द्वारा उक्त कुटुंब न्यायालय ने पूर्वोक्त अर्जी को खारिज कर दिया था जो अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच अनुष्ठापित विवाह के विघटन के लिए फाइल की गई थी । उपरोक्त अर्जी को खारिज करने वाले आक्षेपित निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर अपीलार्थी द्वारा वर्तमान अपील फाइल की गई है । कुटुंब न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी का पक्षकथन यह था कि प्रत्यर्थी उसके साथ क्रूरता करती है और उसने उसका अभित्यजन कर दिया था इसलिए उनके बीच अनुष्ठापित विवाह हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(1)(i-क) और (i-ख) के उपबंधों के अधीन विघटन किए जाने योग्य है । अपीलार्थी ने मूल रूप से विवाह विघटित करने के लिए 2014 की अर्जी सं. 330 उप न्यायालय तंबाराम के समक्ष मूल रूप से फाइल की थी । उसके पश्चात् 2015 की अर्जी सं. 151 के रूप में मामले को कुटुंब न्यायालय, विल्लुपुरम में अंतरित कर दिया गया और उसके पश्चात् वह अर्जी प्रधान अधीनस्थ न्यायाधीश, विल्लुपुरम के समक्ष 2019 की अर्जी सं. 58 के रूप में अंतरित कर दी गई । उसके पश्चात् एक बार पुन: उस अर्जी को 2019 की अर्जी सं. 101 के रूप में कुटुंब न्यायालय, विल्लुपुरम में अंतरित कर दिया गया । प्रत्येक चरण में इन न्यायालयों में मामले को बार-बार संख्यांकित किया गया । कुटुंब न्यायालय द्वारा अर्जीदार-पति की अर्जी खारिज कर दी गई । इस आदेश से व्यथित होकर पति द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – कुटुंब ने तारीख 11 दिसंबर, 2010 को अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के रहने के लिए किराए के घर की व्यवस्था की । इस प्रकार, युवा-दम्पत्ति ने तारीख 11 दिसंबर, 2010 से चेन्नई में अपना स्वतंत्र वैवाहिक जीवन आरंभ किया । वे लगभग 13 माह तक ही चेन्नई में किराए के घर में एक साथ रहे । अभि. सा. 2 द्वारा दिया गया अभिसाक्ष्य उक्त बातों की पुष्टि करता है । अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के विवाह के समय बहुमूल्य आभूषणों को उपहार में देने के अतिरिक्त प्रत्यर्थी के माता-पिता ने अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के लिए गृहस्थी की वस्तुएं और कार आदि भी क्रय की थीं । विवाह संपन्न हुआ और तारीख 26 जनवरी, 2012 को इसकी पुष्टि हुई कि प्रत्यर्थी गर्भवती है और इसलिए शिशु के जन्म की पूर्वाशा में प्रत्यर्थी अपने माता-पिता के घर पर वापस चली गई । अपीलार्थी के माता-पिता ने गर्भावस्था के सातवें माह के दौरान वलक्कापु समारोह भी मनाया और संबंधित ससुराल वालों के द्वारा उनके दामाद और बहू अर्थात अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के पक्ष में उपहारों का विनिमय किया गया । तारीख 10 अक्तूबर, 2012 को पुत्र का जन्म हुआ । यह अभिकथन किया गया कि प्रत्यर्थी के किसी भी संबंधी को पुण्यदानम समारोह के लिए आमंत्रित नहीं किया गया था और इस प्रकार अपीलार्थी का मानभंग हुआ और उसे क्रूरता का सामना करना पड़ा था । इस तथ्य को ध्यान में रखने पर यहां क्रूरता के तथ्य का समर्थन नहीं होता है क्योंकि प्रत्यर्थी को अपीलार्थी के यहां यात्रा करना और कोई भी कार्य करना इसलिए कठिन था कि उसकी सीजेरियन शल्य-चिकित्सा हुई थी । तारीख 10 नवंबर, 2012 को किराए का मकान खाली कर दिया गया था, क्योंकि अपीलार्थी का समनुदेशन/करार प्रारंभ में 3 वर्ष की अवधि के लिए ही था । इस प्रकार अपीलार्थी और प्रत्यर्थी ने चेन्नई में किराए के घर को छोड़ने का विनिश्चयन किया क्योंकि प्रत्यर्थी को शिशु के जन्म के पश्चात् अपने माता-पिता के साथ रहना था । इसलिए गृहस्थी की सभी वस्तुओं को प्रत्यर्थी के माता-पिता के घर पहुंचा दिया गया । अपीलार्थी के पिता द्वारा गृहस्थी का सामान स्थानांतरित करने की व्यवस्था की गई थी । इसलिए यह निष्कर्ष

निकालने का कोई आधार नहीं है कि प्रत्यर्थी ने प्रथम अवसर पर अपीलार्थी को स्वेच्छा से छोड़ा था । (पैरा 26, 27, 28, 30 और 31)

अपीलार्थी ने अर्जी में कई अभिकथन किए हैं जो तुच्छ प्रकृति के हैं ताकि ऐसा प्रतीत हो कि अपीलार्थी को प्रत्यर्थी के हाथों क्रूरता का सामना करना पड़ा है । तथापि, कुटुंब न्यायालय के समक्ष फाइल की गई अर्जी में किसी भी अभिकथन को अपीलार्थी द्वारा साबित नहीं किया गया है । अन्यथा भी ये अभिकथन तुच्छ प्रकृति के हैं जिनके अन्तर्गत विवाह-विच्छेद की डिक्री जारी किए जाने के लिए क्रूरता गठित नहीं होती है । यह अभिकथन कि प्रत्यर्थी और उसके माता-पिता ने तारीख 24 मई, 2013 को कुटुंब पंचायत में अपीलार्थी और उसके माता-पिता का अनादर किया था, साबित नहीं हुआ है । यदि अपीलार्थी उक्त पंचायत के परिणाम और प्रत्यर्थी तथा उसके माता-पिता के आचरण का अवलंब लेना चाहता था तो अपीलार्थी के लिए आवश्यक था कि वह उक्त को नासाबित करने के लिए स्वतंत्र साक्ष्य प्रस्तुत करता । इसके बजाय अपीलार्थी ने अपने अभिकथन को नासाबित करने के संबंध में प्रत्यर्थियों द्वारा साक्षियों को प्रस्तुत न करने के लिए प्रत्यर्थी को ही दोषी ठहराया है । कुछ भी हो, तारीख 24 मई, 2013 की पंचायत के पश्चात् अपीलार्थी 12 जनवरी, 2014 को अमेरिका से वापस आया और प्रत्यर्थी तथा अप्राप्तवय शिशु को अपने साथ अमेरिका ले गया । तारीख 21 जनवरी, 2014 को अपीलार्थी, प्रत्यर्थी और उनका शिशु यू.एस.ए. के लिए एक उड़ान में सवार हुए और 22 जनवरी, 2014 को यू.एस.ए. पहुंचे । इस अभिकथन से कि हवाई जहाज से प्रस्थान करने के लिए अपीलार्थी और प्रत्यर्थी विल्लुपुरम से अलग-अलग कार से चेन्नई हवाई अड्डे पर पहुंचे थे, हमारे विचार में क्रूरता गठित नहीं होती है । संबंधित कुटुंब विल्लुपुरम जिले से है और यह अपीलार्थी ही है जिसने प्रत्यर्थी और अप्राप्तवय शिशु को उसके माता-पिता के घर में वापस छोड़ दिया था क्योंकि उनकी देखभाल प्रत्यर्थी के माता-पिता द्वारा ही की जा रही थी और उस समय तक अपीलार्थी के माता-पिता के द्वारा उनकी देखभाल नहीं की जा रही थी इसलिए प्रत्यर्थी और वह अपने कार्य के संबंध में चेन्नई चला गया था । अपीलार्थी ने यह भी स्वीकार किया है कि

अपीलार्थी की माता गठिया की रोगी थीं इसलिए वह किसी भी प्रकार से प्रत्यर्थी या अप्राप्तवय शिशु की मदद नहीं कर सकी और इसलिए गर्भावस्था की पुष्टि होने के पश्चात् प्रत्यर्थी द्वारा अपने माता-पिता के साथ रहने का चयन करने या अपने माता-पिता के साथ रहना जारी रखने में हम किसी भी प्रकार से क्रूरता का अनुमान लगाने में असमर्थ हैं । प्रत्यर्थी ने यह भी सुस्पष्ट रूप से कथन किया है कि प्रसव सामान्य नहीं था । तारीख 10 अक्तूबर, 2012 को सिजेरियन ऑपरेशन द्वारा प्रसव हुआ था । इसलिए प्रत्यर्थी के लिए अपीलार्थी के माता-पिता के साथ रहना संभव नहीं था । हमें यह विश्वास है कि प्रत्यर्थी के लिए शिशु के जन्म के पश्चात् अपीलार्थी के माता-पिता के घर में स्थानांतरित होना अत्यधिक अव्यावहारिक होता । विशिष्टत: इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अपीलार्थी स्वयं प्रत्यर्थी और शिशु की देखभाल के लिए वहां नहीं था और अपीलार्थी की मां स्वयं चिकित्सीय परिस्थितियों से गुजर रही थी जिसके कारण वह प्रत्यर्थी की मदद करने में असमर्थ थी जो शिशु के जन्'म के पश्चात् सिजेरियन से हुई शल्य चिकित्सा के बाद स्वास्थ्यकर हो रही थी । इसके अतिरिक्त अपनी ससुराल में अपीलार्थी के बिना प्रत्यर्थी के लिए अपनी और अपने शिशु की देखभाल के लिए रहना कठिन हो गया होगा । यह अभिकथन कि प्रत्यर्थी ने पासपोर्ट को प्राप्त करने में विलंब किया और यह कि उसने केवल विल्लुपुरम पासपोर्ट कार्यालय के माध्यम से पासपोर्ट के लिए आवेदन किया था तथा उसके द्वारा चेन्नई पासपोर्ट कार्यालय से आवेदन नहीं किया था जैसी शिकायत अति तुच्छ प्रतीत होती है और इससे किसी क्रूरता का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है । प्रत्यर्थी का यह स्पष्टीकरण कि शिशु के जन्म के पश्चात् अप्राप्तवय शिशु को स्तनपान कराने के दौरान बनी गांठ से उसे कठिनाइयां हुईं जिससे पासपोर्ट की तुरंत व्यवस्था न कर पाना, जैसाकि अपीलार्थी द्वारा मांग की गई थी, एक युक्तियुक्त स्पष्टीकरण प्रतीत होता है, किसी भी स्थिति में इसका अपीलार्थी द्वारा उपमर्षण किया जाना चाहिए था । यह अभिकथन कि संयुक्त राज्य अमेरिका पहुंचने के पश्चात् प्रत्यर्थी ने तारीख 28 जनवरी, 2014 को हल्ला-गुल्ला किया और एक बहुमूल्य लैपटॉप को तोड़ा जिससे अपीलार्थी को भारत

वापस लौटने की व्यवस्था करने के लिए विवश होना पड़ा । यह अपीलार्थी का एकतरफा और असंतोषजनक स्पष्टीकरण प्रतीत होता है ताकि वह प्रत्यर्थी के माता-पिता को और प्रत्यर्थी के पति के रूप में प्रत्यर्थी के माता-पिता और समाज को दी गई प्रतिबद्धता से पीछे हटने का बहाना बना सके । प्रत्यर्थी का यह स्पष्टीकरण कि उस समय संयुक्त राज्य अमेरिका में मौसम की परिस्थिति 7 से 13 डिग्री के मध्य रहती है और उनके शिशु को अमेरिका पहुंचने के पश्चात् सांस लेने में समस्या उत्पन्न हो गई और स्वास्थ्य विभाग में रजिस्ट्रीकरण के अभाव में चिकित्सकों द्वारा उसकी तुरंत चिकित्सा पर ध्यान नहीं दिया जा सका जिससे प्रत्यर्थी द्वारा अपीलार्थी को तुरंत भारत वापस आने के लिए मजबूर करना, प्रत्यर्थी की युक्तियुक्त मांग प्रतीत होती है । प्रत्यर्थी की मांग से क्षुद्र होकर अभिकथित तौर पर अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी पर प्रहार किया तथा लात भी मारी और इसलिए उक्त तथ्य का ज्ञान होने पर प्रत्यर्थी के माता-पिता ने अपने संबंधियों से प्रत्यर्थी और उसके शिशु की सुरक्षित भारत वापसी के लिए अनुरोध किया । यह स्पष्टीकरण युक्तियुक्त और तर्कसम्मत प्रतीत होता है । इस प्रकार अपीलार्थी ने हड़बड़ी में तुरंत उनके लिए भारत वापस जाने के लिए टिकट की व्यवस्था की और प्रत्यर्थी तथा शिशु को हवाई अड्डे पर छोड़ दिया और प्रत्यर्थी के माता-पिता जो उसे लेने आए थे वह उनसे बिना मिले ही विलुप्त हो गया । क्या प्रत्यर्थी ने वास्तव में बहुमूल्य लैपटॉप तोड़ा था या नहीं, इसे साबित नहीं किया गया है । यह अपीलार्थी के द्वारा किया गया निराधार अभिकथन है । न्यायालय के विचार में प्रत्यर्थी द्वारा इन परिस्थितियों में दिया गया स्पष्टीकरण युक्तियुक्त प्रतीत होता है । यदि अपीलार्थी एक जिम्मेदार व्यक्ति होता तो वह प्रत्यर्थी और शिशु के साथ अस्पताल जाता या कम से कम उन्हें प्रत्यर्थी के माता-पिता के घर में रखता, इसके स्थान पर ऐसा प्रतीत हो रहा है कि वह उन्हें परित्यक्त करके विलुप्त हो गया और असहज प्रश्नों के पूछे जाने के भय से अमेरिका चला गया था । वह अपनी स्वयं की गलती का लाभ नहीं उठा सकता है । इस तथ्य से कि उसने 2014 की मूल अर्जी सं. 330 तंबाराम उप न्यायालय में फाइल की थी जो उसकी अधिकारिता में ही

नहीं थी तथा इससे अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई अर्जी पर भी गंभीर संदेह होता है । (पैरा 32, 33, 35, 36, 37, 38, 39, 40 और 41)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2018] (2018) 6 सी. टी. सी. 198 :
थिरूग्ननसंबंडम बनाम **कन्नन और अन्य** ; 22

[2015] (2015) 8 एस. सी. सी. 336 = ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 2504 :
विनोद कुमार सुब्बैया बनाम **सरस्वती पालनियप्पन** ; 22

[2014] ए. आई. आर. 2014 एस. सी. 2881 :
मालती रवि बनाम **बी. वी. रवि** ; 22

[2010] (2010) 2 एस. सी. सी. 114 = 2010 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 50 :
दलीप सिंह बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ; 22

[2010] (2010) 4 एस. सी. सी. 728 :
ओसवाल फैट्स एंड ऑयल्स लिमिटेड बनाम **आयुक्त (प्रशासन)** ; 22

[2007] (2007) 4 एस. सी. सी. 511 :
समर घोष बनाम **जय घोष** ; 22

[2006] ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 1662 :
विनीता सक्सेना बनाम **पंकज पंडित** ; 22

[2002] ए. आई. आर. 2002 एस. सी. सी. 2582 :
प्रवीन मेहता बनाम **इन्द्रजीत मेहता** ; 22

[1994] (1994) 1 एस. सी. सी. 337 = ए. आई. आर. 1994 एस. सी. 710 :
वी. भगत बनाम **डी. भगत** ; 22

[1968] ए. आई. आर. 1968 एस. सी. 1413 :
गोपाल कृषजी केतकर बनाम **मोहम्मद हाजी लतीफ** । 22

अपीली सिविल अधिकारिता : 2019 की सिविल प्रकीर्ण अपील सं. 4286.

2019 के कुटुम्ब मामला सं. 101 में कुटुम्ब न्यायालय द्वारा तारीख 30 सितंबर, 2019 को पारित निर्णय और डिक्री के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री एन. सुरेश

प्रत्यर्थी की ओर से टी. धनासकरन

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति आर. सुब्बिया ने दिया ।

न्या. सुब्बिया – वर्तमान अपील पति के द्वारा 2019 के अर्जी सं. 101 अर्थात् हिन्दू विवाह मूल अर्जी (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अर्जी" कहा गया है) सं. 101 में विल्लुपुरम के कुटुंब न्यायालय द्वारा पारित किए गए निर्णय और डिक्री तारीख 30 सितंबर, 2019 के विरुद्ध फाइल की गई है । आक्षेपित निर्णय और डिक्री द्वारा उक्त कुटुंब न्यायालय ने पूर्वोक्त अर्जी को खारिज कर दिया था जो अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच अनुष्ठापित विवाह के विघटन के लिए फाइल की गई थी ।

2. उपरोक्त अर्जी को खारिज करने वाले आक्षेपित निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर अपीलार्थी द्वारा वर्तमान अपील फाइल की गई है । कुटुंब न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी का पक्षकथन यह था कि प्रत्यर्थी उसके साथ क्रूरता करती है और उसने उसका अभित्यजन कर दिया था इसलिए उनके बीच अनुष्ठापित विवाह हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(1)(i-क) और (i-ख) के उपबंधों के अधीन विघटन किए जाने योग्य है ।

3. अपीलार्थी ने मूल रूप से विवाह विघटित करने के लिए 2014 की अर्जी सं. 330 उप न्यायालय तंबाराम के समक्ष मूल रूप से फाइल की थी । उसके पश्चात् 2015 की अर्जी सं. 151 के रूप में मामले को कुटुंब न्यायालय, विल्लुपुरम में अंतरित कर दिया गया और उसके पश्चात् वह अर्जी प्रधान अधीनस्थ न्यायाधीश, विल्लुपुरम के समक्ष

2019 की अर्जी सं. 58 के रूप में अंतरित कर दी गई । उसके पश्चात् एक बार पुन: उस अर्जी को 2019 की अर्जी सं. 101 के रूप में कुटुंब न्यायालय, विल्लुपुरम में अंतरित कर दिया गया । प्रत्येक चरण में इन न्यायालयों में मामले को बार-बार संख्यांकित किया गया ।

4. अपीलार्थी ने 2015 की अर्जी सं. 151 में 2017 का अंतरिम आवेदन सं. 74 वीडियो मन्त्रणा के माध्यम से विचारण को संचालित करने की अनुज्ञा के लिए कुटुंब न्यायालय विल्लुपुरम के समक्ष फाइल किया था । वह आवेदन तारीख 25 जुलाई, 2017 को मंजूर किया गया । प्रत्यर्थी-पत्नी ने उसको चुनौती देते हुए 2017 का सिविल पुनरीक्षण आवेदन-(पीडी) सं. 3802 उक्त आदेश को अपास्त करने के लिए फाइल किया ।

5. उसके पश्चात् प्रत्यर्थी-पत्नी ने विद्वान् न्यायाधीश कुटुंब न्यायालय, विल्लुपुरम में 2015 की अर्जी सं. 151 को वापस लेने और उस अर्जी को विल्लुपुरम जिले के किसी अन्य न्यायालय में अंतरित करने के लिए 2017 का सिविल प्रकीर्ण आवेदन-अंतरण सं. 892 फाइल किया । उक्त अर्जी को खारिज कर दिया गया ।

6. उसके बाद प्रत्यर्थी ने विवाह-विच्छेद की अर्जी के निपटारे तक अंतरिम भरणपोषण के लिए 2016 का अंतरिम आवेदन सं. 140 फाइल किया । प्रत्यर्थी ने विचारण न्यायालय के समक्ष अंतरिम भरणपोषण के आवेदन के पूर्वतर निपटान के लिए 2018 का अंतरिम आवेदन सं. 6 फाइल किया और निपटारे तक 2014 की अर्जी सं. 33 की कार्यवाही पर रोक लगाने की मांग की किंतु उक्त आवेदन खारिज कर दिया गया ।

7. इसके पश्चात् प्रत्यर्थी ने 2018 के अंतरिम आवेदन सं. 6 में आवेदन को अपास्त करने के लिए 2018 का सिविल पुनरीक्षण आवेदन-(पीडी) सं. 1080 फाइल किया । इसे कुटुंब न्यायालय को यह निदेश देते हुए खारिज कर दिया गया था कि हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन फाइल 2016 का अंतरिम आवेदन सं. 140 को उस आदेश की एक प्रति प्राप्त होने की तारीख से एक माह की अवधि के भीतर निपटाया जाए और उसके पश्चात् अंतर्वर्ती आवेदन में 2015 की अर्जी सं. 151 में की मूल अर्जी पर कार्यवाही करें ।

8. इसके उपरांत प्रत्यर्थी-पत्नी ने 2018 का सिविल प्रकीर्ण आवेदन-अंतरण सं. 385 को 2015 की अर्जी सं. 151 को प्रत्याहृत करने के लिए फाइल किया जो कुटुंब न्यायालय, विल्लुपुरम में लंबित है और उक्त अर्जी को विल्लुपुरम जिले में स्थित किसी अन्य न्यायालय में अंतरण करने का निदेश दिया । विद्वान् प्रधान अधीनस्थ न्यायाधीश, विल्लुपुरम को आदेश देते हुए निदेशित किया गया कि 2015 के अर्जी सं. 151 को तीन माह की अवधि के भीतर निपटाया जाए ।

9. प्रत्यर्थी ने हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन अंतरिम भरणपोषण के लिए 2018 का अंतरिम आवेदन सं. 32 फाइल किया । उसके बाद प्रत्यर्थी-पत्नी ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 6, नियम 17 के अधीन अर्जी में संशोधन करने के लिए 2018 का अंतरिम आवेदन सं. 66 भी फाइल किया और उसे स्वीकार कर लिया गया था । अंततोगत्वा कुटुंब न्यायालय, विल्लुपुरम द्वारा साक्ष्य अभिलिखित करने के पश्चात् आक्षेपित निर्णय और डिक्री पारित की गई ।

10. कुटुंब न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी का मामला यह था कि प्रत्यर्थी एक उग्र महिला थी और अपीलार्थी तथा उसके माता-पिता एवम् उसके रिश्तेदारों के प्रति अशिष्ट थी । कुटुंब न्यायालय के समक्ष अर्जी में अपीलार्थी ने कई तुच्छ घटनाओं को निर्दिष्ट किया है जो अभिकथित रूप से प्रत्यर्थी की क्रूरता को दर्शाती है । अपीलार्थी ने यह भी अभिकथित किया कि जब वह अमेरिका में था तब प्रत्यर्थी ने तारीख 8 मई, 2013 को विवाह-विच्छेद की मांग की थी और इसलिए अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के संबंधियों द्वारा मध्यस्थता/पंचायत की गई थी और मध्यस्थता/पंचायत में भी प्रत्यर्थी ने विवाह-विच्छेद की मांग की थी । आगे यह अभिकथित किया गया कि तारीख 24 मई, 2013 को प्रत्यर्थी के संबंधियों के घर पर पंचायत होने के दौरान प्रत्यर्थी तथा प्रत्यर्थी के माता-पिता ने अपीलार्थी और उसके माता-पिता के विरुद्ध असंसदीय भाषा का प्रयोग किया और उनका अपमान किया तथा अपीलार्थी को चप्पल से मारने की धमकी भी दी । तथापि, इसके पश्चात् अपीलार्थी तारीख 21 दिसंबर, 2014 को उसके तारीख 10 सितंबर, 2012 को जन्मे उसके शिशु के साथ प्रत्यर्थी को अमेरिका ले गया ।

11. उसने आगे यह भी अभिकथित किया कि प्रत्यर्थी और उसके अप्राप्तवय शिशु को तारीख 21 जनवरी, 2014 को संयुक्त राज्य अमेरिका ले गया । तथापि, तारीख 22 जनवरी, 2014 को अमेरिका पहुंचने के बाद प्रत्यर्थी ने हल्ला-गुल्ला किया और तारीख 28 जनवरी, 2014 को आक्रोश और क्रोध में आकर एक बहुमूल्य लैपटॉप तोड़ दिया तथा भारत वापस आने के लिए विवश करने लगी और इसलिए विकल्प न बचने पर उसने अपीलार्थी, प्रत्यर्थी और अप्राप्तवय शिशु के लिए तारीख 30 जनवरी, 2014 को भारत लौटने की व्यवस्था की और प्रत्यर्थी बिना उसे सूचित किए सीधे अपने माता-पिता के साथ चली गई और इसलिए अपीलार्थी वापस आ गया ।

12. अपीलार्थी के अनुसार पूर्वोक्त घटना के अलावा भी प्रत्यर्थी ने कई अवसर पर अपीलार्थी और उसके कुटुंब के सदस्यों का अपमान किया था । अपीलार्थी के अनुसार शिशु के जन्म के दसवें दिन के बाद पुण्यदानम रस्म के दौरान भी अपीलार्थी के माता-पिता का प्रत्यर्थी और उसके माता-पिता द्वारा अपमान किया गया था । उसने आगे यह भी अभिकथित किया कि जब वे चेन्नई में एक साथ रहा करते थे तब भी प्रत्यर्थी बिना उसकी जानकारी के अपने माता-पिता से प्राय: भेंट करने चली जाया करती थी और इसलिए उसे प्रत्यर्थी द्वारा क्रूरता का सामना करना पड़ा । कुटुंब न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी के मामले में यह अभिकथन किया गया कि यद्यपि उसके माता-पिता ने शिशु के जन्म से पूर्व तारीख 24 मई, 2012 को उसके जन्मदिन पर एक साड़ी को उपहार में दी थी तब भी प्रत्यर्थी ने उनका अपमान किया ।

13. अपीलार्थी ने यह भी अभिकथन किया कि जब उसके माता-पिता प्रत्यर्थी से भेंट करने उसके माता-पिता के घर गए थे तब उसने उनके अप्राप्तवय शिशु को उसके माता-पिता को दिखाने से इनकार कर दिया था । उसने आगे यह अभिकथन किया कि यद्यपि उसने एक कीमती वेब कैमरा खरीदा था और उसे प्रत्यर्थी को तारीख 24 मई, 2012 को जन्मदिन पर उपहार में दिया था क्योंकि अपीलार्थी को अमेरिका की यात्रा पर जाने की उम्मीद थी तथा प्रत्यर्थी ने वेब कैमरे के माध्यम से शिशु को अपीलार्थी को नहीं दिखाया और यह बहाना बनाया

कि वेब कैमरा काम नहीं कर रहा था । अपीलार्थी ने यह भी अभिकथन किया कि चूंकि वह अपने अप्राप्तवय शिशु को देखने में असमर्थ था इसलिए उसने प्रत्यर्थी को एक टैबलेट उपहार में दिया था । तथापि, अपीलार्थी को शिशु का केवल फोटो दिखाया था जिससे उसका संताप और उदासी और बढ़ गई थी और इसने उसे हतोत्साहित कर दिया था । अपीलार्थी ने आगे यह अभिकथन किया कि प्रत्यर्थी ने उससे कभी-कभार ही बात की है ।

14. अपीलार्थी के विरुद्ध क्रूरता का अन्य अभिकथन यह था कि अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थी को उनके अप्राप्तवय शिशु का पासपोर्ट लेने के लिए कहने के बावजूद प्रत्यर्थी ने विलंब किया और उसने चेन्नई डाकघर की बजाय विल्लुपुरम डाकघर कार्यालय से पासपोर्ट के लिए आवेदन किया वह भी अपीलार्थी द्वारा बार-बार स्मरण कराने के पश्चात् किया था । उसने आगे यह दलील दी कि जब वे एक स्वतंत्र घर में एक साथ रह रहे थे तब भी अपीलार्थी को प्रत्यर्थी के साथ बातचीत करने में अत्यधिक कठिनाई होती थी क्योंकि वह अपनी मां के सम्मोहन में थी और प्राय: दाम्पत्य घर को छोड़ दिया करती थी और उसके पश्चात् प्रत्यर्थी की मन:स्थिति के स्थिर होने में 3 दिन का समय लगता था । उसने आगे यह अभिकथन किया कि प्रत्यर्थी ने खाना पकाने या घर की देखभाल करने संबंधी अपने वैवाहिक कर्तव्यों का पालन करते हुए अपीलार्थी की परवाह नहीं की थी । आगे यह भी अभिकथन किया गया कि अपीलार्थी के अमेरिका प्रस्थान से एक दिन पूर्व ही प्रत्यर्थी ने स्वेच्छया से तारीख 10 नवंबर, 2012 को चेन्नई में किराए के परिसर से पूरी गृहस्थी की वस्तुओं के साथ स्वयं को माता-पिता के घर पर स्थानांतरित कर लिया था । यद्यपि अपीलार्थी को सदैव के लिए अमेरिका में रहने की उम्मीद नहीं थी ।

15. प्रत्यर्थी ने इस बात से इनकार किया है कि उसने स्वेच्छा से चेन्नई से गृहस्थी की वस्तुओं को स्थानांतरित करने का विनिश्चय किया था और यह पूरा कार्य अपीलार्थी के पिता की निगरानी में किया गया था और इसके लिए उसने अपीलार्थी के पिता द्वारा हस्ताक्षरित एक ढुलाई रसीद भी प्रदर्श के रूप में फाइल की है ।

16. प्रत्यर्थी ने अपने प्रत्युत्तर में क्रूरता के सभी अभिकथनों से इनकार किया है । दूसरी ओर उसने अपने प्रत्युत्तर में कथन किया है कि वह अपीलार्थी ही है जिसने प्रत्यर्थी को अमेरिका से विवाह-विच्छेद की धमकी दी थी क्योंकि प्रत्यर्थी तारीख 10 अक्तूबर, 2012 को शिशु के जन्म के पश्चात् उसके माता-पिता के पास न आ सकी और न ही उनके साथ रह सकी थी । उसने यह अभिकथन किया कि 8 मई, 2013 को अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी को सूचना दी कि उसके माता-पिता ने उसे प्रत्यर्थी से विवाह-विच्छेद करने हेतु आवेदन करने की सलाह दी है क्योंकि प्रत्यर्थी उसके माता-पिता के घर में आने और रहने के लिए अनिच्छुक थी ।

17. धमकी से घबराकर प्रत्यर्थी ने यह सब अपने माता-पिता को बताया जिन्होंने अपीलार्थी के माता-पिता से पूछताछ की तो उन्होंने कहा कि यह पति-पत्नी के मध्य घरेलू विवाद है और इसलिए वे इसमें हस्तक्षेप करना नहीं चाहते हैं । उसने आगे यह दलील दी कि अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के नातेदारों की उपस्थिति में सुलह की गई और उसके पश्चात् शांति भंग हो गई ।

18. कुटुंब न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी और प्रत्यर्थी की ओर से निम्नलिखित दस्तावेजों को चिन्हित किया गया था :–

अपीलार्थी	प्रत्यर्थी
प्रदर्श पी-1 - विवाह का आमंत्रण	प्रदर्श आर-1 - टाटा कंपनी द्वारा तारीख 17 अक्तूबर, 2013 को जारी किया गया एच-4 वीजा आवेदन ।
प्रदर्श पी-2 - विवाह का फोटो	प्रदर्श आर-1 - कमाची अस्पताल के द्वारा तारीख 21 फरवरी, 2012 को जारी किया गया प्रमाणपत्र ।
प्रदर्श पी-3 - कुटुंब कार्ड की प्रति	प्रदर्श पी-3 - अपीलार्थी द्वारा शिशु के साथ लिया गया फोटो ।
	प्रदर्श पी-4 - कमाची अस्पताल की तारीख 21-02-2012 की चिकित्सा परीक्षा रिपोर्ट ।

	प्रदर्श पी-5 - टाटा कंपनी द्वारा तारीख 9 जनवरी, 2013 की वेतन पर्ची ।
	प्रदर्श पी-6 - अपीलार्थी की माता द्वारा शिशु के साथ लिया गया फोटो ।
	प्रदर्श पी-7 - सिटी यूनियन बैंक द्वारा तारीख 9 अक्तूबर, 2018 को जारी किया गया दस्तावेज ।
	प्रदर्श पी-8 - प्रत्यर्थी के नाम पर तारीख 5 नवंबर, 2012 को ली गई बीमा पालिसी ।
	प्रदर्श पी-9 डेक्कन एक्सप्रेस और मूवर्स द्वारा तारीख 10 नवंबर, 2012 को भेजी गई रसीद ।
	प्रदर्श पी-10 - दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए कुटुंब न्यायालय विल्लुपुरम की फाइल पर 2018 की अर्जी सं. 6 ।
	प्रदर्श पी-11 - नोटिस की प्रमाणित प्रति ।

19. अपीलार्थी की ओर से अपीलार्थी और उसके पिता ने क्रमश: अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के रूप में अभिसाक्ष्य दिया है । प्रत्यर्थी की ओर से प्रत्यर्थी और उसके पिता ने क्रमश: प्रति. सा. 1 और प्रति. सा. 2 के रूप में अभिसाक्ष्य दिया है ।

20. कुटुंब न्यायालय ने विचार करने के लिए निम्नलिखित बिन्दु विरचित किए हैं :–

क्या अर्जीदार अर्जी में किए गए प्रकथनों के आधार पर अनुतोष का हकदार था या नहीं ?

21. हमने कुटुंब न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी के द्वारा फाइल अर्जी और प्रत्यर्थी के प्रत्युत्तर पर विचार किया है । हमने अपीलार्थी और प्रत्यर्थी द्वारा कुटुंब न्यायालय के समक्ष पेश किए गए मौखिक साक्ष्य और दस्तावेजी साक्ष्य का भी परिशीलन किया है ।

22. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने उच्चतम न्यायालय के निम्नलिखित विनिश्चयों का अवलंब लिया है :

(i) **दलीप सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] ;

(ii) **ओसवाल फैट्स एण्ड ऑयल्स लिमिटेड** बनाम **आयुक्त (प्रशासन)**[2] ;

(iii) **समर घोष** बनाम **जय घोष**[3] ;

(iv) **थिरूग्ननसंबंडम** बनाम **कन्नन और अन्य**[4] ;

(v) **गोपाल कृषजी केतकर** बनाम **मोहम्मद हाजी लतीफ**[5] ;

(vi) **प्रवीन मेहता** बनाम **इन्द्रजीत मेहता**[6] ;

(vii) **विनीता सक्सेना** बनाम **पंकज पंडित**[7] ;

(viii) **मालती रवि** बनाम **बी. वी. रवि**[8] ;

(ix) **विनोद कुमार सुब्बैया** बनाम **सरस्वती पालनियप्पन**[9] ;

(x) **वी. भगत** बनाम **डी. भगत**[10] ;

23. हमने अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेलों द्वारा दी गई दलीलों पर गहराई से विचार किया है ।

24. अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के मध्य 18 अक्तूबर, 2010 को हिन्दू रीति-रिवाज के अनुसार विवाह अनुष्ठापित हुआ था । दोनों कुटुंब

---

[1] (2010) 2 एस. सी. सी. 114 = 2010 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 50.

[2] (2010) 4 एस. सी. सी. 728.

[3] (2007) 4 एस. सी. सी. 511.

[4] (2018) 6 सी. टी. सी. 198.

[5] ए. आई. आर. 1968 एस. सी. 1413.

[6] ए. आई. आर. 2002 एस. सी. सी. 2582.

[7] ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 1662.

[8] ए. आई. आर. 2014 एस. सी. 2881.

[9] (2015) 8 एस. सी. सी. 336 = ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 2504.

[10] (1994) 1 एस. सी. सी. 337 = ए. आई. आर. 1994 एस. सी. 710.

विल्लुपुरम के रहने वाले हैं क्योंकि अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के माता-पिता विल्लुपुरम जिले के निवासी हैं । अपीलार्थी और प्रत्यर्थी दोनों ही सुशिक्षित हैं । प्रत्यर्थी के माता-पिता व्यवसाय से चिकित्सक हैं । विवाह के दौरान प्रत्यर्थी के कुटुंब ने विवाह में स्त्रीधन के रूप में उपहार दिए थे ।

25. अपीलार्थी विवाह के समय चेन्नई में कार्य कर रहा था और चेन्नई में एक अविवाहित-पुरुषों के लिए बनाई गई वास-सुविधा में रह रहा था और विवाह के 2 माह पश्चात् तक वह ऐसा करता रहा । इसलिए नव-विवाहित जोड़े के रूप में अपीलार्थी और प्रत्यर्थी केवल सप्ताहांत के दौरान प्रत्यर्थी के माता-पिता के घर पर तब मिला करते थे जब अपीलार्थी सप्ताहांत में विल्लुपुरम की यात्रा करता था ।

26. कुटुंब ने तारीख 11 दिसंबर, 2010 को अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के रहने के लिए किराए के घर की व्यवस्था की । इस प्रकार, युवा-दम्पत्ति ने तारीख 11 दिसंबर, 2010 से चेन्नई में अपना स्वतंत्र वैवाहिक जीवन आरंभ किया । वे लगभग 13 माह तक ही चेन्नई में किराए के घर में एक साथ रहे । अभि. सा. 2 द्वारा दिया गया अभिसाक्ष्य उक्त बातों की पुष्टि करता है । अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के विवाह के समय बहुमूल्य आभूषणों को उपहार में देने के अतिरिक्त प्रत्यर्थी के माता-पिता ने अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के लिए गृहस्थी की वस्तुएं और कार आदि भी क्रय की थीं ।

27. विवाह संपन्न हुआ और तारीख 26 जनवरी, 2012 को इसकी पुष्टि हुई कि प्रत्यर्थी गर्भवती है और इसलिए शिशु के जन्म की पूर्वाशा में प्रत्यर्थी अपने माता-पिता के घर पर वापस चली गई । अपीलार्थी के माता-पिता ने गर्भावस्था के सातवें माह के दौरान वलक्कापु समारोह भी मनाया और संबंधित ससुराल वालों के द्वारा उनके दामाद और बहू अर्थात अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के पक्ष में उपहारों का विनिमय किया गया ।

28. तारीख 10 अक्तूबर, 2012 को पुत्र का जन्म हुआ । यह

अभिकथन किया गया कि प्रत्यर्थी के किसी भी संबंधी को पुण्यदानम समारोह के लिए आमंत्रित नहीं किया गया था और इस प्रकार अपीलार्थी का मानभंग हुआ और उसे क्रूरता का सामना करना पड़ा था । इस तथ्य को ध्यान में रखने पर यहां क्रूरता के तथ्य का समर्थन नहीं होता है क्योंकि प्रत्यर्थी को अपीलार्थी के यहां यात्रा करना और कोई भी कार्य करना इसलिए कठिन था कि उसकी सीजेरियन शल्य चिकित्सा हुई थी ।

29. इसी दौरान अपीलार्थी को अपनी कंपनी के लिए अमेरिका में काम करने का अवसर मिला और इसलिए उसने तारीख 11 नवंबर, 2012 को अपने रोजगार के संबंध में अमेरिका के लिए उड़ान भरी । इस प्रकार अपीलार्थी शिशु के जन्म के एक माह के भीतर ही अमेरिका चला गया था । अत:, प्रत्यर्थी अपने माता-पिता के साथ रहने लगी थी ।

30. तारीख 10 नवंबर, 2012 को किराए का मकान खाली कर दिया गया था, क्योंकि अपीलार्थी का समनुदेशन/करार प्रारंभ में 3 वर्ष की अवधि के लिए ही था । इस प्रकार अपीलार्थी और प्रत्यर्थी ने चेन्नई में किराए के घर को छोड़ने का विनिश्चयन किया क्योंकि प्रत्यर्थी को शिशु के जन्म के पश्चात् अपने माता-पिता के साथ रहना था ।

31. इसलिए गृहस्थी की सभी वस्तुओं को प्रत्यर्थी के माता-पिता के घर पहुंचा दिया गया । अपीलार्थी के पिता द्वारा गृहस्थी का सामान स्थानांतरित करने की व्यवस्था की गई थी । इसलिए यह निष्कर्ष निकालने का कोई आधार नहीं है कि प्रत्यर्थी ने प्रथम अवसर पर अपीलार्थी को स्वेच्छा से छोड़ा था ।

32. अपीलार्थी ने अर्जी में कई अभिकथन किए हैं जो तुच्छ प्रकृति के हैं ताकि ऐसा प्रतीत हो कि अपीलार्थी को प्रत्यर्थी के हाथों क्रूरता का सामना करना पड़ा है । तथापि, कुटुंब न्यायालय के समक्ष फाइल की गई अर्जी में किसी भी अभिकथन को अपीलार्थी द्वारा साबित नहीं किया गया है । अन्यथा भी ये अभिकथन तुच्छ प्रकृति के हैं जिनके अन्तर्गत विवाह-विच्छेद की डिक्री जारी किए जाने के लिए क्रूरता गठित नहीं होती है ।

33. यह अभिकथन कि प्रत्यर्थी और उसके माता-पिता ने तारीख 24 मई, 2013 को कुटुंब पंचायत में अपीलार्थी और उसके माता-पिता का अनादर किया था, साबित नहीं हुआ है । यदि अपीलार्थी उक्त पंचायत के परिणाम और प्रत्यर्थी तथा उसके माता-पिता के आचरण का अवलंब लेना चाहता था तो अपीलार्थी के लिए आवश्यक था कि वह उक्त को नासाबित करने के लिए स्वतंत्र साक्ष्य प्रस्तुत करता । इसके बजाय अपीलार्थी ने अपने अभिकथन को नासाबित करने के संबंध में प्रत्यर्थियों द्वारा साक्षियों को प्रस्तुत न करने के लिए प्रत्यर्थी को ही दोषी ठहराया है । कुछ भी हो, तारीख 24 मई, 2013 की पंचायत के पश्चात् अपीलार्थी 12 जनवरी, 2014 को अमेरिका से वापस आया और प्रत्यर्थी तथा अप्राप्तवय शिशु को अपने साथ अमेरिका ले गया । तारीख 21 जनवरी, 2014 को अपीलार्थी, प्रत्यर्थी और उनका शिशु यू.एस.ए. के लिए एक उड़ान में सवार हुए और 22 जनवरी, 2014 को यू.एस.ए. पहुंचे ।

34. प्रत्यर्थी के प्रत्युत्तर के अनुसार, अपीलार्थी के अमेरिका से वापस आने पर तथा उनके अमेरिका प्रस्थान करने से पूर्व वह प्रत्यर्थी के साथ उसके माता-पिता के घर में एक दिन रहा और तत्पश्चात् प्रत्यर्थी और उसके अप्राप्तवय शिशु को अपने माता-पिता के घर ले गया और उनको तारीख 16 जनवरी, 2014 को प्रत्यर्थी के माता-पिता के घर विल्लुपुरम में वापस छोड़ दिया तथा कार्य के लिए चेन्नई चला गया और प्रत्यर्थी से तारीख 21 जनवरी, 2014 को अप्राप्तवय शिशु के साथ हवाई अड्डे पर अमेरिका के लिए यात्रा टिकट लेने हेतु आने को कहा । उसने प्रत्यर्थी के उक्त कथन से इनकार नहीं किया है ।

35. इस अभिकथन से कि हवाई जहाज से प्रस्थान करने के लिए अपीलार्थी और प्रत्यर्थी विल्लुपुरम से अलग-अलग कार से चेन्नई हवाई अड्डे पर पहुंचे थे, हमारे विचार में क्रूरता का गठित नहीं होती है । संबंधित कुटुंब विल्लुपुरम जिले से है और यह अपीलार्थी ही है जिसने प्रत्यर्थी और अप्राप्तवय शिशु को उसके माता-पिता के घर में वापस छोड़ दिया था क्योंकि उनकी देखभाल प्रत्यर्थी के माता-पिता द्वारा ही की जा रही थी और उस समय तक अपीलार्थी के माता-पिता के द्वारा उनकी

देखभाल नहीं की जा रही थी इसलिए प्रत्यर्थी और वह अपने कार्य के संबंध में चेन्नई चला गया था ।

36. अपीलार्थी ने यह भी स्वीकार किया है कि अपीलार्थी की माता गठिया की रोगी थीं इसलिए वह किसी भी प्रकार से प्रत्यर्थी या अप्राप्तवय शिशु की मदद नहीं कर सकी और इसलिए गर्भावस्था की पुष्टि होने के पश्चात् प्रत्यर्थी द्वारा अपने माता-पिता के साथ रहने का चयन करने या अपने माता-पिता के साथ रहना जारी रखने में हम किसी भी प्रकार से क्रूरता का अनुमान लगाने में असमर्थ हैं । प्रत्यर्थी ने यह भी सुस्पष्ट रूप से कथन किया है कि प्रसव सामान्य नहीं था । तारीख 10 अक्तूबर, 2012 को सिजेरियन ऑपरेशन द्वारा प्रसव हुआ था । इसलिए प्रत्यर्थी के लिए अपीलार्थी के माता-पिता के साथ रहना संभव नहीं था । हमें यह विश्वास है कि प्रत्यर्थी के लिए शिशु के जन्म के पश्चात् अपीलार्थी के माता-पिता के घर में स्थानांतरित होना अत्यधिक अव्यावहारिक होता । विशिष्टत: इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अपीलार्थी स्वयं प्रत्यर्थी और शिशु की देखभाल के लिए वहां नहीं था और अपीलार्थी की मां स्वयं चिकित्सीय परिस्थितियों से गुजर रही थी जिसके कारण वह प्रत्यर्थी की मदद करने में असमर्थ थी जो शिशु के जन्म के पश्चात् सिजेरियन से हुई शल्य चिकित्सा के बाद स्वास्थ्यकर हो रही थी । इसके अतिरिक्त अपनी ससुराल में अपीलार्थी के बिना प्रत्यर्थी के लिए अपनी और अपने शिशु की देखभाल के लिए रहना कठिन हो गया होगा ।

37. यह अभिकथन कि प्रत्यर्थी ने पासपोर्ट को प्राप्त करने में विलंब किया और यह कि उसने केवल विल्लुपुरम पासपोर्ट कार्यालय के माध्यम से पासपोर्ट के लिए आवेदन किया था तथा उसके द्वारा चेन्नई पासपोर्ट कार्यालय से आवेदन नहीं किया था जैसी शिकायत अति तुच्छ प्रतीत होती है और इससे किसी क्रूरता का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है । प्रत्यर्थी का यह स्पष्टीकरण कि शिशु के जन्म के पश्चात् अप्राप्तवय शिशु को स्तनपान कराने के दौरान बनी गांठ से उसे कठिनाइयां हुईं जिससे पासपोर्ट की तुरंत व्यवस्था न कर पाना, जैसाकि अपीलार्थी द्वारा मांग की गई थी, एक युक्तियुक्त स्पष्टीकरण प्रतीत

होता है, किसी भी स्थिति में इसका अपीलार्थी द्वारा उपघर्षण किया जाना चाहिए था ।

38. यह अभिकथन कि संयुक्त राज्य अमेरिका पहुंचने के पश्चात् प्रत्यर्थी ने तारीख 28 जनवरी, 2014 को हल्ला-गुल्ला किया और एक बहुमूल्य लैपटॉप को तोड़ा जिससे अपीलार्थी को भारत वापस लौटने की व्यवस्था करने के लिए विवश होना पड़ा । यह अपीलार्थी का एकतरफा और असंतोषजनक स्पष्टीकरण प्रतीत होता है ताकि वह प्रत्यर्थी के माता-पिता को और प्रत्यर्थी के पति के रूप में प्रत्यर्थी के माता-पिता और समाज को दी गई प्रतिबद्धता से पीछे हटने का बहाना बना सके । प्रत्यर्थी का यह स्पष्टीकरण कि उस समय संयुक्त राज्य अमेरिका में मौसम की परिस्थिति 7 से 13 डिग्री के मध्य रहती है और उनके शिशु को अमेरिका पहुंचने के पश्चात् सांस लेने में समस्या उत्पन्न हो गई और स्वास्थ्य विभाग में रजिस्ट्रीकरण के अभाव में चिकित्सकों द्वारा उसकी तुरंत चिकित्सा पर ध्यान नहीं दिया जा सका जिससे प्रत्यर्थी द्वारा अपीलार्थी को तुरंत भारत वापस आने के लिए मजबूर करना, प्रत्यर्थी की युक्तियुक्त मांग प्रतीत होती है । प्रत्यर्थी की मांग से क्षुद्र होकर अभिकथित तौर पर अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी पर प्रहार किया तथा लात भी मारी और इसलिए उक्त तथ्य का ज्ञान होने पर प्रत्यर्थी के माता-पिता ने अपने संबंधियों से प्रत्यर्थी और उसके शिशु की सुरक्षित भारत वापसी के लिए अनुरोध किया । यह स्पष्टीकरण युक्तियुक्त और तर्कसम्मत प्रतीत होता है ।

39. इस प्रकार अपीलार्थी ने हड़बड़ी में तुरंत उनके लिए भारत वापस जाने के लिए टिकट की व्यवस्था की और प्रत्यर्थी तथा शिशु को हवाई अड्डे पर छोड़ दिया और प्रत्यर्थी के माता-पिता जो उसे लेने आए थे वह उनसे बिना मिले ही विलुप्त हो गया । क्या प्रत्यर्थी ने वास्तव में बहुमूल्य लैपटॉप तोड़ा था या नहीं, इसे साबित नहीं किया गया है । यह अपीलार्थी के द्वारा किया गया निराधार अभिकथन है ।

40. हमारे विचार में प्रत्यर्थी द्वारा इन परिस्थितियों में दिया गया स्पष्टीकरण युक्तियुक्त प्रतीत होता है । यदि अपीलार्थी एक जिम्मेदार

व्यक्ति होता तो वह प्रत्यर्थी और शिशु के साथ अस्पताल जाता या कम से कम उन्हें प्रत्यर्थी के माता-पिता के घर में रखता, इसके स्थान पर ऐसा प्रतीत हो रहा है कि वह उन्हें परित्यक्त करके विलुप्त हो गया और असहज प्रश्नों के पूछे जाने के भय से अमेरिका चला गया था । वह अपनी स्वयं की गलती का लाभ नहीं उठा सकता है । इस तथ्य से कि उसने 2014 की मूल अर्जी सं. 330 तंबाराम उप न्यायालय में फाइल की थी जो उसकी अधिकारिता में ही नहीं थी तथा इससे अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई अर्जी पर भी गंभीर संदेह होता है ।

41. हमारे विचार में कुटुंब न्यायालय एक न्यायसंगत निष्कर्ष पर पहुंचा है कि अपीलार्थी द्वारा कुटुंब न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी द्वारा ऐसा मामला साबित नहीं किया गया है कि प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा अभित्यजन या क्रूरता कारित की गई है । इसलिए हमें कुटुंब न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और डिक्री में हस्तक्षेप करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है ।

42. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए हम अपीलार्थी द्वारा फाइल किए गए उपरोक्त सिविल प्रकीर्ण आवेदन को खारिज करने के लिए आनत हैं । हम प्रत्यर्थी को विधि के अनुसार अपने उपचारों हेतु कार्यवाही करने की स्वतंत्रता देते हैं । खर्चे के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

अम.

वाई. जे. शब्बीर

बनाम

जी. थिरूवातास्वरार फ्री हाई स्कूल ट्रस्ट

(2020 का सिविल पुनरीक्षण आवेदन सं. 774)

तारीख 12 मार्च, 2021

न्यायमूर्ति वी. भवानी सुब्बारोयन

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – आदेश 3, नियम 1 – मान्यताप्राप्त अभिकर्ता या प्लीडर की नियुक्ति – किराएदार द्वारा अपने भाई को विशेष मुख्तारनामे के आधार पर मुख्तार-अभिकर्ता नियुक्त कराने संबंधी अंतर्वर्ती आवेदन फाइल किया जाना – आवेदक के भाई का व्यवसाय में भागीदार पाया जाना – प्रत्यर्थी/वादी के साथ चल रहे मूल वाद के तथ्यों से भी भाई का अवगत होना पाया जाना – मुख्तार-अभिकर्ता, आवेदक/प्रतिवादी का भाई है और व्यवसाय में भागीदार भी है इसलिए वह साक्ष्य देने के लिए निचले न्यायालय में पेश हो सकता है और अन्यथा भी वाद 3 वर्ष से विलंबित है इसलिए अंतर्वर्ती आवेदन खारिज करने वाला निचले न्यायालय का निर्णय अपास्त किए जाने योग्य है और मुख्तार-अभिकर्ता के रूप में आवेदक के भाई की नियुक्ति न्यायोचित है ।

यह सिविल पुनरीक्षण आवेदन 2015 के मूल वाद सं. 3746 में 2019 के अंतरिम आवेदन सं. 2 में विद्वान् तृतीय सहायक नगर सिविल न्यायाधीश, चेन्नई द्वारा तारीख 17 दिसंबर, 2019 को पारित किए गए आदेश को अपास्त करने के लिए फाइल किया गया है । मूलत: अंतर्वर्ती आवेदन, आवेदक द्वारा जो मूल वाद में प्रतिवादी है सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 पठित आदेश 3, नियम 1 मूलत:, अंतर्वर्ती आवेदन, आवेदक द्वारा (जो मूल वाद में प्रतिवादी है) सिविल

प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के साथ पठित आदेश 3, नियम 1 के अधीन आवेदक के बड़े भाई को उसकी ओर से मुख्तारनामा अभिकर्ता के रूप में प्रतिनिधित्व करने की अनुज्ञा के लिए और उसकी ओर से साक्ष्य देने हेतु फाइल किया गया था । आवेदक का मामला यह है कि वाद प्रत्यर्थी/वादी द्वारा उस वाद संपत्ति के उचित किराए को नियत करने के लिए फाइल किया गया था, जिसमें आवेदक एक अभिधारी है । यहां आवेदक ने 2018 के अंतरिम आवेदन सं. 9104 में एक अंतर्वर्ती आवेदन फाइल किया है, जिसमें न्यायालय से अपने भ्राता को वादांर्गत संपत्ति के संबंध में साक्ष्य देने सहित सभी शक्तियां देते हुए एक विशेष शक्ति प्राप्त अभिकर्ता के रूप में नियुक्त करने के लिए अनुज्ञा की ईप्सा की थी । आवेदक ने लगभग 20 रुपए के गैर न्यायिक पत्रों पर एक सामान्य मुख्तारनामा निष्पादित किया है और उसके पश्चात्, उसे पता चला कि दस्तावेज को 100/- रुपए के मूल्य के स्टांप पत्र पर तैयार किया जाना चाहिए था । इसलिए आवेदक ने नया आवेदन फाइल करने की स्वतंत्रता के साथ अंतर्वर्ती आवेदन वापस ले लिया । इसके पश्चात् आवेदक ने ऐसे ही अनुतोष के लिए 2018 का अंतरिम आवेदन सं. 13888 फाइल किया, जिसमें यह कहते हुए आक्षेप को समुत्थपित किया गया था कि शक्ति प्राप्त अभिकर्ता ने विलेख में हस्ताक्षर नहीं किए थे और उक्त आवेदन भी नए सिरे से फाइल करने की स्वतंत्रता के साथ वापस ले लिया गया । फिर आवेदक ने गलतियों के साथ 2019 का अंतरिम आवेदन फाइल किया और जिसमें आवेदक के स्थान पर आवेदक के भ्राता ने शपथ ली । अतः, आवेदक ने आवेदन वापस ले लिया और इसके पश्चात् उसने 2015 के मूल वाद सं. 3746 में 2019 का अंतरिम आवेदन सं. 2 फाइल किया । विद्वान् तृतीय सहायक नगर सिविल न्यायाधीश, चेन्नई ने, तारीख 17 दिसंबर, 2019 के आदेश द्वारा आवेदन खारिज कर दिया जिसके विरुद्ध वर्तमान सिविल पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया गया है । प्रत्यर्थी/वादी ने आवेदक द्वारा किए गए अभिकथनों का खण्डन करते हुए 2019 का अंतरिम आवेदन सं. 2 में प्रत्युत्तर फाइल किया और दलील दी है कि न तो शपथपत्र और न ही

विलेख में अभिकर्ता को शक्ति प्रदान करने का कोई कारण दिया गया है । आगे प्रत्यर्थी ने यह आक्षेप किया है कि अर्ध-सुनवाई पूरी हो जाने के प्रक्रम पर फाइल किए गए आवेदन को ग्रहण नहीं किया जा सकता । आवेदक, प्रत्यर्थी ट्रस्टी द्वारा 60,000/- रुपए प्रति माह के बकाया किराए की वसूली के लिए फाइल किए गए वाद में प्रतिवादी है । उक्त वाद में आवेदक ने अपना लिखित कथन फाइल किया और प्रत्यर्थी/वादी के साक्षियों की प्रतिपरीक्षा की है । आवेदक ने प्रतिवादी पक्ष के साक्षियों को पुन: बुलाने के लिए 2018 का अंतरिम आवेदन सं. 216, 2018 का अंतरिम आवेदन सं. 217 को प्रतिवादी पक्ष के साक्षियों को पुन: प्रस्तुत करने के लिए, 2018 का अंतरिम आवेदन सं. 218 को अभि. सा. 2 को प्रतिपरीक्षा के पुन: बुलाने हेतु और 2018 का अंतरिम आवेदन सं. 219 को अभि. सा. 2 के साक्ष्य को पुन: प्रस्तुत कराने के लिए फाइल किया है । इन सभी आवेदनों के अनुज्ञात किए जाने के पश्चात् उसके निर्देश पर, उसके काउंसेल द्वारा साक्षियों की प्रतिपरीक्षा की गई । इसलिए 20 जून, 2018 तक जब अभि. सा. 2 की प्रतिपरीक्षा की गई थी तब वह आवेदक था जिसे मामले को संचालित करने और वाद के प्रतिरक्षण का निर्देश दिया गया था । आवेदक प्रत्यर्थी की संपत्ति का अधिभोग कर रहा है और वह किराए का संदाय कर रहा है और न्यासियों के द्वारा किराए में वृद्धि के पश्चात् वह बढ़े हुए किराए का संदाय नहीं कर रहा है । जो तथ्य आवेदक की व्यक्तिगत जानकारी में हैं उनके बारे में केवल वही अभिसाक्ष्य दे सकता है और ऐसा कोई वैद्य कारण नहीं है कि उक्त मुख्तारनामे का अभिकर्ता न्यायालय के समक्ष पेश होकर साक्ष्य दे सके । निचले न्यायालय ने देखा कि हालांकि आवेदक ने अपनी ओर से स्वयं अभिसाक्ष्य न देने का कारण दिया है, लेकिन आवेदक ने इसका कोई कारण नहीं बताया है कि वाद की कार्यवाही में उसकी ओर से मुख्तारनामा-अभिकर्ता क्यों अभिसाक्ष्य दे । निचले न्यायालय ने यह भी देखा कि आवेदक द्वारा यह साबित करने के लिए कोई कारण नहीं दिया गया है कि वह स्वयं साक्ष्य देने से पीछे क्यों हट रहा है । इस दस्तावेज को विशेष रूप से एक सादा कागज पर तैयार किया गया है जिस पर

एक से अधिक व्यक्तियों के हस्ताक्षर हैं और अभिकर्ता को यह प्राधिकार था कि वह किसी भी न्यायालय में जहां वाद का अंतरण किया जाता है वहां आवेदक का प्रतिनिधित्व करें । इससे यह दर्शित होता है कि आवेदक ने मामले को संचालित न करने के लिए स्वयं को तैयार कर लिया है और यदि बल दिया जाता है तो उसने अंतरण का आवेदन भी प्रस्तुत करने की तैयारी कर ली है और इसलिए इस खंड को इस आवेदन के साथ फाइल किए गए मुख्तारनामा-विलेख में निर्दिष्ट भी किया गया है । यहां तक कि यदि यह आवेदन मंजूर किया जाता है तो भी मामले और आवेदन के गुणागुण को तय करने के लिए पूर्ण रूप से अभिकर्ता के साक्ष्य का अवलंब नहीं लिया जा सकता और मुख्तारनामा-विलेख में अभिकर्ता की नियुक्ति का कोई कारण अंतर्विष्ट नहीं है और न्यायालय ने आवेदन खारिज कर दिया । निचले न्यायालय के इस आदेश से व्यथित होकर आवेदक/प्रतिवादी ने उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया । आवेदन मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – उपरोक्त उपबंध को पढ़ने मात्र से यह पता चलता है कि न्यायालय यह विहित नहीं करता है कि अभिकर्ता को पूर्ण व्यक्तिगत ज्ञान और मामले से पूरी तरह से सुपरिचित होना चाहिए । यह एक सामान्य सिद्धांत है कि यदि आवेदक की ओर से अभिकर्ता के द्वारा अभिसाक्ष्य दिया जाता है, तो आवेदक बाद में अभिकर्ता द्वारा किए गए गलत अभिसाक्ष्य के लिए उसकी अनभिज्ञता का आश्रय नहीं ले सकता । चूंकि अभिकर्ता केवल आवेदक की ओर से कार्य कर रहा है, इसलिए ऐसा समझा जाना चाहिए कि यह अभिसाक्ष्य आवेदक द्वारा ही दिया गया था । इस प्रकार अभिकर्ता मामले से पूर्ण रूप से सुपरिचित था और इसे वाद के अधीन आने वाले संव्यवहार के बारे में व्यक्तिगत जानकारी थी । यह देखा जाना चाहिए कि क्या उक्त व्यक्ति जो पक्षकार की ओर से साक्ष्य देने के लिए उपस्थित हो रहा है वह पूरे मन से साक्ष्य देने के योग्य है या नहीं । इस प्रकार आवेदन खारिज करने के लिए निचले न्यायालय द्वारा अपनाए गए मानदंड अवांछनीय हैं । निचले न्यायालय को उस आवेदन पर विचार नहीं करना चाहिए था जो इतनी गलतियों के साथ

फाइल किया गया था और अभिकर्ता पक्षकार की ओर से अभिसाक्ष्य नहीं दे सकता । इस प्रकार पूर्वकल्पित मन से निचले न्यायालय ने आवेदक का आवेदन खारिज कर दिया और यह अभिनिर्धारित किया कि आवेदन मंजूर कर दिया जाए तब भी अभिकर्ता के सम्पूर्ण साक्ष्य का अवलंब लेने पर मामले को गुणागुण के आधार पर विनिश्चित नहीं किया जा सकता । निचले न्यायालय द्वारा किया गया प्रेक्षण अनपेक्षित है और यह न्यायालय यह नहीं समझ पा रहा है कि नीचे के न्यायालय ने किस संदर्भ में ऐसा निबंधन अभिव्यक्त किया है । आवेदन अनुज्ञात करने से पूर्व ही अभिकर्ता के साक्ष्य पर विचार किया जाता है और ऐसे अनधिकृत आवेदन से बचा जा सकता है । उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय का विचार है कि चूंकि मुख्तार-अभिकर्ता, आवेदक/प्रतिवादी का भाई है और व्यवसाय में भागीदार भी है, इसलिए वह आवेदक की ओर से साक्ष्य देने के लिए निचले न्यायालय के समक्ष उपस्थित हो सकता है । वाद वर्ष 2015 का है और अंतर्वर्ती आवेदन 2019 में फाइल किया गया है और मामला 3 वर्ष से अधिक विलंबित है जो वादी के अधिकारों के लिए अहितकर है जिसमें वह किराए में वृद्धि की मांग कर रहा है । अत: 2015 के मूल वाद सं. 3746 में फ़ाइल किए गए 2019 के अंतरिम आवेदन सं. 2 में तारीख 17 दिसंबर, 2019 का आदेश अपास्त किए जाने योग्य है । (पैरा 12, 13 और 14)

पुनरीक्षण (सिविल) अधिकारिता : 2020 का सिविल पुनरीक्षण आवेदन सं. 774.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 115 के अधीन पुनरीक्षण आवेदन ।

आवेदक की ओर से श्री एम. अरविन्द सुब्रहमण्यम

प्रत्यर्थी की ओर से श्री जी. सुगुमारन

आदेश

यह सिविल पुनरीक्षण आवेदन 2015 के मूल वाद सं. 3746 में 2019 के अंतरिम आवेदन सं. 2 में विद्वान् तृतीय सहायक नगर

सिविल न्यायाधीश, चेन्नई द्वारा तारीख 17 दिसंबर, 2019 को पारित किए गए आदेश को अपास्त करने के लिए फाइल किया गया है ।

2. मूलत: अंतर्वर्ती आवेदन, आवेदक द्वारा जो मूल वाद में प्रतिवादी है सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 पठित आदेश 3, नियम 1 मूलत:, अंतर्वर्ती आवेदन, आवेदक द्वारा (जो मूल वाद में प्रतिवादी है) सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के साथ पठित आदेश 3, नियम 1 के अधीन आवेदक के बड़े भाई को उसकी ओर से मुख्तारनामा अभिकर्ता के रूप में प्रतिनिधित्व करने की अनुज्ञा के लिए और उसकी ओर से साक्ष्य देने हेतु फाइल किया गया था ।

3. आवेदक का मामला यह है कि वाद प्रत्यर्थी/वादी द्वारा उस वाद संपत्ति के उचित किराए को नियत करने के लिए फाइल किया गया था, जिसमें आवेदक एक अभिधारी है । यहां आवेदक ने 2018 के अंतरिम आवेदन सं. 9104 में एक अंतर्वर्ती आवेदन फाइल किया है, जिसमें न्यायालय से अपने भ्राता को वादांगत संपत्ति के संबंध में साक्ष्य देने सहित सभी शक्तियां देते हुए एक विशेष शक्ति प्राप्त अभिकर्ता के रूप में नियुक्त करने के लिए अनुज्ञा की ईप्सा की थी । आवेदक ने लगभग 20 रुपए के गैर न्यायिक पत्रों पर एक सामान्य मुख्तारनामा निष्पादित किया है और उसके पश्चात्, उसे पता चला कि दस्तावेज को 100/- रुपए के मूल्य के स्टांप पत्र पर तैयार किया जाना चाहिए था । इसलिए आवेदक ने नया आवेदन फाइल करने की स्वतंत्रता के साथ अंतर्वर्ती आवेदन वापस ले लिया । इसके पश्चात् आवेदक ने ऐसे ही अनुतोष के लिए 2018 का अंतरिम आवेदन सं. 13888 फाइल किया, जिसमें यह कहते हुए आक्षेप को समुत्थापित किया गया था कि शक्ति प्राप्त अभिकर्ता ने विलेख में हस्ताक्षर नहीं किए थे और उक्त आवेदन भी नए सिरे से फाइल करने की स्वतंत्रता के साथ वापस ले लिया गया । फिर आवेदक ने गलतियों के साथ 2019 का अंतरिम आवेदन फाइल किया और जिसमें आवेदक के स्थान पर आवेदक के भ्राता ने शपथ ली । अत:, आवेदक ने आवेदन वापस ले लिया और इसके पश्चात् उसने 2015 के मूल वाद सं. 3746 में 2019 का अंतरिम आवेदन सं. 2

फाइल किया । विद्वान् तृतीय सहायक नगर सिविल न्यायाधीश, चेन्नई ने, तारीख 17 दिसंबर, 2019 के आदेश द्वारा आवेदन खारिज कर दिया जिसके विरुद्ध वर्तमान सिविल पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया गया है ।

4. प्रत्यर्थी/वादी ने आवेदक द्वारा किए गए अभिकथनों का खण्डन करते हुए 2019 का अंतरिम आवेदन सं. 2 में प्रत्युत्तर फाइल किया और दलील दी है कि न तो शपथपत्र और न ही विलेख में अभिकर्ता को शक्ति प्रदान करने का कोई कारण दिया गया है । आगे प्रत्यर्थी ने यह आक्षेप किया है कि अर्ध-सुनवाई पूरी हो जाने के प्रक्रम पर फाइल किए गए आवेदन को ग्रहण नहीं किया जा सकता ।

5. आवेदक, प्रत्यर्थी ट्रस्टी द्वारा 60,000/- रुपए प्रति माह के बकाया किराए की वसूली के लिए फाइल किए गए वाद में प्रतिवादी है । उक्त वाद में आवेदक ने अपना लिखित कथन फाइल किया और प्रत्यर्थी/वादी के साक्षियों की प्रतिपरीक्षा की है । आवेदक ने प्रतिवादी पक्ष के साक्षियों को पुन: बुलाने के लिए 2018 का अंतरिम आवेदन सं. 216, 2018 का अंतरिम आवेदन सं. 217 को प्रतिवादी पक्ष के साक्षियों को पुन: प्रस्तुत करने के लिए, 2018 का अंतरिम आवेदन सं. 218 को अभि. सा. 2 को प्रतिपरीक्षा के पुन: बुलाने हेतु और 2018 का अंतरिम आवेदन सं. 219 को अभि. सा. 2 के साक्ष्य को पुन: प्रस्तुत कराने के लिए फाइल किया है । इन सभी आवेदनों के अनुज्ञात किए जाने के पश्चात् उसके निर्देश पर, उसके काउंसेल द्वारा साक्षियों की प्रतिपरीक्षा की गई । इसलिए 20 जून, 2018 तक जब अभि. सा. 2 की प्रति-परीक्षा की गई थी तब वह आवेदक था जिसे मामले को संचालित करने और वाद के प्रतिरक्षण का निर्देश दिया गया था । आवेदक प्रत्यर्थी की संपत्ति का अधिभोग कर रहा है और वह किराए का संदाय कर रहा है और न्यासियों के द्वारा किराए में वृद्धि के पश्चात् वह बढ़े हुए किराए का संदाय नहीं कर रहा है । जो तथ्य आवेदक की व्यक्तिगत जानकारी में हैं उनके बारे में केवल वही अभिसाक्ष्य दे सकता है और ऐसा कोई वैद्य कारण नहीं है कि उक्त मुख्तारनामे का अभिकर्ता न्यायालय के

समक्ष पेश होकर साक्ष्य दे सके । निचले न्यायालय ने देखा कि हांलाकि आवेदक ने अपनी ओर से स्वयं अभिसाक्ष्य न देने का कारण दिया है, लेकिन आवेदक ने इसका कोई कारण नहीं बताया है कि वाद की कार्यवाही में उसकी ओर से मुख्तारनामा-अभिकर्ता क्यों अभिसाक्ष्य दे । निचले न्यायालय ने यह भी देखा कि आवेदक द्वारा यह साबित करने के लिए कोई कारण नहीं दिया गया है कि वह स्वयं साक्ष्य देने से पीछे क्यों हट रहा है । इस दस्तावेज को विशेष रूप से एक सादा कागज पर तैयार किया गया है जिस पर एक से अधिक व्यक्तियों के हस्ताक्षर हैं और अभिकर्ता को यह प्राधिकार था कि वह किसी भी न्यायालय में जहां वाद का अंतरण किया जाता है वहां आवेदक का प्रतिनिधित्व करें । इससे यह दर्शित होता है कि आवेदक ने मामले को संचालित न करने के लिए स्वयं को तैयार कर लिया है और यदि बल दिया जाता है तो उसने अंतरण का आवेदन भी प्रस्तुत करने की तैयारी कर ली है और इसलिए इस खंड को इस आवेदन के साथ फाइल किए गए मुख्तारनामा-विलेख में निर्दिष्ट भी किया गया है । यहां तक कि यदि यह आवेदन मंजूर किया जाता है तो भी मामले और आवेदन के गुणागुण को तय करने के लिए पूर्ण रूप से अभिकर्ता के साक्ष्य का अवलंब नहीं लिया जा सकता और मुख्तारनामा-विलेख में अभिकर्ता की नियुक्ति का कोई कारण अंतर्विष्ट नहीं है और न्यायालय ने आवेदन खारिज कर दिया ।

6. आवेदक के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि 2018 के अंतरिम आवेदन सं. 9104 में आवेदक ने अपने भाई को विशेष शक्ति प्राप्त अभिकर्ता के रूप में वादान्तर्गत संपत्ति के संबंध में साक्ष्य देने सहित सभी शक्तियां देते हुए नियुक्त करने के लिए न्यायालय से अनुज्ञा की ईप्सा की थी । विद्वान् काउंसेल ने आगे यह दलील दी कि आवेदक ने 20 रुपए मूल्य के गैर-न्यायिक स्टाम्प पत्रों पर एक सामान्य मुख्तारनामा निष्पादित किया था और बाद में आवश्यकता के अनुसार 100/- रुपए वाला स्टाम्प पेपर निष्पादित किया और मूल्य का, 2018 का नया अंतरिम आवेदन सं. 13888 उसी अनुतोष के लिए फाइल किया । प्रत्यर्थी/वादी के इस आक्षेप पर कि मुख्तारनामा-अभिकर्ता ने विलेख पर

अपने हस्ताक्षर नहीं किए हैं, आवेदक ने पुन: आवेदन करने की स्वतंत्रता सहित आवेदन वापस ले लिया था । इसके पश्चात् आवेदक ने 2019 अंतरिम आवेदन सं. 1 फाइल किया जिसमें गलतियां पाई गईं तथा इस आवेदन को आवेदक के स्थान पर आवेदक के भाई द्वारा शपथ के साथ फाइल किया गया था । इसलिए आवेदक ने इस आवेदन को भी वापस ले लिया था और इसके पश्चात् उसने 2015 के मूल वाद सं. 3746 में 2019 का अंतरिम आवेदन सं. 2 फाइल किया । निचले न्यायालय ने उक्त आवेदन को गलत रूप से इस आधार पर खारिज कर दिया कि मुख्तारनामे में उन कारणों का विनिर्दिष्ट रूप से उल्लेख नहीं किया गया था कि मुख्तारनामा-अभिकर्ता की नियुक्ति क्यों की जाए ।

7. आवेदक के विद्वान् काउंसेल ने आगे यह दलील दी कि आवेदक को व्यवसाय के उद्देश्य से व्यापक रूप से यात्राएं करनी हैं और वह अपने व्यवसाय में बहुत व्यस्त है । उसने आगे यह दलील दी कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 3 में मुख्तारनामा-अभिकर्ता की नियुक्ति के लिए किसी भी कारण की परिकल्पना नहीं की गई है और उक्त उपबंध पर विचार किए बिना ही नीचे के न्यायालय ने यांत्रिक रूप से आदेश पारित किया है । मुख्तारनामा-अभिकर्ता वाई. जे. अब्बास कोई और नहीं बल्कि आवेदक का भाई है । आवेदक और वाई जे. शब्बीर दोनों एक ही परिसर में एक साथ कारोबार करते हैं । अत: किराए के परिसर और वाद की कार्यवाही विषयक सभी विवरणों की जानकारी सभी को अच्छी तरह से है और मुख्तारनामा-अभिकर्ता को भी उक्त तथ्य की जानकारी है । विद्वान् काउंसेल ने आगे यह दलील दी है कि मुख्तारनामा-अभिकर्ता को मामले और किराए का परिसर के बारे में व्यक्तिगत जानकारी नहीं थी जो कि केवल निचले न्यायालय के द्वारा की गई उपधारणा है । जब वाद को भवन के उचित किराए को तय करने के लिए किया गया हो तो वहां किसी व्यक्तिगत जानकारी की आवयश्यकता नहीं होती है और मुख्तारनामा-अभिकर्ता भवन की स्थिति के बारे में अभिसाक्ष्य दे सकता था । निचला न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि आवेदक साक्ष्य पेश करने में सक्षम नहीं है । आवेदक चेन्नई में कारोबार कर रहा है, लेकिन साथ ही वह अन्य कारोबार भी कर रहा है और इसके लिए उसे

व्यापक रूप से यात्राएं करनी पड़ती हैं । इसके अलावा जिस व्यक्ति को मुख्तार-अभिकर्ता के रूप में नियुक्त किया गया है वह भी कारोबार में भागीदार है और वह मामले के तथ्यों से अच्छी तरह से सुपरिचित है और वाद के अंतर्गत आने वाले लेनदेन के बारे में व्यक्तिगत जानकारी रखता है । इसलिए निचले न्यायालय का आदेश अपास्त किए जाने योग्य है ।

8. इस न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया तथा आवेदक के विद्वान् काउंसेल को सुना ।

9. 2015 के मूल वाद सं. 3746 में वाद, प्रत्यर्थी/वादी द्वारा निर्णय और डिक्री पारित करने के लिए फाइल किया गया था जिसमें आवेदक/प्रतिवादी को वादपत्र की तारीख से प्रति माह किराए में वृद्धि किए जाने के कारण 60,000/- रुपए की राशि का संदाय करने का निदेश दिया गया था । आवेदक/प्रतिवादी एक किराएदार था और प्रत्यर्थी/वादी अर्थात् थिरूवातास्वरार फ्री हाई स्कूल ट्रस्ट एक न्यास है जिसका प्रतिनिधित्व गरीब लोगों के लाभ के लिए इसके न्यासी टी. आर. के. सरवनन द्वारा किया गया है और इसका बंदोबस्त टी. पी. रामास्वामी पिल्लई द्वारा किया गया है । न्यास की आय का उपयोग विद्यालय के रख-रखाव और प्रबंधन के लिए किया जाता है । प्रत्यर्थी/वादी परिसर सं. 145, प्रकाशम, सलाई ब्रॉडवे, चेन्नई की भूमि का स्वामी है । आवेदक/प्रतिवादी डोर सं. 145 प्रकाशम, सलाई, ब्रॉडवे चेन्नई में 3536 वर्ग फुट की सीमा के भूतल पर और 1300 वर्ग फुट मेजानाइन प्रथम तल (डुपलेक्स) में वाणिज्यिक प्रयोजनार्थ 7,500/- रुपए के मासिक किराए पर वादी के अधीन किराएदार हैं । चूंकि उक्त संपत्ति नगर का वाणिज्यिक परिक्षेत्र बन गया है, इसलिए प्रत्यर्थी/वादी से उच्चतर किराए की ईप्सा कर रहे हैं । चूंकि आवेदक ए. वाई. जे. इंजीनियरिंग के नाम से एक कंपनी चला रहा है इसलिए प्रत्यर्थी ने 2011 से किराए में वृद्धि की थी और उसकी संसूचना आवेदक को दे दी गई थी । कई संसूचनाओं के बावजूद आवेदक/प्रतिवादी ने बढ़े हुए किराए का संदाय नहीं किया । इसलिए प्रत्यर्थी/वादी के पास कोई अन्य विकल्प नहीं होने के कारण

उसने उचित किराया 60,000/- रुपए प्रति माह तय करने के लिए वाद फाइल किया है । 2011 से 2014 तक विधिक नोटिस भेजने के बावजूद आवेदक ने किराया नहीं दिया । वाद में आवेदक/प्रतिवादी द्वारा तारीख 27 जून, 2016 को लिखित कथन फाइल किया जिसमें सभी प्रकथनों को खारिज करते हुए कथन किया गया कि परिसर में बुनियादी आधारभूत आवश्यक और सामान्य न्यूनतम सुख-सुविधाओं का अभाव है और यह इमारत जीर्ण-शीर्ण स्थिति में थी और उसने उक्त इमारत को ठीक करने में बहुत प्रयास किए हैं और किराए में की गई वृद्धि किसी भी प्रकार उचित नहीं है ।

10. आवेदक ने 2015 के मूल वाद सं. 3746 में 2019 का अंतरिम आवेदन सं. 2 फाइल किया है जिसमें उसकी ओर से साक्ष्य देने के लिए उसके भाई को नियुक्त करने की ईप्सा की गई है । उक्त आवेदन निचले न्यायालय ने इस आधार पर खारिज कर दिया था कि आवेदक की ओर से अभिसाक्ष्य के रूप में पेश किए जाने वाले तथ्य को मुख्तारनामा-अभिकर्ता की व्यक्तिगत जानकारी में होने चाहिए और करार में ऐसा कोई प्रकथन नहीं है कि अभिकर्ता पूर्ण रूप से मामले के तथ्यों से अवगत है ।

11. निचले न्यायालय को आवेदक द्वारा अनुरोध किए गए अवसर से पूर्वकल्पित मन से इनकार नहीं करना चाहिए था । यह केवल आवेदक की ओर से मुख्तार-अभिकर्ता को अभिसाक्ष्य देने की अनुज्ञा हेतु एक आवेदन है । सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश III, नियम 1 और 2 ऐसे ही मुख्तार-अभिकर्ता को पक्षकारों की ओर से पेश होने और अभिसाक्ष्य देने के लिए आवेदन करने का उपबंध करता है । इसे नीचे उद्धरण किया गया है :–

> "1. **उपसंजातियां, आदि स्वयं या मान्यताप्राप्त अभिकर्ता द्वारा या प्लीडर के द्वारा की जा सकेंगी** – किसी भी न्यायालय में या उससे कोई भी ऐसी उपसंजाति, आवेदन या कार्य, जिसे ऐसे न्यायालय में करने के लिए कोई पक्षकार विधि द्वारा अपेक्षित या

प्राधिकृत है, वहां के सिवाय जहां तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा अभिव्यक्त रूप से अन्यथा उपबंधित हो, पक्षकार द्वारा स्वयं या उसके मान्यताप्राप्त अभिकर्ता द्वारा या उसकी ओर से, [यथास्थिति, उपसंजात होने वाले, आवेदन करने वाले या कार्य करने वाले] उसके प्लीडर द्वारा किया जा सकेगा :

परन्तु यदि न्यायालय ऐसा निर्दिष्ट करे तो ऐसी उपसंजाति स्वयं पक्षकार द्वारा की जाएगी ।

2. **मान्यताप्राप्त अभिकर्ता** – पक्षकारों के जिन मान्यताप्राप्त अभिकर्ता द्वारा ऐसी उपसंजातियां, आवेदन और कार्य किए जा सकेंगे । वे निम्नलिखित हैं –

(क) ऐसे मुख्तारनामे धारित करने वाले व्यक्ति जिनमें उन्हें ऐसे पक्षकारों की ओर से ऐसी उपसंजातियां, आवेदन और कार्य करने के लिए प्राधिकृत किया गया है ;

(ख) जहां कोई भी अन्य अभिकर्ता ऐसी उपसंजातियों, आवेदन और कार्य करने के लिए अभिव्यक्त रूप से प्राधिकृत नहीं है वहां ऐसे व्यक्ति जो उन पक्षकारों के लिए और उनके नाम से व्यापार या कारबार करते हैं, जो पक्षकार उस न्यायालय की अधिकारिता की उन स्थानीय सीमाओं में निवास नहीं करते हैं जिन सीमाओं के भीतर ऐसी उपसंजाति आवेदन या कार्य ऐसे व्यापार या कारबार की ही बाबत किया जाता है ।"

12. उपरोक्त उपबंध को पढ़ने मात्र से यह पता चलता है कि न्यायालय यह विहित नहीं करता है कि अभिकर्ता को पूर्ण व्यक्तिगत ज्ञान और मामले से पूरी तरह से सुपरिचित होना चाहिए । यह एक सामान्य सिद्धांत है कि यदि आवेदक की ओर से अभिकर्ता के द्वारा अभिसाक्ष्य दिया जाता है, तो आवेदक बाद में अभिकर्ता द्वारा किए गए गलत अभिसाक्ष्य के लिए उसकी अनभिज्ञता का आश्रय नहीं ले सकता ।

चूंकि अभिकर्ता केवल आवेदक की ओर से कार्य कर रहा है, इसलिए ऐसा समझा जाना चाहिए कि यह अभिसाक्ष्य आवेदक द्वारा ही दिया गया था । इस प्रकार अभिकर्ता मामले से पूर्ण रूप से सुपरिचित था और इसे वाद के अधीन आने वाले संव्यवहार के बारे में व्यक्तिगत जानकारी थी । यह देखा जाना चाहिए कि क्या उक्त व्यक्ति जो पक्षकार की ओर से साक्ष्य देने के लिए उपस्थित हो रहा है वह पूरे मन से साक्ष्य देने के योग्य है या नहीं ।

13. इस प्रकार आवेदन खारिज करने के लिए निचले न्यायालय द्वारा अपनाए गए मानदंड अवांछनीय हैं । निचले न्यायालय को उस आवेदन पर विचार नहीं करना चाहिए था जो इतनी गलतियों के साथ फाइल किया गया था और अभिकर्ता पक्षकार की ओर से अभिसाक्ष्य नहीं दे सकता । इस प्रकार पूर्वकल्पित मन से निचले न्यायालय ने आवेदक का आवेदन खारिज कर दिया और यह अभिनिर्धारिरत किया कि आवेदन मंजूर कर दिया जाए तब भी अभिकर्ता के सम्पूर्ण साक्ष्य का अवलंब लेने पर मामले को गुणागुण के आधार पर विनिश्चित नहीं किया जा सकता । निचले न्यायालय द्वारा किया गया प्रेक्षण अनपेक्षित है और यह न्यायालय यह नहीं समझ पा रहा है कि नीचे के न्यायालय ने किस संदर्भ में ऐसा निबंधन अभिव्यक्त किया है । आवेदन अनुज्ञात करने से पूर्व ही अभिकर्ता के साक्ष्य पर विचार किया जाता है और ऐसे अनधिकृत आवेदन से बचा जा सकता है ।

14. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय का विचार है कि चूंकि मुख्तार-अभिकर्ता, आवेदक/प्रतिवादी का भाई है और व्यवसाय में भागीदार भी है, इसलिए वह आवेदक की ओर से साक्ष्य देने के लिए निचले न्यायालय के समक्ष उपस्थित हो सकता है । वाद वर्ष 2015 का है और अंतर्वर्ती आवेदन 2019 में फाइल किया गया है और मामला 3 वर्ष से अधिक विलंबित है जो वादी के अधिकारों के लिए अहितकर है जिसमें वह किराए में वृद्धि की मांग कर रहा है । अत: 2015 के मूल वाद सं. 3746 में फ़ाइल किए गए 2019 के अंतरिम आवेदन सं. 2 में तारीख 17 दिसंबर, 2019 का आदेश अपास्त किए जाने योग्य है ।

15. तद्नुसार, यह सिविल पुनरीक्षण आवेदन मंजूर किया जाता है और 2015 के मूल वाद सं. 3746 में फाइल किए गए 2019 के अंतरिम आवेदन सं. 2 में पारित किया गया तारीख 17 दिसंबर, 2019 का आदेश अपास्त किया जाता है । मुख्तारनामा धारक को इस आदेश की एक प्रति प्राप्त होने की तारीख से दो सप्ताह की अवधि के भीतर निचले न्यायालय के समक्ष समुचित मुख्तारनामा फाइल करना होगा । निचला न्यायालय वाद में की कार्यवाही अग्रसर कर सकता है और इस पर 3 माह की अवधि के भीतर निर्णय दे सकता है । परिणामस्वरूप संबंधित प्रकीर्ण आवेदन को बंद किया जाता है । खर्चे के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

आवेदन मंजूर किया गया ।

अम./अस.

संसद् के अधिनियम

ग्राम न्यायालय अधिनियम, 2008

(2009 का अधिनियम संख्यांक 4)

[7 जनवरी, 2009]

नागरिकों की उनके निकटतम स्थान पर न्याय तक पहुंच उपलब्ध कराने के प्रयोजनों के लिए ग्रामीण स्तर पर ग्राम न्यायालयों की स्थापना करने और यह सुनिश्चित करने के लिए कि कोई नागरिक सामाजिक, आर्थिक या अन्य नि:शक्तता के कारण न्याय प्राप्त करने के अवसरों से वंचित तो नहीं हो रहा है, और उनसे संबंधित या उनके आनुषंगिक विषयों का उपबंध करने के लिए अधिनियम

भारत गणराज्य के उनसठवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :–

अध्याय 1

प्रारंभिक

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ – (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम ग्राम न्यायालय अधिनियम, 2008 है ।

(2) इसका विस्तार जम्मू-कश्मीर राज्य, नागालैंड राज्य, अरुणाचल प्रदेश राज्य, सिक्किम राज्य और जनजातीय क्षेत्रों के सिवाय संपूर्ण भारत पर है ।

स्पष्टीकरण – इस उपधारा में, "जनजातीय क्षेत्रों" पद से संविधान की छठी अनुसूची के पैरा 20 के नीचे सारणी के भाग 1, भाग 2, भाग 2क और भाग 3 में क्रमशः असम राज्य, मेघालय राज्य, त्रिपुरा राज्य और मिजोरम राज्य के विनिर्दिष्ट क्षेत्र अभिप्रेत हैं ।

(3) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा, जो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में प्रकाशित अधिसूचना द्वारा, नियत करे और भिन्न-भिन्न राज्यों के लिए भिन्न-भिन्न तारीखें नियत की जा सकेंगी ।

2. परिभाषाएं – इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) "ग्राम न्यायालय" से धारा 3 की उपधारा (1) के अधीन स्थापित न्यायालय अभिप्रेत है ;

(ख) "ग्राम पंचायत" से संविधान के अनुच्छेद 243ख के अधीन ग्रामीण क्षेत्रों के लिए ग्राम स्तर पर गठित स्वायत्त शासन की कोई संस्था (किसी भी नाम से ज्ञात हो) अभिप्रेत है ;

(ग) "उच्च न्यायालय" से अभिप्रेत है, –

(i) किसी राज्य के संबंध में, उस राज्य का उच्च न्यायालय ;

(ii) उस संघ राज्यक्षेत्र के संबंध में, जिसके लिए किसी राज्य के उच्च न्यायालय की अधिकारिता विधि द्वारा विस्तारित की गई है, वह उच्च न्यायालय ;

(iii) किसी अन्य संघ राज्यक्षेत्र के संबंध में, उस राज्यक्षेत्र के लिए भारत के उच्चतम न्यायालय से भिन्न, दांडिक अपील का सर्वोच्च न्यायालय ;

(घ) "अधिसूचना" से राजपत्र में प्रकाशित अधिसूचना अभिप्रेत है और "अधिसूचित" पद का तद्नुसार अर्थ लगाया जाएगा ;

(ङ) "न्यायाधिकारी" से धारा 5 के अधीन नियुक्त ग्राम न्यायालय का पीठासीन अधिकारी अभिप्रेत है ;

(च) "मध्यवर्ती स्तर पर पंचायत" से संविधान के भाग 9 के उपबंधों के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों के लिए संविधान के अनुच्छेद 243ख के अधीन मध्यवर्ती स्तर पर गठित स्वायत्त शासन की संस्था (किसी भी नाम से ज्ञात हो) अभिप्रेत है ;

(छ) "विहित" से इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है ;

(ज) "अनुसूची" से इस अधिनियम से संलग्न अनुसूची अभिप्रेत है ;

(झ) संघ राज्यक्षेत्र के संबंध में "राज्य सरकार" से संविधान के अनुच्छेद 239 के अधीन नियुक्त उसका प्रशासक अभिप्रेत है ;

(ञ) उन शब्दों और पदों के जो, इसमें प्रयुक्त हैं और परिभाषित नहीं हैं किंतु सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) या दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में परिभाषित हैं वही अर्थ होंगे, जो उन संहिताओं में हैं ।

अध्याय 2

ग्राम न्यायालय

3. ग्राम न्यायालयों की स्थापना – (1) राज्य सरकार, इस अधिनियम द्वारा ग्राम न्यायालय को प्रदत्त अधिकारिता और शक्तियों का प्रयोग करने के प्रयोजन के लिए, उच्च न्यायालय से परामर्श करने के पश्चात्, अधिसूचना द्वारा, जिले में मध्यवर्ती स्तर पर प्रत्येक पंचायत या मध्यवर्ती स्तर पर निकटवर्ती पंचायतों के समूह के लिए या जहां किसी राज्य में मध्यवर्ती स्तर पर कोई पंचायत नहीं है वहां निकटवर्ती ग्राम पंचायतों के समूह के लिए एक या अधिक ग्राम न्यायालय स्थापित कर सकेगी ।

(2) राज्य सरकार, उच्च न्यायालय से परामर्श करने के पश्चात् अधिसूचना द्वारा, ऐसे क्षेत्र की स्थानीय सीमाएं विनिर्दिष्ट करेगी, जिस पर ग्राम न्यायालय की अधिकारिता विस्तारित की जाएगी और किसी भी समय, ऐसी सीमाओं को बढ़ा सकेगी, कम कर सकेगी या परिवर्तित कर सकेगी ।

(3) उपधारा (1) के अधीन स्थापित ग्राम न्यायालय तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अधीन स्थापित न्यायालयों के अतिरिक्त होंगे ।

4. ग्राम न्यायालय का मुख्यालय – प्रत्येक ग्राम न्यायालय का मुख्यालय उस मध्यवर्ती पंचायत के मुख्यालय पर, जिसमें ग्राम न्यायालय स्थापित है या ऐसे अन्य स्थान पर अवस्थित होगा, जो राज्य सरकार द्वारा अधिसूचित किए जाएं ।

5. न्यायाधिकारी की नियुक्ति – राज्य सरकार, उच्च न्यायालय के परामर्श से, प्रत्येक ग्राम न्यायालय के लिए एक न्यायाधिकारी की नियुक्ति करेगी ।

6. न्यायाधिकारी की नियुक्ति के लिए अर्हताएं – (1) कोई व्यक्ति न्यायाधिकारी के रूप में नियुक्त किए जाने के लिए तभी अर्हित होगा, जब वह प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट के रूप में नियुक्त किए जाने के लिए पात्र हो ।

(2) न्यायाधिकारी की नियुक्ति करते समय, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, स्त्रियों तथा ऐसे अन्य वर्गों या समुदायों के सदस्यों को प्रतिनिधित्व दिया जाएगा, जो राज्य सरकार द्वारा समय-समय पर, अधिसूचना द्वारा, विनिर्दिष्ट किए जाएं ।

7. न्यायाधिकारी का वेतन, भत्ते और सेवा के अन्य निबंधन और शर्तें – न्यायाधिकारी को संदेय वेतन और अन्य भत्ते तथा उसकी सेवा के अन्य निबंधन और शर्तें वे होंगी, जो प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट को लागू हों ।

8. न्यायाधिकारी का उन कार्यवाहियों में पीठासीन न होना, जिनमें वह हितबद्ध है – न्यायाधिकारी ग्राम न्यायालय की उन कार्यवाहियों में पीठासीन नहीं होगा जिनमें उसका कोई हित है या वह विवाद की विषय-वस्तु में अन्यथा अंतर्वलित है या उसका ऐसी कार्यवाहियों के किसी पक्षकार से संबंध है और ऐसे मामले में न्यायाधिकारी मामले को, किसी अन्य न्यायाधिकारी को अंतरित किए जाने के लिए, यथास्थिति, जिला न्यायालय या सेशन न्यायालय को भेजेगा ।

9. न्यायाधिकारी का ग्रामों में चल न्यायालय लगाना और कार्यवाहियां करना – (1) न्यायाधिकारी अपनी अधिकारिता के अंतर्गत आने वाले ग्रामों का आवधिक रूप से दौरा करेगा और ऐसे किसी स्थान पर विचारण या कार्यवाहियां करेगा, जिसे वह उस स्थान के निकट समझता है जहां पक्षकार सामान्यतया निवास करते हैं या जहां संपूर्ण वाद हेतुक या उसका कोई भाग उद्भूत हुआ था :

परन्तु जहां ग्राम न्यायालय अपने मुख्यालय से बाहर चल न्यायालय लगाने का विनिश्चय करता है वहां वह उस तारीख और स्थान के बारे में, जहां वह चल न्यायालय लगाने का प्रस्ताव करता है, व्यापक प्रचार करेगा ।

(2) राज्य सरकार, ग्राम न्यायालय को सभी सुविधाएं प्रदान करेगी

जिनके अंतर्गत उसके मुख्यालय से बाहर विचारण या कार्यवाहियां करते समय न्यायाधिकारी द्वारा चल न्यायालय लगाने के लिए वाहनों की व्यवस्था भी है ।

10. ग्राम न्यायालय की मुद्रा – इस अधिनियम के अधीन स्थापित प्रत्येक ग्राम न्यायालय, न्यायालय की मुद्रा का उपयोग ऐसे आकार और विमाओं में करेगा जो उच्च न्यायालय द्वारा राज्य सरकार के अनुमोदन से विहित की जाएं ।

अध्याय 3

ग्राम न्यायालय की अधिकारिता, शक्तियां और प्राधिकार

11. ग्राम न्यायालय की अधिकारिता – दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) या सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, ग्राम न्यायालय सिविल और दांडिक, दोनों अधिकारिता का प्रयोग इस अधिनियम के अधीन उपबंधित रीति में और सीमा तक करेगा ।

12. दांडिक अधिकारिता – (1) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, ग्राम न्यायालय किसी परिवाद पर या पुलिस रिपोर्ट पर किसी अपराध का संज्ञान ले सकेगा और –

(क) पहली अनुसूची के भाग 1 में विनिर्दिष्ट सभी अपराधों का विचारण करेगा ; और

(ख) उस अनुसूची के भाग 2 में सम्मिलित अधिनियमितियों के अधीन विनिर्दिष्ट सभी अपराधों का विचारण करेगा और अनुतोष, यदि कोई हो, प्रदान करेगा ।

(2) उपधारा (1) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ग्राम न्यायालय उन राज्य अधिनियमों के अधीन ऐसे सभी अपराधों का भी विचारण करेगा या ऐसा अनुतोष प्रदान करेगा, जो धारा 14 की उपधारा (3) के अधीन राज्य सरकार द्वारा अधिसूचित किए जाएं ।

13. सिविल अधिकारिता – (1) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के

होते हुए भी और उपधारा (2) के अधीन रहते हुए, ग्राम न्यायालय की निम्नलिखित अधिकारिता होगी, –

(क) दूसरी अनुसूची के भाग 1 में विनिर्दिष्ट वर्गों के विवादों के अधीन आने वाले सिविल प्रकृति के सभी वादों या कार्यवाहियों का विचारण करना ;

(ख) उन सभी वर्गों के दावों और विवादों का विचारण करना, जो धारा 14 की उपधारा (1) के अधीन केंद्रीय सरकार द्वारा और उक्त धारा की उपधारा (3) के अधीन राज्य सरकार द्वारा अधिसूचित किए जाएं ।

(2) ग्राम न्यायालय की धनीय सीमाएं वे होंगी, जो उच्च न्यायालय द्वारा, राज्य सरकार के परामर्श से समय-समय पर अधिसूचना द्वारा, विनिर्दिष्ट की जाएं ।

14. अनुसूचियों का संशोधन करने की शक्ति – (1) जहां केन्द्रीय सरकार का यह समाधान हो जाता है कि ऐसा करना आवश्यक या समीचीन है, वहां वह अधिसूचना द्वारा, यथास्थिति, पहली अनुसूची के भाग 1 या भाग 2 अथवा दूसरी अनुसूची के भाग 2 में किसी मद को जोड़ सकेगी या उससे लोप कर सकेगी और वह तद्नुसार संशोधित की गई समझी जाएगी ।

(2) उपधारा (1) के अधीन जारी की गई प्रत्येक अधिसूचना संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखी जाएगी ।

(3) यदि राज्य सरकार का यह समाधान हो जाता है कि ऐसा करना आवश्यक या समीचीन है तो वह उच्च न्यायालय के परामर्श से अधिसूचना द्वारा, पहली अनुसूची के भाग 3 या दूसरी अनुसूची के भाग 3 में किसी मद को जोड़ सकेगी या उससे किसी ऐसी मद का लोप कर सकेगी, जिसकी बाबत राज्य विधान-मंडल विधियां बनाने के लिए सक्षम है और तदुपरि, यथास्थिति, पहली अनुसूची या दूसरी अनुसूची तद्नुसार संशोधित की गई समझी जाएगी ।

(4) उपधारा (3) के अधीन जारी की गई प्रत्येक अधिसूचना राज्य विधान-मंडल के समक्ष रखी जाएगी ।

15. परिसीमा – (1) परिसीमा अधिनियम, 1963 (1963 का 36) के उपबंध ग्राम न्यायालय द्वारा विचारणीय वादों को लागू होंगे ।

(2) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अध्याय 36 के उपबंध ग्राम न्यायालय द्वारा विचारणीय अपराधों के संबंध में लागू होंगे ।

16. लंबित कार्यवाहियों का अंतरण – (1) यथास्थिति, जिला न्यायालय या सेशन न्यायालय ऐसी तारीख से, जो उच्च न्यायालय द्वारा अधिसूचित की जाए, अपने अधीनस्थ न्यायालयों के समक्ष लंबित सभी सिविल या दांडिक मामलों को, ऐसे मामलों का विचारण या निपटारा करने के लिए सक्षम ग्राम न्यायालय को अंतरित कर सकेगा ।

(2) ग्राम न्यायालय अपने विवेकानुसार उन मामलों का या तो पुनःविचारण कर सकेगा या उन पर उस प्रक्रम से आगे कार्यवाही कर सकेगा, जिस पर वे उसे अंतरित किए गए थे ।

17. अनुसचिवीय अधिकारियों के कर्तव्य – (1) राज्य सरकार, ग्राम न्यायालय को उसके कृत्यों के निर्वहन में सहायता करने के लिए अपेक्षित अधिकारियों और अन्य कर्मचारियों की प्रकृति और प्रवर्गों का अवधारण करेगी और ग्राम न्यायालय को उतने अधिकारी और अन्य कर्मचारी उपलब्ध कराएगी, जितने वह ठीक समझे ।

(2) ग्राम न्यायालय के अधिकारियों और अन्य कर्मचारियों को संदेय वेतन और भत्ते तथा उनकी सेवा की अन्य शर्तें वे होंगी जो राज्य सरकार द्वारा विहित की जाएं ।

(3) ग्राम न्यायालय के अधिकारी और अन्य कर्मचारी ऐसे कर्तव्यों का निर्वहन करेंगे जो, समय-समय पर, न्यायाधिकारी द्वारा उन्हें समनुदेशित किए जाएं ।

अध्याय 4

दांडिक मामलों में प्रक्रिया

18. दांडिक विचारण में अधिनियम का अध्यारोही प्रभाव – इस अधिनियम के उपबंध, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) या किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे, किंतु इस अधिनियम में अभिव्यक्त रूप से जैसा उपबंधित है उसके सिवाय संहिता

के उपबंध, जहां तक वे इस अधिनियम के उपबंधों से असंगत नहीं हैं, ग्राम न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियों को लागू होंगे और संहिता के उक्त उपबंधों के प्रयोजन के लिए ग्राम न्यायालय प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट का न्यायालय समझा जाएगा ।

19. ग्राम न्यायालय द्वारा संक्षिप्त विचारण प्रक्रिया का अपनाया जाना – (1) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 260 की उपधारा (1) या धारा 262 की उपधारा (2) में किसी बात के होते हुए भी, ग्राम न्यायालय अपराधों का विचारण उक्त संहिता के अध्याय 21 में विनिर्दिष्ट प्रक्रिया के अनुसार संक्षिप्त रूप में करेगा और उक्त संहिता की धारा 262 की उपधारा (1) तथा धारा 263 से धारा 265 के उपबंध, जहां तक हो सके, ऐसे विचारण को लागू होंगे ।

(2) जब संक्षिप्त विचारण के दौरान न्यायाधिकारी को यह प्रतीत हो कि मामले की प्रकृति ऐसी है कि उसका संक्षिप्त विचारण करना अवांछनीय है तो न्यायाधिकारी ऐसे किसी साक्षी को पुनः बुलाएगा, जिसकी परीक्षा हो चुकी हो और दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अधीन उपबंधित रीति में मामले की पुनः सुनवाई के लिए अग्रसर होगा ।

20. ग्राम न्यायालय के समक्ष सौदा अभिवाक् – अपराध में अभियुक्त व्यक्ति उस ग्राम न्यायालय में, जिसमें ऐसे अपराध का विचारण लंबित है, सौदा अभिवाक् के लिए आवेदन फाइल कर सकेगा और ग्राम न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अध्याय 21क के उपबंधों के अनुसार मामले का निपटारा करेगा ।

21. ग्राम न्यायालय में मामलों का संचालन और पक्षकारों को विधिक सहायता – (1) सरकार की ओर से ग्राम न्यायालय में दांडिक मामलों का संचालन करने के प्रयोजन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 25 के उपबंध लागू होंगे ।

(2) उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, ग्राम न्यायालय के समक्ष दांडिक कार्यवाही में परिवादी अभियोजन के मामले को प्रस्तुत करने के लिए ग्राम न्यायालय की इजाजत से अपने खर्चे पर अपनी पसंद के किसी अधिवक्ता को नियुक्त कर सकेगा ।

(3) विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 (1987 का 39) की धारा 6 के अधीन गठित राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण अधिवक्ताओं का एक पैनल तैयार करेगा और उनमें से कम-से-कम दो को प्रत्येक ग्राम न्यायालय के साथ लगाए जाने के लिए समनुदेशित करेगा जिससे कि ग्राम न्यायालय द्वारा उनकी सेवाएं अधिवक्ता की नियुक्ति करने में असमर्थ रहने वाले अभियुक्त को उपलब्ध कराई जा सकें ।

22. निर्णय का सुनाया जाना – (1) प्रत्येक विचारण में निर्णय, न्यायाधिकारी द्वारा विचारण के समाप्त होने के ठीक पश्चात् या पन्द्रह दिन से अनधिक ऐसे किसी पश्चात्वर्ती समय पर, जिसकी सूचना पक्षकारों को दी जाएगी, खुले न्यायालय में सुनाया जाएगा ।

(2) ग्राम न्यायालय अपने निर्णय की एक प्रति दोनों पक्षकारों को तत्काल नि:शुल्क प्रदान करेगा ।

अध्याय 5

सिविल मामलों में प्रक्रिया

23. सिविल कार्यवाहियों में अधिनियम का अध्यारोही प्रभाव – इस अधिनियम के उपबंध, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) या किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे, किंतु इस अधिनियम में अभिव्यक्त रूप से जैसा उपबंधित है उसके सिवाय, संहिता के उपबंध, जहां तक वे इस अधिनियम के उपबंधों से असंगत नहीं हैं, ग्राम न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियों को लागू और संहिता के उक्त उपबंधों के प्रयोजन के लिए ग्राम न्यायालय को सिविल न्यायालय समझा जाएगा ।

24. सिविल विवादों में विशेष प्रक्रिया – (1) तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, इस अधिनियम के अधीन प्रत्येक वाद, दावा या विवाद ग्राम न्यायालय में ऐसे प्ररूप में, ऐसी रीति में और एक सौ रुपए से अनधिक की ऐसी फीस के साथ, जो उच्च न्यायालय द्वारा, समय-समय पर, राज्य सरकार के परामर्श से विहित की जाए, आवेदन करके संस्थित किया जाएगा ।

(2) जहां कोई वाद, दावा या विवाद सम्यक् रूप से संस्थित किया

गया है, वहां ग्राम न्यायालय द्वारा उपधारा (1) के अधीन किए गए आवेदन की प्रति के साथ विरोधी पक्षकार को ऐसी तारीख तक, जो समनों में विनिर्दिष्ट की जाए, हाजिर होने और दावे का उत्तर देने के लिए समन जारी किए जाएंगे और उनकी तामील ऐसी रीति में की जाएगी जो उच्च न्यायालय द्वारा विहित की जाए ।

(3) विरोधी पक्षकार द्वारा अपना लिखित कथन फाइल कर दिए जाने के पश्चात्, ग्राम न्यायालय सुनवाई के लिए तारीख नियत करेगा और सभी पक्षकारों को व्यक्तिगत रूप से या अपने अधिवक्ताओं के माध्यम से हाजिर होने की सूचना देगा ।

(4) सुनवाई के लिए नियत तारीख को ग्राम न्यायालय दोनों पक्षकारों की उनके अपने-अपने प्रतिविरोधों के संबंध में सुनवाई करेगा और जहां विवाद में कोई साक्ष्य अभिलिखित करना अपेक्षित नहीं है वहां निर्णय सुनाएगा और ऐसे मामले में जहां साक्ष्य अभिलिखित करना अपेक्षित है वहां ग्राम न्यायालय आगे कार्यवाही करेगा ।

(5) ग्राम न्यायालय को निम्नलिखित की शक्ति भी होगी, –

(क) व्यतिक्रम के लिए किसी मामले को खारिज करना या एकपक्षीय कार्यवाही करना ; और

(ख) व्यतिक्रम के लिए खारिजी के ऐसे किसी आदेश या मामले की एकपक्षीय सुनवाई के लिए उसके द्वारा पारित किसी आदेश को अपास्त करना ।

(6) किसी ऐसे आनुषंगिक विषय के संबंध में, जो कार्यवाहियों के दौरान उत्पन्न हो, ग्राम न्यायालय ऐसी प्रक्रिया अपनाएगा, जो वह न्याय के हित में न्यायसंगत और युक्तियुक्त समझे ।

(7) कार्यवाहियां, जहां तक व्यवहार्य हों, न्याय के हितों से संगत होंगी और सुनवाई दिन-प्रतिदिन के आधार पर उसके निष्कर्ष तक जारी रहेगी, जब तक कि ग्राम न्यायालय ऐसे कारणों से, जिन्हें लेखबद्ध किया जाएगा, सुनवाई को अगले दिन से परे स्थगित करना आवश्यक नहीं पाता ।

(8) ग्राम न्यायालय उपधारा (1) के अधीन किए गए आवेदन का

निपटारा उसके संस्थित किए जाने की तारीख से छह मास की अवधि के भीतर करेगा ।

(9) प्रत्येक वाद, दावे या विवाद में निर्णय ग्राम न्यायालय द्वारा सुनवाई के समाप्त होने के ठीक पश्चात् या पन्द्रह दिन से अनधिक ऐसे किसी पश्चात्वर्ती समय पर, जिसकी सूचना पक्षकारों को दी जाएगी, खुले न्यायालय में सुनाया जाएगा ।

(10) निर्णय में मामले का संक्षिप्त विवरण, अवधारण के लिए प्रश्न, उस पर विनिश्चय और ऐसे विनिश्चय के कारण अंतर्विष्ट होंगे ।

(11) निर्णय की एक प्रति दोनों पक्षकारों को निर्णय सुनाए जाने की तारीख से तीन दिन के भीतर नि:शुल्क परिदान की जाएगी ।

25. ग्राम न्यायालय की डिक्रियों और आदेशों का निष्पादन – (1) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) में किसी बात के होते हुए भी, ग्राम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय एक डिक्री समझा जाएगा और उसका निष्पादन ग्राम न्यायालय द्वारा सिविल न्यायालय की डिक्री के रूप में किया जाएगा और इस प्रयोजन के लिए ग्राम न्यायालय को सिविल न्यायालय की सभी शक्तियां होंगी ।

(2) ग्राम न्यायालय, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) में यथा उपबंधित किसी डिक्री के निष्पादन के संबंध में प्रक्रिया से आबद्ध नहीं होगा और वह नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों से मार्गदर्शित होगा ।

(3) डिक्री का निष्पादन या तो उस ग्राम न्यायालय द्वारा, जिसने उसे पारित किया है या ऐसे किसी अन्य ग्राम न्यायालय द्वारा, जिसे निष्पादन के लिए वह भेजी गई है, किया जा सकेगा ।

26. सिविल विवादों के सुलह और समझौते के लिए प्रयास करने का ग्राम न्यायालय का कर्तव्य – (1) प्रत्येक वाद या कार्यवाही में ग्राम न्यायालय द्वारा प्रथम अवसर पर यह प्रयास किया जाएगा कि जहां मामले की प्रकृति और परिस्थितियों से संगत ऐसा करना संभव हो, वहां वह वाद, दावे या विवाद की विषयवस्तु के संबंध में किसी समझौते पर पहुंचने में पक्षकारों की सहायता करे, उन्हें मनाए और उनमें सुलह कराए और इस प्रयोजन के लिए ग्राम न्यायालय ऐसी प्रक्रिया अपनाएगा, जो उच्च न्यायालय द्वारा विहित की जाए ।

(2) जहां किसी वाद या कार्यवाही में किसी प्रक्रम पर ग्राम न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि पक्षकारों के बीच समझौते की युक्तियुक्त संभावना है वहां ग्राम न्यायालय कार्यवाहियों को ऐसी अवधि के लिए स्थगित कर सकेगा जिसे वह ऐसा समझौता करने का प्रयास करने में उन्हें समर्थ बनाने के लिए ठीक समझे ।

(3) जहां उपधारा (2) के अधीन किसी कार्यवाही को स्थगित किया जाता है वहां ग्राम न्यायालय, अपने विवेकानुसार, पक्षकारों के बीच समझौता कराने के लिए मामले को एक या अधिक सुलहकारों को निर्देशित कर सकेगा ।

(4) उपधारा (2) द्वारा प्रदत्त शक्ति कार्यवाहियों को स्थगित करने की ग्राम न्यायालय की किसी अन्य शक्ति के अतिरिक्त होगी, न कि उसके अल्पीकरण में ।

27. सुलहकारों की नियुक्ति – (1) धारा 26 के प्रयोजनों के लिए, जिला न्यायालय, जिला मजिस्ट्रेट के परामर्श से, सुलहकारों के रूप में नियुक्ति के लिए ग्राम स्तर पर सत्यनिष्ठा रखने वाले ऐसे सामाजिक कार्यकर्ताओं के नामों का एक पैनल तैयार करेगा, जिसके पास ऐसी अर्हताएं और अनुभव हों, जो उच्च न्यायालय द्वारा विहित किए जाएं ।

(2) सुलहकारों को संदेय बैठक फीस और अन्य भत्ते तथा उनके नियोजन के अन्य निबंधन और शर्तें वे होंगी, जो राज्य सरकार द्वारा विहित की जाएं ।

28. सिविल विवादों का अंतरण – अधिकारिता रखने वाला जिला न्यायालय, किसी पक्षकार द्वारा किए गए आवेदन पर या जब किसी एक ग्राम न्यायालय के पास काफी मामले लंबित हों या जब कभी वह न्याय के हित में ऐसा आवश्यक समझे, किसी ग्राम न्यायालय के समक्ष लंबित किसी मामले को अपनी अधिकारिता के भीतर किसी अन्य ग्राम न्यायालय को अंतरित कर सकेगा ।

अध्याय 6

साधारणतः प्रक्रिया

29. कार्यवाहियों का राज्य की राजभाषा में होना – ग्राम न्यायालय

के समक्ष कार्यवाहियां और उसका निर्णय, जहां तक व्यवहार्य हो, अंग्रेजी भाषा से भिन्न राज्य की राजभाषाओं में से किसी एक में होंगे ।

30. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 का लागू होना – ग्राम न्यायालय साक्ष्य के रूप में ऐसी किसी रिपोर्ट, कथन, दस्तावेज, सूचना या विषय को ग्रहण कर सकेगा जो, उसकी राय में, किसी विवाद को प्रभावी रूप से निपटाने में उसकी सहायता करता हो, चाहे वह भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) के अधीन अन्यथा सुसंगत या ग्राह्य हो या नहीं ।

31. मौखिक साक्ष्य का लेखबद्ध किया जाना – ग्राम न्यायालय के समक्ष वादों या कार्यवाहियों में साक्षियों के साक्ष्य को विस्तार से लेखबद्ध करना आवश्यक नहीं होगा, किंतु न्यायाधिकारी, जैसे ही प्रत्येक साक्षी की परीक्षा अग्रसर होती है, साक्षी द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य के सार का ज्ञापन लेखबद्ध करेगा या लेखबद्ध कराएगा और ऐसे ज्ञापन पर साक्षी और न्यायाधिकारी द्वारा हस्ताक्षर किए जाएंगे तथा वह अभिलेख का भाग बनेगा ।

32. औपचारिक प्रकृति के साक्ष्य का शपथ-पत्र पर होना – (1) किसी व्यक्ति का साक्ष्य, जहां ऐसा साक्ष्य औपचारिक प्रकृति का है, शपथ-पत्र द्वारा दिया जा सकेगा और सभी न्यायसंगत अपवादों के अधीन रहते हुए, ग्राम न्यायालय के समक्ष किसी वाद या कार्यवाही में साक्ष्य में पढ़ा जा सकेगा ।

(2) ग्राम न्यायालय, यदि वह ठीक समझे, वाद या कार्यवाही में किसी पक्षकार के आवेदन पर ऐसे किसी व्यक्ति को समन कर सकेगा और उसके शपथ-पत्र में अंतर्विष्ट तथ्यों के बारे में उसकी परीक्षा करेगा ।

अध्याय 7

अपीलें

33. दांडिक मामलों में अपील – (1) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) या किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, ग्राम न्यायालय के किसी निर्णय, दंडादेश या आदेश के विरुद्ध कोई अपील इसमें यथा उपबंधित के सिवाय नहीं होगी ।

(2) कोई अपील उस दशा में नहीं होगी जहां, –

(क) अभियुक्त व्यक्ति ने दोषी होने का अभिवाक् किया है और उसे उस अभिवाक् पर दोषसिद्ध किया गया है ;

(ख) ग्राम न्यायालय ने केवल एक हजार रुपए से अनधिक के जुर्माने का दंडादेश पारित किया है ।

(3) उपधारा (2) के अधीन रहते हुए, ग्राम न्यायालय के किसी अन्य निर्णय, दंडादेश या आदेश के विरुद्ध अपील सेशन न्यायालय को होगी ।

(4) इस धारा के अधीन प्रत्येक अपील ग्राम न्यायालय के निर्णय, दंडादेश या आदेश की तारीख से तीस दिन की अवधि के भीतर होगी :

परंतु यदि सेशन न्यायालय का समाधान हो जाता है कि अपीलार्थी के पास तीस दिन की उक्त अवधि के भीतर अपील न करने का पर्याप्त कारण था तो वह उक्त अवधि की समाप्ति के पश्चात् अपील ग्रहण कर सकेगा ।

(5) उपधारा (3) के अधीन की गई अपील की सेशन न्यायालय द्वारा सुनवाई और ऐसी अपील का निपटारा उसके फाइल किए जाने की तारीख से छह मास के भीतर किया जाएगा ।

(6) सेशन न्यायालय, अपील के निपटारे के लंबित रहने के दौरान, उस दंडादेश या आदेश के निलंबन का निदेश दे सकेगा, जिसके विरुद्ध अपील की गई है ।

(7) उपधारा (5) के अधीन सेशन न्यायालय का विनिश्चय अंतिम होगा और सेशन न्यायालय के विनिश्चय के विरुद्ध कोई अपील या पुनरीक्षण नहीं होगा :

परंतु इस उपधारा की कोई बात किसी व्यक्ति को संविधान के अनुच्छेद 32 और अनुच्छेद 226 के अधीन उपलब्ध न्यायिक उपचारों का उपभोग करने से नहीं रोकेगी ।

34. सिविल मामलों में अपील – (1) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) या किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी और

उपधारा (2) के अधीन रहते हुए, ग्राम न्यायालय के प्रत्येक निर्णय या ऐसे आदेश से, जो अंतर्वर्ती आदेश नहीं है, अपील जिला न्यायालय को होगी ।

(2) ग्राम न्यायालय द्वारा पारित किसी निर्णय या आदेश के विरुद्ध कोई अपील, –

(क) पक्षकारों की सहमति से नहीं होगी ;

(ख) जहां किसी वाद, दावे या विवाद की विषयवस्तु की रकम या मूल्य एक हजार रुपए से अधिक नहीं है, वहां नहीं होगी ;

(ग) जहां ऐसे वाद, दावे या विवाद की विषयवस्तु की रकम या मूल्य पांच हजार रुपए से अधिक नहीं है, वहां विधि के किसी प्रश्न के सिवाय नहीं होगी ।

(3) इस धारा के अधीन प्रत्येक अपील ग्राम न्यायालय के निर्णय या आदेश की तारीख से तीस दिन की अवधि के भीतर की जाएगी :

परंतु यदि जिला न्यायालय का समाधान हो जाता है कि अपीलार्थी के पास तीस दिन की उक्त अवधि के भीतर अपील न करने का पर्याप्त कारण था तो वह उक्त अवधि की समाप्ति के पश्चात् अपील ग्रहण कर सकेगा ।

(4) उपधारा (1) के अधीन की गई अपील की जिला न्यायालय द्वारा सुनवाई और ऐसी अपील का निपटारा उसके फाइल किए जाने की तारीख से छह मास के भीतर किया जाएगा ।

(5) जिला न्यायालय, अपील के निपटारे के लंबित रहने के दौरान उस निर्णय या आदेश के निष्पादन पर रोक लगा सकेगा, जिसके विरुद्ध अपील की गई है ।

(6) उपधारा (4) के अधीन जिला न्यायालय का विनिश्चय अंतिम होगा और जिला न्यायालय के विनिश्चय के विरुद्ध कोई अपील या पुनरीक्षण नहीं होगा :

परंतु इस उपधारा की कोई बात किसी व्यक्ति को संविधान के अनुच्छेद 32 और अनुच्छेद 226 के अधीन उपलब्ध न्यायिक उपचारों का उपभोग करने से नहीं रोकेगी ।

अध्याय 8

प्रकीर्ण

35. ग्राम न्यायालयों को पुलिस की सहायता – (1) ग्राम न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर कार्यरत प्रत्येक पुलिस अधिकारी ग्राम न्यायालय की उसके विधिपूर्ण प्राधिकार के प्रयोग में सहायता करने के लिए आबद्ध होगा ।

(2) जब कभी ग्राम न्यायालय, अपने कृत्यों के निर्वहन में, किसी राजस्व अधिकारी या पुलिस अधिकारी या सरकारी सेवक को ग्राम न्यायालय की सहायता करने का निदेश देगा तब वह ऐसी सहायता करने के लिए आबद्ध होगा ।

36. न्यायाधिकारियों और कर्मचारियों आदि का लोक सेवक होना – न्यायाधिकारियों और ग्राम न्यायालयों के अधिकारियों तथा अन्य कर्मचारियों के बारे में, जब वे इस अधिनियम के किसी उपबंध के अनुसरण में कार्य कर रहे हैं या उनका कार्य करना तात्पर्यित है, यह समझा जाएगा कि वे भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 21 के अर्थ के भीतर लोक सेवक हैं ।

37. ग्राम न्यायालयों का निरीक्षण – उच्च न्यायालय, न्यायाधिकारी की पंक्ति से वरिष्ठ किसी न्यायिक अधिकारी को प्रत्येक छह मास में एक बार या ऐसी अन्य अवधि में, जो उच्च न्यायालय विहित करे, अपनी अधिकारिता के भीतर ग्राम न्यायालयों का निरीक्षण करने और ऐसे अनुदेश जारी करने के लिए, जो वह आवश्यक समझे, तथा उच्च न्यायालय को रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए प्राधिकृत कर सकेगा ।

38. कठिनाइयों को दूर करने की शक्ति – (1) यदि इस अधिनियम के उपबंधों को प्रभावी करने में कोई कठिनाई उत्पन्न होती है तो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में प्रकाशित आदेश द्वारा, ऐसे उपबंध कर सकेगी जो इस अधिनियम के उपबंधों से असंगत न हों और जो उसे कठिनाई को दूर करने के लिए आवश्यक या समीचीन प्रतीत हों :

परंतु इस धारा के अधीन कोई भी आदेश इस अधिनियम के प्रारंभ की तारीख से तीन वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात् नहीं किया जाएगा ।

(2) इस धारा के अधीन किया गया प्रत्येक आदेश, उसके किए जाने के पश्चात्, यथाशीघ्र, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जाएगा ।

39. उच्च न्यायालय की नियम बनाने की शक्ति – (1) उच्च न्यायालय, इस अधिनियम के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए नियम अधिसूचना द्वारा, बना सकेगा ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियमों में निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात् :–

(क) धारा 10 के अधीन ग्राम न्यायालय की मुद्रा का आकार और विमाएं ;

(ख) धारा 24 की उपधारा (1) के अधीन वाद, दावा या कार्यवाही संस्थित किए जाने के लिए प्ररूप, रीति और फीस ;

(ग) धारा 24 की उपधारा (2) के अधीन विरोधी पक्षकार पर तामील की रीति ;

(घ) धारा 26 की उपधारा (1) के अधीन सुलह के लिए प्रक्रिया ;

(ङ) धारा 27 की उपधारा (1) के अधीन सुलहकारों की अर्हताएं और अनुभव ;

(च) धारा 37 के अधीन ग्राम न्यायालय के निरीक्षण के लिए अवधि ।

(3) उच्च न्यायालय द्वारा जारी की गई प्रत्येक अधिसूचना राजपत्र में प्रकाशित की जाएगी ।

40. राज्य सरकार की नियम बनाने की शक्ति – (1) राज्य सरकार इस अधिनियम के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए नियम अधिसूचना द्वारा बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियमों में निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात् :–

(क) धारा 17 की उपधारा (2) के अधीन ग्राम न्यायालयों के

अधिकारियों और अन्य कर्मचारियों को संदेय वेतन और भत्ते तथा उनकी सेवा के अन्य निबंधन और शर्तें ;

(ख) धारा 27 की उपधारा (2) के अधीन सुलहकारों को संदेय बैठक फीस और अन्य भत्ते तथा उनके नियोजन के अन्य निबंधन और शर्तें ।

(3) इस अधिनियम के अधीन राज्य सरकार द्वारा बनाया गया प्रत्येक नियम, बनाए जाने के पश्चात्, यथाशीघ्र, राज्य विधान-मंडल के समक्ष रखा जाएगा ।

पहली अनुसूची

(धारा 12 और धारा 14 देखिए)

भाग 1

भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) के अधीन अपराध, आदि

(i) ऐसे अपराध जो मृत्युदंड, आजीवन कारावास या दो वर्ष से अधिक की अवधि के कारावास से दंडनीय नहीं है ;

(ii) भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 379, धारा 380 या धारा 381 के अधीन चोरी, जहां चुराई गई संपत्ति का मूल्य बीस हजार रुपए से अधिक नहीं है ;

(iii) भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 411 के अधीन, चुराई गई संपत्ति को प्राप्त करना या प्रतिधारित करना, जहां ऐसी संपत्ति का मूल्य बीस हजार रुपए से अधिक नहीं है ;

(iv) भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 414 के अधीन, चुराई गई संपत्ति को छुपाने या उसके व्ययन में सहायता करना, जहां ऐसी संपत्ति का मूल्य बीस हजार रुपए से अधिक नहीं है ;

(v) भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 454 और धारा 456 के अधीन अपराध ;

(vi) भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 504 के अधीन शांति भंग कराने को प्रकोपित करने के आशय से अपमान और धारा

506 के अधीन ऐसी अवधि के, जो दो वर्ष तक की हो सकेगी, कारावास से या जुर्माने से या दोनों से दंडनीय आपराधिक अभित्रास ;

(vii) पूर्वोक्त अपराधों में से किसी का दुष्प्रेरण ;

(viii) पूर्वोक्त अपराधों में से कोई अपराध करने का प्रयत्न, जब ऐसा प्रयत्न अपराध हो ।

भाग 2

अन्य केन्द्रीय अधिनियमों के अधीन अपराध और अनुतोष

(i) ऐसे किसी कार्य द्वारा गठित कोई अपराध, जिसकी बाबत पशु अतिचार अधिनियम, 1871 (1871 का 1) की धारा 20 के अधीन परिवाद किया जा सकेगा ;

(ii) मजदूरी संदाय अधिनियम, 1936 (1936 का 4) ;

(iii) न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 (1948 का 11) ;

(iv) सिविल अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 (1955 का 22) ;

(v) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अध्याय 9 के अधीन पत्नियों, बालकों और माता-पिता के भरण-पोषण के लिए आदेश ;

(vi) बंधित श्रम पद्धति (उत्सादन) अधिनियम, 1976 (1976 का 19) ;

(vii) समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 (1976 का 25) ;

(viii) घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 (2005 का 43) ।

भाग 3

राज्य अधिनियमों के अधीन अपराध और अनुतोष

(राज्य सरकार द्वारा अधिसूचित किए जाने वाले)

दूसरी अनुसूची

(धारा 13 और धारा 14 देखिए)

भाग 1

ग्राम न्यायालयों की अधिकारिता के भीतर सिविल प्रकृति के वाद

(i) **सिविल विवाद** :

(क) संपत्ति क्रय करने का अधिकार ;

(ख) सामान्य चरागाहों का उपयोग ;

(ग) सिंचाई सरणियों से जल लेने का विनियमन और समय ;

(ii) **संपत्ति विवाद** :

(क) ग्राम और फार्म हाउस (कब्जा) ;

(ख) जलसरणियां ;

(ग) कुएं या नलकूप से जल लेने का अधिकार ;

(iii) **अन्य विवाद :**

(क) मजदूरी संदाय अधिनियम, 1936 (1936 का 4) के अधीन दावे ;

(ख) न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 (1948 का 11) के अधीन दावे ;

(ग) व्यापार संव्यवहार या साहूकारी से उद्भूत धन संबंधी वाद ;

(घ) भूमि पर खेती में भागीदारी से उद्भूत विवाद ;

(ङ) ग्राम पंचायतों के निवासियों द्वारा वन उपज के उपयोग के संबंध में विवाद ।

भाग 2

केन्द्रीय सरकार द्वारा धारा 14 की उपधारा (1) के अधीन अधिसूचित केन्द्रीय अधिनियमों के अधीन दावे और विवाद

(केंद्रीय सरकार द्वारा अधिसूचित किए जाने वाले)

भाग 3

राज्य सरकार द्वारा धारा 14 की उपधारा (3) के अधीन अधिसूचित राज्य अधिनियमों के अधीन दावे और विवाद

(राज्य सरकार द्वारा अधिसूचित किए जाने वाले)

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय (द्वितीय संस्करण) – डा. एस. सी. खरे – 1996	273	115	29.00
2.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय) – विधि साहित्य प्रकाशन – 2000	209	225	57.00
3.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	145.00
4.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–
5.	भारत का सांविधानिक इतिहास - (103वां संशोधन तक) - श्री चन्द्रशेखर मिश्र	340	325	–
6.	भारतीय संविधान के प्रमुख तत्व - डा. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी	906	750	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. विधि शब्दावली	सातवां संस्करण, 2015	कीमत रु. 375/-
2. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2019	कीमत रु. 1,900/-
3. भारत का संविधान	2021	कीमत रु. 300/-

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

Website : www.lawmin.nic.in
Email : am.vsp-molj@gov.in

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 17552/69

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं - **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका** और **उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः सिविल और दांडिक के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को आन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in